अध्यापिका

ऐन सलिवाँ मेसी

उसकी मानस-पुत्री

हैलेन कैलर

द्वारा अर्पित एक श्रद्धांजलि

जीवन का सच्चा आनन्द यह है कि किसी ऐसे उद्देश्य में अपना उपयोग किया जाय जिसे तुम स्वयं एक महान् उद्देश्य मानते हो।

जी० बी० शॉ

परिचय-लेखिका नैला ब्रैडी हैनी

प्रकाशक

इंडियन प्रेस (पब्लिकेशंस), प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद

१९५७

परिचय

लेखिका नैला ब्रैडी हैनी

हैलेन कैलर का जन्म टस्काम्बिया, ऐलाबामा में २७ जून, १८८० में एक साधारण शिशु के रूप में हुआ था। उन्नीस महीने बाद उस पर एक रोग का आक्रमण हुआ (जिसका अभी तक निदान नहीं हो सका है) जिसने उसे बहरी और अन्धी बना दिया। बहरी होने के कारण वह गूँगी भी हो गई। अन्यथा उसका शरीर अविक्षत था। उसके मस्तिष्क की अवस्था के विषय में सन्देह था। कुछ लोग कहने लगे कि वह बुद्धि-शून्य है। उसके माता-पिता का तब ऐसा विश्वास न था, परन्तु वे इसे असिद्ध भी न कर सकते थे। यदि उसमें बुद्धि थी तो वे इस बुद्धि तक पहुँच न पाते थे, और इस प्रकार वियुक्त हैलेन, उसके अपने ही शब्दों में "एक छाया मात्र बन गई जो एक ऐसे संसार में रह रही थी जो कोई संसार ही न था।"

वह इस शून्यप्राय संसार में पाँच वर्ष तक रही। इससे निकलने की उसे कोई आशा न थी। परन्तु तभी उसकी माँ को एक दिन यों ही "अमेरिकन नोट्स" पढ़ते हुए ज्ञात हुआ कि बोस्टन में अन्धों की पर्किन्स इन्स्टीट्यूशन में डा० सैमुएल ग्रिडले हौवे ने हैलेन की तरह की एक अन्धी बहरी लड़की लौरा ब्रिजमेन को पढ़ना-लिखना, और उँगलियों की एक वर्णमाला के माध्यम से देखने-सुननेवाले लोगों के साथ विचारों का आदान-प्रदान करना सिखाया है। परन्तु यह बात पचास साल पहले की थी और बोस्टन टस्काम्बिया से बहुत दूर था। कैलर दम्पति ने इस सम्बन्ध में कुछ न किया, परन्तु जब हैलेन छः वर्ष की हुई तो वे उसे बाल्टीमोर में एक प्रसिद्ध नेत्र-चिकित्सक के पास ले गये। उसने दूसरे डाक्टरों की कही इस बात को पुष्ट कर दिया कि हैलेन सदैव बहरी और अन्धी रहेगी, परन्तु उसने उन्हें सलाह दी कि वे वाशिंगटन जाकर डा० ऐलैग्जैण्डर ग्राहम बेल से उसकी शिक्षा के बारे में परामर्श लें। डा० बेल के सुझाव पर कैप्टेन कैलर ने पर्किन्स इन्स्टीट्यूशन को लिखा। डा० होव का देहान्त हो चुका था। परन्तु उसके बाद उसके पद पर आसीन श्री माइकेल ऐनेग्नोस ने यथासंभव इन्स्टीट्यूट की एक हाल की ग्रेजुएट को यह आजमाने के लिए भेज दिया कि वह उस बच्चे के लिए क्या कर सकती है। यह थी मिस ऐन सलिवाँ, जो उस समय इक्कीस वर्ष की थी।

किसी को भी अधिक आशा न थी। डा० होव ने जब लौरा ब्रिजमैन को लेकर कार्य प्रारम्भ किया था तब से अब तक के पचास वर्षों में अनेक कुशल अध्यापक अन्य बहरे-अन्धे बच्चों के लिए वही सब करने का प्रयत्न कर चुके थे जो डा० होव ने लौरा के लिए किया था। इनमें से कोई भी सफल न हुआ था और ऐन सलिवाँ को, जो इनमें से किसी की भी अपेक्षा बहुत कम योग्य थी, आशा नहीं थी कि वह इनसे अधिक अच्छा परिणाम प्राप्त कर सकेगी। कैप्टेन कैलर ने उसके लिए एक काम जुटा दिया था। उसकी स्थिति ऐसी थी कि वह इसे स्वीकार करने के अतिरिक्त और कुछ न कर सकती थी।

आयरिश देशान्तरवासियों की, जिनको उस समय उत्तर-पूर्व में सबसे अधिक घृणा का पात्र समझा जाता था, एक कन्या ऐन सलिवाँ का जन्म ४ अप्रैल, १८६६ में फ़ीडिंग हिल्स, मैसाच्युसेट्स में घोर निर्धनता के बीच हुआ था और जहाँ तक उसे याद पड़ता था, उसे हमेशा ही आँखो की तकलीफ रही थी। आँखें अब भी उसे परेशान करती थी। जब वह आठ साल की थी, उसकी माँ दो और बच्चे छोड़कर मर गई थी। उसके पिता ने दो वर्ष बाद इन तीनों को त्याग दिया और ऐन कभी न जान सकी कि आगे उसका क्या हुआ। उसकी छोटी बहन मेरी को सम्बन्धियो के साथ रख दिया गया और ऐन तथा उसके सात वर्ष की उमर के भाई जिम्मी को ट्यूक्सबरी में राजकीय रुग्णशाला के अनाथालय में भेज दिया गया। ऐन को इसलिए भेजा गया कि उसका पालन करना कठिन काम था और वह ऐसी अन्धी थी कि किसी काम की न रह गई थी और जिम्मी को इसलिए कि वह एक क्षय-रोग ग्रस्त नितम्ब के कारण बुरी तरह लँगड़ा हो गया था।

इन्होंने अनाथालय में फरवरी १८७६ में प्रवेश किया और मई में जिम्मी चल बसा। ऐन चार साल तक वहाँ रही। बाहर के किसी भी व्यक्ति की उसमें कोई रुचि न थी और अपने साथी कँगलों के सिवाय उसका और कोई मित्र न था। इन्हीं में से एक ने उसे बताया कि अन्धों के लिए विशेष स्कूल हैं और जैसे-जैसे समय बीतता गया, ट्यूक्सबरी में वह समय का ज्ञान खो बैठी थी—शिक्षा प्राप्त करने की उसकी इच्छा बढ़ती गई। पतन और रोगों के इस गर्त से, जिसमे वह जा पड़ी थी, बच निकलना असम्भव प्रतीत होता था, जब कि अनाथालय इतना बदनाम हो गया कि राजकीय दान-समिति ने जाँच की आज्ञा दे दी, जाँच करनेवालो ने उसे नही खोज निकाला। अनाथालय में रहनेवाले जाँच-समिति के चेयरमैन का नाम जानते थे और जब समिति के सदस्य वहाँ पहुँचे तो वह, उनमें से एक दूसरे में भेद करने में

असमर्थ, उनकी तरफ झपट पड़ी और पुकार उठी, "मि० सैन्बोर्न, मि० सैन्बोर्न, में स्कूल जाना चाहती हूँ।"

अक्टूबर १८८० में वह पर्किन्स इन्स्टीट्यूशन में पहुँची। वहाँ चौदह वर्ष की उमर में उसने अपनी उँगलियों से पढ़ना सीखने के द्वारा शिक्षा प्रारम्भ की। इस स्कूल में छुट्टियों में विद्यार्थियो की देखभाल करने की सुविधाएँ न थीं। जब गर्मियाँ आईं तो उसे बोस्टन के एक किराये पर कमरे चढ़ानेवाले मकान में काम पर लगा दिया गया। इस मकान मे रहनेवाले एक व्यक्ति के द्वारा वह मैसाच्युसेट्स की नेत्र एवं कर्ण-रोगशाला में पहुँची और अगस्त में डा० ब्रैडफौर्ड ने उसकी बाईं आँख की शल्यक्रिया (आपरेशन) की। अगले अगस्त में उसने उसकी दाईं आँख की चिकित्सा की और शल्यक्रिया के सम्पन्न हो जाने पर ऐन को इतना दिखाई पड़ने लगा कि वह एक सीमित समय तक साधारण तौर पर पढ़ सकती थी, परन्तु इतनी अच्छी तरह से नही कि उसको किसी आँखवालों के स्कूल मे भेजना ठीक समझा जाता। पर्किन्स में वह छः वर्ष रही, सन् १८८६ में वह यहाँ की स्नातिका हो गई। विदाई के समय अपनी कक्षा की ओर से उसी ने भाषण दिया था। स्कूल उसके लिए जो कुछ कर सकता था, कर चुका था, बाकी उसके अपने हाथ मे था।

वह अपनी दुर्बलताओं—स्वल्पशिक्षा, सुसंस्कृत जीवन से परिचयाभाव, अनिश्चित अपितु अविश्वसनीय दृष्टि—से अवगत थी। फिर भी उसे यह आशा न थी कि उसे जीवन भर एक अन्धे-बहरे बच्चे की देख-रेख ही करते रहना पड़ेगा। कार्यों के बारे में उसके पास जो प्रस्ताव आये थे उनमें कैप्टेन कैलर का ही सबसे अच्छा था। इस कार्य को स्वीकार कर लेने के बाद उसने कुछ महीने लौरा ब्रिजमैन के सम्बन्ध में डा० होव के विवरण को पढ़ने में बिताये, आँखों के कष्ट के कारण यह काम उसके लिए दुखदाई था। वह उँगलियों की भाषा से पहले से ही परिचित थी। अपने स्कूल के साथियों की तरह उसने भी लौरा से बातचीत करने के लिए यह भाषा सीख ली थी। लौरा अभी भी पर्किन्स इन्स्टीट्यूट में रह रही थी, क्योंकि वह अपने आप को अन्य किसी प्रकार के जीवन के अनुरूप न बना पाई थी। फिर भी उसके लिए वही आदर्श थी। उसके अतिरिक्त और कोई बहरा-अन्धा उस उच्च स्थान के समीप न पहुँच पाया था जिस पर वह खड़ी थी।

दूसरी बार शल्यक्रिया (आपरेशन) होने से और घर की याद में रोते रहने से ऐन सलिवाँ की आँखें लाल हो गई थीं। वह ३ मार्च १८८७ को

टस्काम्बिया पहुँची। हैलेन इस तिथि का हमेशा अपनी आत्मा का जन्मदिन कहकर अभिनन्दन करती रही है। उसने तत्काल हैलेन के हाथ में शब्द को क्रिया के अनुरूप और क्रिया को शब्द के अनुरूप बनाते हुए, शब्दों के हिज्जे करने प्रारम्भ कर दिये और बच्ची हैलेन एक बुद्धिमान् जिज्ञासु पशु की तरह उँगलियों की गति की नकल करने लगी। उसके मानवीय मस्तिष्क तक पहुँचने में एक महीना लग गया। ५ अप्रैल को—यह तिथि ३ मार्च की अपेक्षा किसी प्रकार भी कम महत्त्व की न थी—"छाया" हैलेन वास्तविकता के सम्पर्क में आई। जब ऐन सलिवाँ हैलेन के हाथ में पम्प से पानी उँडेल रही थी, इस बच्ची को अकस्मात् यह बोध हुआ कि पानी, जहाँ भी हो, पानी ही है और अभी-अभी उसने अपनी हथेली पर उँगलियों की जिस गति का अनुभव किया था, उसका अर्थ पानी ही है, और कुछ नही। इस उत्तेजना-पूर्ण क्षण में उसको अपने राज्य की कुंजी मिल गई। प्रत्येक वस्तु का एक नाम है और उसके पास नाम सीखने का एक ढंग है। ऐन सलिवाँ की ओर उसने प्रश्नवाचक संकेत किया, ऐन ने उत्तर दिया "अध्यापिका।"

उस दिन से हैलेन की प्रगति बहुत तेज हो गई। शिक्षक वर्ग को शीघ्र ही आभास मिलने लगा कि एक महान् अध्यापिका, डा० होव से भी महान्, कार्य में जुटी है। दस वर्ष की अवस्था मे हैलेन ने घोषणा की कि वह एक बहरे के समान उँगलियो की भाषा का प्रयोग करने के बजाय अन्य लोगों की तरह मुँह से बोलना सीखेगी और जब बोलने के ग्यारह पाठो का अभ्यास करने के बाद वह, रुक-रुककर ही सही, यह वाक्य बोल सकी "मै अब गूँगी नहीं हूँ" तो प्रतीत होने लगा कि इस लड़की की प्रगति पर कही कोई रोक नही है। परन्तु जनता में इस बारे में भिन्न-भिन्न धारणाएँ थी। कुछ लोग तो अध्यापिका को कोई महत्त्व न देकर हैलेन को एक दैवी चत्मकार मानते थे। दूसरे लोग सारा श्रेय अध्यापिका को देते थे और हैलेन को उसके संकेतों पर चलनेवाली मशीनमात्र समझते थे। इसके बाद १८९२ मे जब बारह वर्ष की अवस्था में हैलेन ने 'दि फ्रोस्ट किंग के रूप मे अनजाने में मिस मारगेरेट कैनबी की एक लघुकथा अपने नाम से छपा ली तो कुछ लोगों ने यह भी कहना शुरू कर दिया था कि यह सब पाखंड है।

इस बात से उन्हे बहुत दुख हुआ और आज भी होता है। परन्तु थोड़े से लोग ऐसे भी थे जिनमें डा० बेल उल्लेखनीय हैं, जो यह समझते थे कि एक प्रतिभाशाली अन्तर्दृष्टिवाली अध्यापिका और जिज्ञासु बुद्धिमती शिष्या का संयोग ही इन सब चत्मकारों का कारण है। हैलेन और अध्यापिका अपने

मार्ग पर साथ-साथ चलती रहीं और हैलेन रैडक्लिफ कालेज तक पहुँच गई, जहाँ उसने सन् १९०० में प्रवेश किया और चार साल बाद वह आँखों तथा कानोंवाली लड़कियों के साथ खुली प्रतियोगिता में सम्मान सहित डिग्री प्राप्त कर इस कालेज से बाहर आई। परन्तु इतना ही पर्याप्त न था। जब तक ऐन सलिवॉ जीवित रही उसकी मृत्यु सन् १९३६ में हुई—यह प्रश्न बना रहा कि जिसे हैलेन कैलर कहा जाता है उसका कितना अंश ऐन सलिवाँ है। इसका उत्तर सरल नही है। रचनात्मक वर्षो मे दोनों में से कोई भी एक दूसरी के बिना न बढ़ सकती थीं।

स्नातिका हो जाने के बाद हैलेन के लिए खुशी का काल आया, जो यद्यपि थोड़े समय तक रहा, परन्तु इससे उसका महत्त्व कम नही हो जाता। इस दीर्घ-कालीन परिश्रम के बाद वे रैन्थम, मैसाच्युसेट्स मे पहली बार अपने ही कहे जा सकनेवाले घर में रहने के लिए चली गई। एक साल बाद जब ऐन सलिवाँ नें जॉन मेसी से विवाह कर लिया तो यह एक पूरा परिवार बन गया। मि० मेसी एक प्रमुख साहित्यालोचक, संलाप की कला में निपुण और एक अच्छे साथी थे। आशापूर्ण समरसता के वातावरण में मि० मेसी और हैलेन अपने अपने क्षेत्र में निबन्धों और पुस्तकों के लेखन-कार्य में लग गये।

रैडक्लिफ मे प्रोफेसर चार्ल्स टाउनसैण्ड कोपलैण्ड से प्रोत्साहन पाकर हैलेन ने अन्य लोगों की तरह लिखने का प्रयत्न करना छोड़ दिया था। वह अपने ही अनुभवों के विषय में लिखने लगी थी। उसके लेखों ने कालेज के बाहर के लोगों का ध्यान आकर्षित कर लिया था और उससे कहा गया कि वह अपने इन लेखों को इस ढंग से एकत्र कर दे कि उसके जीवन की कहानी सामने आ जाये। मि० मेसी ने इसमें उसकी सहायता की। उसके प्रमुख पत्रों का संग्रह प्रकाशित किया और इसके साथ एक परिदिष्ट जोड़ दिया जिसमें उसने उन संस्मरणीय पत्रो को रखा जो अध्यापिका ने अल्बामा में अपने शुरू के महीनों में लिखे थे। १९०४ में प्रकाशित "दि स्टोरी आव माइ लाइफ" (मेरी जीवन-कथा) एक आदर्श ग्रन्थ बन गया है और पचास वर्षो से लगातार प्रकाशित होता आ रहा है।

हैलेन जब कालेज में थी तब उसने एक अन्य पुस्तिका प्रकाशित की थी, यह एक महत्त्वहीन छोटी-सी पुस्तिका थी जिसका नाम "औप्टिमिज्म" (आशावाद) ठीक ही रखा गया था। इसमें उसने अपनी ओर बहाई जानेवाली दया की तरंगों के विरुद्ध आवाज उठाई थी। जब रैन्थम में उसने "दि वर्ल्ड आइ लिव इन" (मेरा संसार) पुस्तक लिखनी शुरू की, जिसमें उसने उन पंडितों का

उत्तर देने में, जो उसको उन बातों का वर्णन करने के लिए जिन्हें वह देख नहीं सकती थी और उन शब्दों का प्रयोग करने के लिए जिनका सम्बन्ध रंगों और ध्वनि से था, डाँटते थे, एक शैतान बच्चे के से आनन्द का अनुभव किया। वह आशा कर रही थी (उसकी यह आशा कोर थी) कि इस पुस्तक में वह अन्तिम बार यह समझा देगी कि उसने साहचर्य और कल्पना के द्वारा अपने संसार का निर्माण किया है, "समग्र दृष्टि आत्मा मे निहित है।" अपने ही घोड़े की पीठ पर से कल्पना के पंख उसे ऐपोलो के द्रुतगामी अश्वों की पीठ पर चढ़ा सकते थे। मोमबत्ती की लौ, आग की गरमी और सूर्य के ताप से वह समझ सकती थी कि प्रकाश की तीव्रताएँ भिन्न-भिन्न होती है। जब उसके कपोल रक्त-संचार से तृप्त हो उठते, वह समझ लेती कि वे लाल हो गये है और जब वसन्त में कोपलें फूट पड़ती तो वह समझ जाती कि ये हरी हैं, और क्योंकि वह एक ही प्रकार के फलों (जैसे सेब) के स्वाद की भिन्नता का अनुभव कर सकती थी और एक ही जाति के फूलों (जैसे गुलाब) में सुगन्ध की भिन्नता का ज्ञान प्राप्त कर सकती थी, इसलिए वह यह निष्कर्ष निकाल सकती थी कि एक ही रंग हल्के-गहरे विभिन्न रूपों मे प्रकट हो सकता है। अपने हाथों के माध्यम से संगीत सुनते हुए वह क्या सुनती है, यह हम नही जान सकते, परंतु वह इस बात को अधिक स्पष्ट न कर सकी कि क्या वह हमे बताने के लिए नये शब्द बनाती है। उसने भाषा को उसी रूप में ग्रहण किया जिस रूप में उसे यह मिली और उसे कभी कोई कारण न दिखाई दिया कि वह क्यों न कहे "मै देखती हूँ", "मैं सुनती हूँ", जब कि अपनी बात प्रकट करने का उसके पास यही सरलतम उपाय है।

"दि वर्ल्ड आइ लिव इन" सन् १९०८ में प्रकाशित हुई। इसके बाद १९१० में "दि सौंग आव दि स्टोन वाल" (पत्थर की दीवाल का गीत) शीर्षक कविता प्रकाशित हुई। इस कविता से उसे अपनी अन्य रचनाओं की अपेक्षा अधिक आनन्द मिला।

इस समय तक हैलेन कैलर समस्त सम्भव लोकों की सुन्दरतम वस्तुओं का अपभोग करनेवाले एक पूर्णतः प्रसन्न प्राणी की स्थिति मे पूर्णतया प्रतिष्ठित जान पड़ने लगी थी, परन्तु हैलेन अनेक वर्षों से इस स्थिति को उड़ा देने की तैयारियाँ कर रही थी। अपनी अगली पुस्तक से तो मानो उसने फलीते में आग लगा दी, यह पुस्तक उसके फुटकल निबन्धों का, जो पत्र-पत्रिकाओं में छपते रहे थे, संग्रह थी। इस पुस्तक का नाम "आउट ऑव दि डार्क" अंधकार के बाहर रखा गया था। इसमें जिस अंधकार की ओर संकेत था वह कोई शारी-

रिक अन्धकार न था। इसका एक निबन्ध था "मै समाजवादी कैसे बनी।" एक निबंध में खानों के कर्मचारियों के परिश्रमी संघ का पक्ष-समर्थन किया गया था। एक निबन्ध स्त्री मताधिकार के सम्बन्ध में था। तीन निबन्धों में यह पुकार की गई थी कि यौन-रोगों से उत्पन्न होनेवाले अन्धेपन को रोकने के लिए नवजात शिशुओं की आँखों में सिल्वर नाइट्रेट डालनी चाहिए और इन निबन्धों से लोग सबसे अधिक चौंक उठे, क्योंकि लोगों का विश्वास था कि हैलेन मधुर और विरक्त स्वभाव की होगी, परन्तु वह तो यातनाओ की चर्चा कर रही थी ।

हैलेन भी आकस्मिक आघात के लिए तैयार थी। उसे यह जानकर विस्मय न हुआ कि उसके मित्र उसके इन नवीन विचारों से उद्विग्न हो उठे थे, परन्तु तब वह क्रुद्ध हो उठी जब उसके आलोचक यह धारणा प्रकट करने लगे कि वह जिन विचारों को व्यक्त कर रही थी वे उसके अपने न थे, अपितु मेसी-दम्पति तथा अन्य लोग उसको अपने दूषित एवं कलुषित उद्देश्यों की पूर्ति का साधन बना रहे थे। वह क्रुद्ध अवश्य हुई, परन्तु विचलित न हुई।

यह एक भारी आघात था, क्योंकि इसका अर्थ था कि उसे अपनी कलम के सहारे निर्वाह करने की आशा छोड़ देनी चाहिए। अपने विषय में लिखते-लिखते वह उकता चुकी थी और श्रोतागण उससे अन्य कोई बात सुनने को तैयार न थे। दूसरे रूपों में भी उस पर आपत्तियाँ घिर रही थी—अध्यापिका की आँखे इतनी खराब हो गई थीं कि उन पर भरोसा न रखा जा सकता था और इसके कारण किसी अपरिचित स्थान में वह अपनी गति-विधियों के विषय में विश्वस्त न हो पाती थी। उसका विवाह-बन्धन टूट रहा था इस बात का हैलेन के सामाजिक एवं राजनीतिक विचारों से कोई सम्बन्ध न था। उसकी दशा अच्छी न थी और धन उनके पास बहुत कम था।

उसने और हैलेन ने इन कठिनाइयों का पहले से ही आभास पा लिया था और इनका सामना करने की तैयारियाँ भी कर ली थीं। १९१३ के प्रारम्भिक दिनों में उन्होंने अपने आपको भाषण-मंच पर हैलेन की आवाज के कारण डरते-डरते आजमाया। तब से २३ वर्ष बीत चुके थे जब हैलेन ने पहले-पहल इस ऐतिहासिक वाक्य का उच्चारण किया था "मैं गूँगी नही हूँ," परन्तु निरन्तर कठिन परिश्रम करने पर भी वह अपनी इस उच्चाकांक्षा को पूर्ण न कर सकी थी कि वह भी अन्य लोगों की तरह बोल सके। आज जीवन भर के अभ्यास के उपरान्त भी उसका कंठ्य ध्वनियों को उच्चारण उनके लिए दुर्बोध्य ही होता है जो उसके उच्चारण के अभ्यस्त न हो गये हो। जब वह पहली बार सार्वजनिक सभा मे

बोली तब अपनी आवाज के सम्बन्ध मे इतनी चेतन थी कि वह अपनी अन्य कम महत्त्वपूर्ण बाधाओ (वह इन्हे कम महत्त्व की ही समझती थी) में अन्धे और बहरेपन के बारे में कभी न हुई थी, परन्तु उसकी कही बातों को जनता के सामने स्पष्ट रूप मे रखने और उनकी व्याख्या करने के लिए अध्यापिका के उसके साथ रहने के कारण उसकी घबराहट शीघ्र ही लुप्त हो गई और श्रोताओं ने इतना उत्साह और सहानुभूति प्रदर्शित की कि इस नये कार्य में सफलता निश्चित हो गई, यदि अध्यापिका की घटती हुई नजर और गिरता हुआ स्वास्थ्य इसे जारी रखने दें।

तीन महीने से भी कम समय के बाद ही उन्हें मानना पड़ा कि वे अपने आप से इस कार्य को नही चला सकतीं। यह ज्ञान उन्हें एक भयंकर रात के अनुभव से हुआ जब वे वाथ, मेन मे एक अपरिचित होटल मे टिकी हुई थी, जहाँ अध्यापिका निराशाजनक रूप से बीमार पड़ गई। हैलेन के सिवाय उसकी देख-रेख करनेवाला कोई न था और हैलेन की देख-रेख करनेवाला तो कोई था ही नहीं। अध्यापिका ने जैसे-तैसे होटल के मालिक को बुलाया और कुछ दिनों बाद वे लड़खड़ातीं हुई रैन्थम वापिस पहुँच सकीं। हैलेन ने अपना अभिमान का झण्डा झुका दिया और ऐन्ड्रयू कारनेगी को लिख भेजा कि उसे उसकी वृत्ति (पेंशन) स्वीकार है, अधिक अच्छे दिनों में इस वृत्ति को अस्वीकार कर चुकी थी। यह वृत्ति एक सामान्य जन के लिए पर्याप्त से भी अधिक थी, परन्तु दो बाधित स्त्रियों और उनके एक वैतनिक साथी के लिए यह पर्याप्त न थी। जब अध्यापिका स्वस्थ हो गई तो वे फिर सड़क पर चल पडीं।

जब सन् १९१४ के प्रारम्भ मे वे यूरोप के पहले दौरे पर रवाना हुई तो हैलेन की माॅ भी उनके साथ चली, परन्तु वह तो केवल एक दौरे में ही उनका साथ दे सकती थी और इससे उनकी समस्या हल न होती थी। यह समस्या उनके लौट आने पर हल हो गई जब उनकी अकस्मात् ग्लासगो, स्काटलैण्ड की मिस पौली टामसन से भेंट हुई जो बोस्टन के समीप अपने सम्बन्धियों से मिलने आई थी। अध्यापिका ने उसे उन कामों के लिए अपने साथ रख लिया जो एक आॅखों और कानोंवाला एक व्यक्ति उनके लिए कर सकता था। उसको सामान्यत: सेक्रेटरी का पद दिया गया था, परन्तु उस अद्वितीय परिवार में उसने जो अद्वितीय स्थान ग्रहण कर लिया उसके लिए कोई एक नाम नही दिया जा सकता। जैसे ही वह एक उत्तरदायित्व सँभालने के लायक होतीं, उस पर कोई दूसरा उत्तरदायित्व आ पड़ता और जब बाईस वर्ष बाद

अध्यापिका का देहान्त हुआ तो इस गम्भीर एवं सन्तोषकारी आश्वासन के साथ कि पौली टामसन भविष्य के कार्यो का भार उठाने को तैयार थी।

भाषण देने का कार्य वे १९१६ तक चलाती रही, जब हैलेन यूरोप में युद्ध से और संयुक्त राज्य अमरीका के इसकी ओर बढ़ने से इतनी विह्वल हो उठी कि उससे शान्ति के अतिरिक्त और किसी विषय की चर्चा ही न की जाती थी। उसकी आवाज उस समय के शोरगुल मे विलीन हो गई और वे थकी-माँदी और निरुत्साह होकर घर लौट आईं। रैन्थम के मकान मे रह सकना उनके लिए मुश्किल हो रहा था, क्योंकि वे इसका खर्च न उठा पाती थी, परन्तु यह तो उनकी सबसे छोटी कठिनाई थी। हैलेन युद्ध के बारे मे सोचते-सोचते बेचैनी के दिन बिताने लगी और उसकी राते भी युद्ध के स्वप्न देखते कटती। अध्यापिका को एक भयंकर खाँसी ने आ घेरा जिसने बढ़ते-बढ़ते प्लूरेसी का रूप धारण कर लिया। प्रयोगशाला मे उसकी जाँच हुई और इस क्षयरोग से त्राण पाने के लिए उसे जल्दी से लेक प्लैसिड ले जाया गया। पौली उसके साथ गई और चिन्ताओं से व्याकुल हैलेन अपनी माँ के पास ऐल्बामा चली गई। इसके बाद उसे जो खबर मिली वह यह थी कि अध्यापिका और पौली पोर्टो रीको चली गई है। बहुत दिनों बाद उन्हें सूचना मिली कि अध्यापिका की लेबोरेटरी-रिपोर्ट किसी अन्य के साथ बदल गई थी और वह क्षयरोग की रोगिणी नही थी। परन्तु पोर्टो रीको मे रहने से वे बाते मिल गईं जो वह चाहती थी—आराम और सौन्दर्य और शान्ति।

पुनर्मिलन के कुछ ही दिनों बाद उन्होंने न्यूयार्क नगर के समीप फारेस्ट हिल्स, लौग आइलैण्ड को जानेवाले मार्ग की विपरीत दिशा मे एक भद्दी ईंटो से बनी कुटीर खरीद ली। यदि अपने रहन-सहन के स्तर को नीचा कर देने से इनकी आर्थिक चिन्ताएँ दूर भी हो गई हों परन्तु ऐसा हुआ नहीं—तब भी इनका स्वभाव ही ऐसा था कि वे चुप न बैठ सकती थीं। वे अभी तर्क-वितर्क कर ही रही थी कि आगे क्या किया जाये कि तभी तक परोपकारी सज्जन ने (उसने अपना नाम गुप्त रखने का अग्रह किया) उनके सामने एक शानदार योजना रखी। उसने कहा कि हैलेन की जीवन-कथा की फिल्म तैयार करने से युद्ध-रत विश्व को तो लाभ होगा ही, साथ ही हैलेन को भी विशाल धन-राशि प्राप्त हो सकेगी। इस समय हैलेन के लिए धन अत्यधिक आकर्षक बन गया था। वह जानती थी कि कारनेगी-वृत्ति न तो उसके मरने के साथ ही बन्द हो जायेगी और यदि अध्यापिका उसके बाद भी जीवित रही तो वह बीमार और लगभग अन्धी होने के साथ-साथ धनहीन भी हो जायगी।

आशा से उत्साहित होकर उन्होंने हौलीवुड के लिए ट्रेन पकड़ी। यह फिल्म हैलेन के जीवन की वास्तविक कथा बनने जा रही थी, परन्तु इसे प्रतीकों से इतना रँग दिया गया कि यह प्रतीकवाद की एक अतिशयोक्तिपूर्ण कृति बन गई और इस स्थिति मे इसके लिए "डिलिवरेंस" (मुक्ति) नाम ही उचित जान पड़ा। "डिलिवरेंस" बाक्स-आफिस की दृष्टि से विफल हुई और इस फिल्म के द्वारा आर्थिक कष्टों से मुक्ति पाने का हैलेन का स्वप्न भंग हो गया, परन्तु यह उद्योग बिलकुल ही बरबाद न हुआ। इसके सबसे अच्छे ऐतिहासिक दृश्य नैन्सी हैमिल्टन द्वारा सन् १९५४ में निर्मित हैलेन के जीवन की डॉक्युमेंटरी फिल्म "दि अनकौंकर्ड" (अपराजिता) मे आज भी जीवित है।

अब धन के अभाव से पूर्णत भयभीत हैलेन ने सरकस में अपने भाग्य की परीक्षा करनी आरम्भ की। बीस मिनिट के "अभिनय" में वह और अध्यापिका यह दिखाती थीं कि उसको कैसे पढ़ाया गया था और कैसे उसने अपने आप को संसार के अनुरूप बनाया था। यदि यही अभिनय उन्होंने स्कूलों और सभा-भवनों में निःशुल्क किया होता तो इससे उन्हें प्रशंसा के अतिरिक्त और कुछ न मिल पाता, परन्तु यहाँ सिखाये-सधाये जानवरों और नटों के बीच अभिनय करने से चारों ओर यह शोर मचने लगा कि हैलेन कैलर पैसा कमाने के लिए अपना प्रदर्शन कर रही है। बात यही थी और वह अच्छी तरह जानती थी कि वह क्या कर रही है। परन्तु उसे इसका अभिमान था। जीवन में पहली बार वह अपने निर्वाह के लिए स्वयं उपार्जन कर रही थी और इतना ही नहीं, वह दो और स्त्रियों का भरण-पोषण कर रही थीं, और इतना ही नही, वह अध्यापिका के लिए कुछ बचा भी रही थी।

सरकस का यह काम भी, उसके आज तक के अन्य सभी कामों की तरह अस्थायी था। इस काम पर वह बीच-बीच में छुट्टी पाते हुए चार वर्ष तक रही। हैलेन तब तैंतालीस वर्ष की हो चुकी थी जब उसने, जैसा वह इसे कहती है, अपना जीवन-कार्य प्रारम्भ किया, यद्यपि एक प्रकार के वह बचपन से ही इसके लिए तैयारियाँ कर रही थी, क्योंकि वह चाहे जो भी काम करती रही हो, वह अन्धकार में अपने साथ यात्रा करनेवालों की सहायता के लिए समय निकाल ही लेती थी। उसके इन छुटपुट प्रयत्नों को १९२३ में, जब वह अन्धों के लिए अमरीकन फाउन्डेशन में शामिल हुई, विस्तार और निर्देशन प्राप्त हुआ।

इस संस्था मे पूरे समय के लिए काम उसे कुछ विलम्ब से मिला। उसे सरकस के कुछ और कार्यक्रमों में भाग लेना पड़ा और दो अन्य पुस्तकें लिखनी

पड़ीं। इनमें से एक पुस्तक थी "माइ रिलीजन" (मेरा धर्म) जो उसने न्यू चर्च के आग्रह पर लिखी थी और इसमें एमैनुएल स्वेडेनबर्ग की अभिशंसा की थी। दूसरी पुस्तक "मिडस्टीम" "माइ लेटर लाइफ" (मध्य धारा, मेरा बाद का जीवन) उसके प्रकाशक के कहने पर लिखी गई थी। परन्तु उसने तत्काल न्यूयार्क के आस-पास के स्थानों में भाषण देने शुरू कर दिये। इन भाषणों को तैयार करने में अध्यापिका से उसे अमूल्य परामर्श मिलते और जब वह भाषण देती तो उसके शब्दों को स्पष्ट करने और उनकी व्याख्या करने के लिए पौली उसके साथ होती।

फाउन्डेशन के लिए आन्दोलन चलाने के इन प्रारम्भिक वर्षों में दुख और चिन्ताओं ने कभी उसका साथ न छोड़ा, परन्तु जब वह संघर्ष मे उतर पड़ी तो उसने इन दुख और चिन्ताओं के बादलों को ठेलकर दूर कर दिया। अध्यापिका की शक्ति उसका साथ छोड़ती जा रही थी। उसकी आँखों की ज्योति समाप्त हो चुकी थी और जब २० अक्टूबर, १९३६ को उसने यह संसार छोड़ा तो इसमें खेद की कोई बात न थी। मृत्यु से कुछ सप्ताह पहले उसे सान्त्वना देने के लिए आये हुए एक व्यक्ति ने उससे कहा, "अध्यापिका, तुम्हें आराम होना ही पड़ेगा, तुम्हारे बिना हैलेन कुछ भी न रह जायेगी।" ऐन सलिवाँ ने उदासी-भरे स्वर में उत्तर दिया "इसका अर्थ होगा कि मैं असफल हुई क्योंकि सदैव उसका आधारभूत लक्ष्य हैलेन को स्वतन्त्र बनाना, अपने से भी स्वतन्त्र बनना, रहा था। यह उदासी क्षणिक थी। अध्यापिका जानती थी कि वह विफल नहीं हुई है।

हैलेन ने केवल एक और पुस्तक लिखने का विचार किया था और इस पुस्तक को वह "टीचर बुक" कहा करती थी। परन्तु ४ नवम्बर को, जब वह अभी दुख से सुन्न हुई जा रही थी उसने अपने विचारों को डायरी लिखकर पुनः संघटित करना प्रारम्भ किया। इस डायरी को, वह अगले अप्रैल तक लिखती रही और यह बाद में उसी वर्ष हैलेन कैलर्स जर्नल के नाम से प्रकाशित हुई। उसने इसे जापान की यात्रा करते समय जहाज पर पूरा किया था, जहाँ वह अन्धों की ओर से भाषणों के दौरे पर जा रही थी, यह उसके लिए एक पवित्र कर्तव्य था क्योंकि वह अध्यापिका को इसका वचन दे चुकी थी। तब से वह विभिन्न राज्य सरकारों, जिनमें संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार भी शामिल है, के आग्रह पर और अन्धों के लिए अमरीकन फाउन्डेशन तथा अन्य विशेष संस्थाओं के तत्त्वावधान में विश्व का भ्रमण कर चुकी है। उसने कोई भी महाद्वीप छोड़ा नहीं है। इन दौरों में वह केवल अन्धों के लिए ही नहीं, अपितु सभी बाधितों

के लिए, जिनमें अमरीका और यूरोप के अस्पतालों में पड़े घायल सैनिक भी आ जाते है, पुनर्वासन की योजनाओ के नेताओ को अपनी उपस्थिति द्वारा उत्साह देती रही है, और अपने दृढ़ यथार्थवादी विचारों द्वारा उन्हें परामर्श देती रही है।

दौरों के बीच के समय में वह और पौली और १९५० में अपनी मृत्यु-पर्यन्त उनका सर्व-सामान्य कार्यवाहक हर्बर्ट हास वैस्पोर्ट कनैक्टिकट के समीप एक सुन्दर भवन में, जिसको प्राप्त करने में मि० जी० ए० फीफर ने उनकी सहायता की थी, रहे और यहाँ हैलेन अपनी "टीचर बुक" (अध्यापिका पुस्तक) पर काम करती। इस पुस्तक का कार्य प्रारम्भ करने के लिए उसके पास ब्रैल अक्षरों में लिखे नोट थे, जिनमें से कुछ तो तीस वर्ष पुराने थे, उनके पास वे सब पत्र थे जो अध्यापिका ने कभी उसके लिए लिखे थे और अपनी माँ और बहिन और धर्म-पिता मि० जान हिट्ज, जो डा० बैल के सेक्रेटरी थे तथा अन्य मित्रों के सम्बन्धित पत्र भी उसके पास सुरक्षित थे। परन्तु १९४६ में जिस अग्नि ने उसका मकान भस्म किया उसी में वह इस सारी सामग्री को भी खो बैठी। यह विपत्ति बड़ी विनाशकारिणी थी, परन्तु मित्रों ने इस मकान को पुनः खड़ा कर दिया और इसे आवश्यक सामग्रियों से सुसज्जित कर दिया। कुछ समय बाद हैलेन ने पुनः यह कार्य प्रारम्भ किया। इतने एकाकीपन मे किसी अन्य लेखक को काम न करना पड़ा होगा। पुस्तक उसके हृदय में अंकित थी, उसे केवल इसको खीचकर बाहर निकाल लेना था।

इस पुस्तक का कुछ अंश मेरे घर मे, मेरे टाइपराइटर पर जो एक मामूली स्मिथ कैरोना पोर्टेबल मशीन है, लिखा गया। हैलेन ने शुरू में मुझसे पूछा कि इस समय कौन सा अक्षर उठ रहा है और इसके बाद तो ऐसा जान पड़ा जैसे उसने कभी किसी दूसरी मशीन का उपयोग न किया हो। उसने अपने कागज अपनी सुविधा के अनुसार रख दिये और तब किसी ने उनका स्पर्श न किया। उसने उन्हें पूर्ण व्यवस्थित क्रम से रखा हुआ था। वह जानती थी कि उसे कागज की नई शीट कहाँ से उठानी है और टाइप की हुई शीट कहाँ रखनी है। रद्दी की टोकरी में उसके ब्रेल अक्षरों में अंकित पुरानी टिप्पणियों के सिवाय और कोई कागज न पड़ता था। यदि उसे इनमें से किसी टिप्पणी की फिर आवश्यकता होती तो वह स्वयं ही उसे रद्दी की टोकरी में से खोज लेती और उन टुकड़ों को अपने वक्षस्थल से सटाकर अपनी उँगलियों से उनको टटोलती और अपने इच्छित प्रसंग को ढूँढ़ निकालती। इस प्रकार हमने उसकी रद्दी की टोकरी का भी कभी स्पर्श न किया।

उसने प्रतिदिन ६ से ७ घंटों तक काम किया, यह उसके दैनिक कार्य का सामान्य समय था। इस बीच उसके काम में रुकावट कदाचित् ही पड़ती थी और चाहे वह स्वेच्छा से रुकी हो या नही, उसे हमेशा ही केवल एक अवसर को छोड़कर—अपना टाइप किया हुआ अन्तिम शब्द याद रहता था। यह अपवादस्वरूप एक अवसर तब आया जब एक दिन हमने अपने घर के समीप देवदारु के एक वृक्ष के नीचे भालू के पंजों के निशान पाकर इन्हें देखने की जल्दी में उसे भी अपने साथ घसीट लिया था।

टाइप करते हुए वह हमेशा आगे ही बढ़ती चलती थी, जैसा कि उसे हमेशा करना भी चाहिए। वह पीछे मुड़कर लिखे हुए अंश को देख नहीं सकती और यदि उसे कोई शुद्धि करनी हो तो इसे वह वही पर कर देती जहाँ पर यह सूझ पड़े और इसके साथ सम्पादक के लिए एक नोट लगा देती, जैसे—"मैक्सिको में अध्यापिका के प्रसंग के बाद", "जीवन से सम्बन्धित प्रसंग के साथ जोड़ो," "वाइब्रेशन के बारे मे मैंने जो लिखा है, उसके स्थान में कृपया यह रख दें।" ये नोट इतने अधिक नही होते कि सम्पादक को इनसे कोई तकलीफ हो।

जब अध्यापिका जीवित थी, वह पूरी हुई पांडुलिपि का हैलेन के हाथ में हिज्जों की भाषा में पढ़ देती थी जब कि एक तीसरा व्यक्ति इसे उच्च स्वर से पढ़ता रहता था। इस बार सम्पादक को चुपचाप काम करना पड़ा और प्रश्न पूछने के लिए उसे हाथ की वर्णमाला का प्रयोग करना पड़ा। हैलेन के निर्देश स्पष्ट और पूर्ण होते थे और जब पुस्तक का सम्पादन पूरा हो चुका तो टाइप की हुई पांडुलिपि को ब्रेल अक्षरों में उभारा गया जिससे हैलेन इसे अपने अवकाश के समय में स्वयं पढ़ ले। परन्तु अवकाश ब्रेल प्रतिलिपि के पेज उसके पीछे-पीछे वायुयान में भेजे जाते थे और उसने अपनी पुस्तक पहली बार स्वयं उन अवकाश के क्षणों में पढ़ी जो उसे तब दक्षिण भारत के एक पर्वतीय स्थान पर भाषणो के बीच साँस लेने भर के लिए मिलनेवाले समय के रूप में मिल पाता था।

अपने पाठकों से वह केवल उस बात की याचना करती है जिसकी याचना वह स्वयं अपने लिए भी देखने और सुननेवाले लोगों से करती रही है कि वे यह भूल जायँ कि वह एक बहरी अन्धी है और उसको भी एक सामान्य स्त्री समझें। यह बात सरल नहीं है। एक बार जब हम एक भीड़ के बीच में थे, एक आदमी ने जिसे हमने पहले कभी न देखा था, उसके लिए ऐलीवेटर तक पहुँचने का रास्ता साफ कर दिया और मुझसे उसने कहा कि मैं हैलेन को बता दूँ कि वह आदमी और उसकी पत्नी उसे (हैलेन को)

एक सन्त समझते हैं। मैंने उसे बताया कि हैलेन सन्त कहलाना पसन्द नही करती। वह बोला, "वह अपनी सहायता स्वयं नही कर पाती। हम ऐसा ही अनुभव करते हैं।"

वह अपने आप को प्रभु के हाथ का एक साधारण औजार समझती है और अपनी सारी उपलब्धियो का श्रेय अध्यापिका को देती है। उसने जो सम्मान प्राप्त किये है उनकी सूची लम्बी है और वह इनके लिए अकृतज्ञ नहीं है, परन्तु इस पर एक छाया घिरी है। इनमें से कुछ ही उपाधियाँ ऐसी हैं जिन पर वह दूसरा नाम भी अंकित है, जिसे वह अनुभव करती है कि उसके प्रत्येक उपाधि-पत्र पर और प्रत्येक मैडल पर अंकित होना चाहिए—यह है अध्यापिका का नाम ऐन सलिवॉ मेसी। इस नाम से उन दोनों का बोध होता था और अब भी होता है। हैलेन कहती है, लोग सोचते हैं कि अध्यापिका मुझे छोड़ चली है परन्तु वह तो सदैव मेरे साथ है।

हैलेन कैलर ध्वनि-कम्पन द्वारा ध्वनि को समझने के लिए एक बालिका के मुँह पर अपनी 'श्रवणशील उँगलियाँ' रख रही है।

हैलेन कैलर अपनी आत्मकथा 'दि स्टोरी ऑव् माइ लाइफ' का बर्मी भाषा का संस्करण प्रधान मन्त्री यू नू को भेंट कर रही है। उसके दाहिनी ओर उसकी संगिनी पौली टॉमसन है

१

नवम्बर १९४६ में एक दिन तीसरे पहर पौली टॉमसन और मैं उस होटल के सामने, जिसमे हम कुछ दिन बिताने के लिए ठहरे हुए थे, ऐक्रोपोलिस पर चल रहे थे। हम दक्षिणी यूनान के युद्ध-पीड़ित अन्धों की दुर्दशा की जाँच करने के लिए नेपल्स से सयुक्त राज्य अमरीका के एक विमान में एथेन्स पहुँचे थे। इससे पहले हम इँगलैंड, फ्रांस और इटली में युद्ध के कारण हुए अन्धों से भेंट कर चुके थे जिससे हम खिन्न और श्रान्त थे, परन्तु पार्थिनॉन को देखे बिना चले जाना भी हमें सह्य न था। इसलिए हम अकेले ही इधर खिसक आये थे।

यह एक लम्बी कठिन चढ़ाई थी जिसे हमें भोड़ी सीढ़ियों और पैर पड़ते ही लुढ़क पड़नेवाले पत्थरों के ऊपर चलते हुए चढ़ना था, परन्तु चढ़ना शुरू करने से पहले हमने खँडहरों मे खोज की थी, जिसमे हमारे हाथ एक गिरा हुआ खम्भा लगा और मैंने इस खम्भे को एक सिरे से दूसरे सिरे तक टटोला जिससे मैं थोड़ी बहुत कल्पना कर सकूँ कि ये खम्भे आकाश की ओर कैसे उठ रहे होंगे, और जब अन्ततः हम शिखर पर पहुँच गये, तब मुझे वस्तुतः पार्थिनॉन की स्पर्शनीय सुषमा का आभास मिला। इसके खम्भों की चिकनाई, जिसे पंच महाभूत और काल नष्ट न कर पाये थे,, मुझे पृथ्वी और स्वर्ग में निहित उन अकथनीय शक्तियों की प्रतीक जान पड़ी, जिनका अभी रहस्योद्घाटन होने को शेष है।

एथेन्स को ऊपर से निहारनेवाली उस ऊँचाई पर यूनानी शिल्पियों और वास्तुकारों की उदात्त कृतियों के स्पर्श से मुझमे अनिर्वचनीय आनन्द की लहरें थिरक उठी और मैंने उस प्रशान्त वातावरण का अनुभव किया जिसमे कभी पैलेस ऐथिनी रहा करती थी और देवतागण मनुष्यो के पास उनके पराक्रमों के लिए पुरस्कार तथा उनके अपराधों के लिए दंड देने आते थे। अध्यापिका, जैसा कि मैं ऐन सलिवाँ मेसी को सदैव पुकारा करती थी, अप्रत्यक्ष रूप से मेरे साथ थीं और उन्होंने मुझे बचपन मे जो

यूनानी पुराण कथाएँ और कविताएँ सुनाई थी, वे अब मेरे सामने एक सजीव वास्तविकता का रूप धारण कर रही थी। जिन खेलों मे उन्होने और मैंने यूनानी और बर्बर की भूमिका ग्रहण की थी, वे अब अपनी समस्त शक्ति के साथ मेरी स्मृति मे उभरने लगे। वज्रधारी ज्यूस देवता की शक्ति और पैरों में चन्दन के मायावी पंख धारण करनेवाले हर्मीज देवता के स्मरण से मेरी कल्पना फिर से उद्दीप्त हो उठी। कल्पना की आँखों से मैंने पौसीदौन को समुद्र के ऊपर अपना त्रिशूल घुमाते हुए और प्लूटो को चीखते-चिल्लाते पर्सीफोन को उठाकर अपने अन्धकारमय राज्य की ओर ले जाते देखा। अध्यापिका ने मुझे ट्रॉय के घेरे और विध्वंस के बारे मे जो कथाएँ सुनाई थी वे मेरे मस्तिष्क में ऐसे कौध उठी जैसे वे किसी अदृष्ट आपत्ति की चेतावनी हों।

पौली और मै ऐक्रोपोलिस से चारो ओर का दृश्य निहारने लगे—हमने वह पहाड़ी देखी, जिस पर डेमास्थेनीज अपनी हकलाने की आदत सुधारने के लिए मुँह मे एक रोडी रखकर रोज दौडता था, वह ऐगरा (सभा-स्थान) देखा जहाँ कभी एथेन्स-निवासियो ने पैरिक्लीज के उपदेश सुने थे और जहॉ द्रुत-गति से चलनेवाले संदेश-वाहक मैरेथन से विजय का समाचार लाये थे। वहाँ निर्भीक यूरीपिडीज ने मानव जाति के कल्याण के लिए और दासता के विरोध में आवाज उठाई थी। वहाँ सुकरात ने एथेन्स के युवको को पढाया था और प्लेटो ने उस दर्शन का प्रवर्तन किया था जो आज भी देखने और सुनने की चाह रखनेवाले लोगों की ऑखों और कानों को तीक्ष्ण बनाता है।

ऐक्रोपोलिस का आरोहण उन कठिनाइयो का प्रतीक था जिन्हे अध्यापिका और मैंने साथ मिलकर पार किया था और अन्धों के प्रति अपने काम में मुझे जिस लाक्षणिक ऐक्रोपोलिस का आरोहण करना पड़ा था उससे मुझे आध्यात्मिक बल मिला था। जब हम जीवन से निराश अन्धों के एक कैम्प से दूसरे में जाते थे, तो मेरे ऊपर कष्टों का पहाड़-सा आ पड़ता था। मै जानती थी कि इन लोगों को फिर से आत्म-निर्भर और उपयोगी बनाने मे वर्षों के पुरस्कार-शून्य परिश्रम की आवश्यकता होगी। मै अनुभव करती थी कि मेरे सामने जो करुण-गाथा उपस्थित है वह अपने ढँग की अकेली ही है, परन्तु अध्यापिका के अध्यवसाय का विचार मुझे आगे बढ़ने की प्रेरणा देता।

अभी केवल डेढ़-सौ वर्ष पहले ही यूरोप के अन्धों का निराशा से त्राण किया गया था। स्वभावत: इन्होंने उन थोड़ी सी सुविधाओं को जो इन्हे मानवीय जीवन की ओर प्रत्यागमन के कठिन मार्ग में पाठशालाओं, कार्यनिष्ठ

अध्यापकों, अल्प साधनों से धीरे-धीरे जुटाई हुई ब्रेल प्रणाली की पुस्तकों के रूप में प्राप्त हुईं, सावधानी से सँभालकर रखा था। परन्तु द्वितीय विश्व-युद्ध ने घातक आकस्मिकता के साथ इनसे सब सुविधाएँ छीन ली थीं। अनेकानेक अन्धे अपने घर बार खो चुके थे। उनके कठिन परिश्रम से बनाये हुए स्कूलों और कारखानों को नाजियों ने या तो नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था या लूट लिया था, उनकी ब्रेल-स्लेटें युद्ध-सामग्री बनाने के लिए गला दी गई थी और उनका साहित्य ईंधन के रूप में जला दिया गया था और जिन संस्थाओं ने समर्थ युवक अन्धो को रोजगार देने की व्यवस्था की थी वे बन्द पड़ी थी। कष्ट और अभाव तो सभी जगह थे, परन्तु अन्धे जिस जटिल अरक्षितावस्था मे आ पड़े थे, उसमे उन्हें शिक्षा की दूसरो की अपेक्षा अधिक आवश्यकता थी, क्योंकि केवल विशेष प्रकार की शिक्षा से ही उन्हे आत्मनिर्भर बनना सिखाया जा सकता था। मैंने अनुभव किया कि यद्यपि अमेरिका के लोग संसार के दुर्भाग्य-पीड़ितों के प्रति अतिशय उदार है, परन्तु उनके लिए भी यह एक दुष्कर कार्य होगा कि वे यूरोप मे टूटे-फूटे स्कूलों की मरम्मत कर दे और नये स्कूल बना दें, महँगे ब्रेल छापाखाने, शिक्षा के उपकरण और सामग्री जुटा दें जिससे सैनिक एवं असैनिक अन्धो को एक ऐसा लक्ष्य मिल जाय जिसकी ओर वे अपने निराश जीवन को ढाले। ये समस्याएँ उस समय मेरे मतिष्क को आन्दोलित कर रही थी, जब कि हम रोम में इँगलैड वापिस ले चलने-वाले किसी वायुयान की प्रतीक्षा के लिए रुके थे।

हम एक्सेल्सियर होटल में ठहरे हुए थे, जब कि हमे समुद्री तार द्वारा सूचना मिली कि कनैटिकट में ऐरकैन रिज पर हमारे मकान को, जो पूरा लकड़ी का बना था, आग से भयंकर क्षति पहुँची है। पौली और मैं अवसन्न होकर एक दूसरे से लिपट गये। हमें विश्वास न हो पाता था कि एक क्षण मे ही हमारा सब कुछ—हमारा मकान जहाँ हमने और हमारे फ्राइडे के समान श्रद्धालु पुरुष हरबर्ट ने अपना शेष जीवन बिताने की सोची थी, पौली की और मेरी जापान से संगृहीत अप्राप्य वस्तुएँ और हमारे मित्रों के स्नेह के उपहार, समस्त पुस्तकों और कागजों सहित मेरा पुस्तकालय, मेरी माँ, अध्यापिका और वस्तुतः संसार भर के लोगो के वे पत्र जिन्हे मैंने सँभाल कर रखा था, यह सब कुछ हमसे छिन गया है। "अध्यापिका" की पाडु-लिपि की याद से मेरा हृदय विदीर्ण हो उठा, जिसका तीन-चौथाई मै लिख चुकी थी और जिस पर मैंने गत बीस वर्षो के अवकाश के क्षणों मे काम किया था। मैंने पौली से कहा कि उस पांडु-लिपि की हानि मुझे अंग-भंग सी खल

रही है। जैसे ही मैंने ये शब्द कहे, मेरे अन्तर में एक ज्वाला धधक उठी, जलाने या काला करने के लिए नही, अपितु मेरे मन को प्रकाशित करने और किसी उद्देश्य की ओर संकेत करने के लिए। उन छोटे-छोटे अन्धे बच्चों के ध्यान से, जिनका अंग-भंग हो गया था, आहत होकर मैंने आगे कहा, "मैं सुखों से मुँह मोड़ लूँगी। यह हानि अध्यापिका से बिछोह जैसी नहीं है जिसने मानो मेरे जीवन के आधार को ही भग्न कर दिया था।"

"हाँ" पौली ने उत्तर दिया, "हम सुखों की उपेक्षा कर देंगे। हम दूसरों की हित-साधना में लगे है। अनेकों ने हम पर अपना आसरा बाँधा है और हमें उन्हें छोड़ नहीं देना है।"

"इसके अतिरिक्त" मैंने कहा, "हमारे पास अद्भुत मित्र है और कुछ ऐसे साधन है जो लाखों-करोड़ों के पास नहीं हैं।"

"कितना ठीक?" पौली की उत्साह भरी उँगलियाँ चमक उठीं, "यह एक चुनौती है। हम आगे बढेंगे।"

हरबर्ट इन दिनों पेरिस मे था। उसे हम अपने साथ यूरोप में इस इच्छा से ले आये थे कि कम से कम यहाँ तो उसे पहली बार वास्तविक छुट्टी मिल सके, जो कि उसे पिछले बारह वर्षो मे—जब से वह हमारे साथ था—नही मिल सकी थी। वह अपने मित्रो से मिलने हॉलैंड चला गया था और अब हमारी प्रतीक्षा कर रहा था। जब हम उससे मिले, उसने हमारी आशकाओं को ठीक बताया। ऐरकैन रिजवाला मकान भस्म हो चुका था। यह कहते-कहते उसके आँसू ढुलक पड़े कि "काश, मै घर पर ही रहता। अध्यापिका ने कहा था कि वे तुम दोनों को मुझे सौप रही है।" हमने उसको यथासंभव सात्वना दी, परन्तु फिर भी उसकी उदासी दूर न हुई। परन्तु जिस क्षण मैं अपनी इस विपत्ति की पूर्णता को पूरी तरह से समझ पाई उसी क्षण मैंने अपने शारीरिक अस्तित्व की क्षुद्रता पर प्राण-शक्ति को महती प्राण-शक्ति को, आत्मा की निर्मिति, देखने और सुननेवाली प्राण-शक्ति को विजयी होते अनुभव किया। यह आन्तरिक प्राण-शक्ति मुझमे हिलोरे लेने लगी और फैलने लगी और मुझे सुरक्षा की उस भावना पर आश्चर्य होने लगा, जिसका मैं अपने आध्यात्मिक आवास मे अनुभव कर रही थी, यद्यपि पौली के और मेरे पास कोई ऐसा भौतिक निवास-स्थान न रह गया था, जिसे हम अपना कह सकते।

मेरे मस्तिष्क के छोर पर समाधान के लिए चीख पुकार करती हुई कठिनाइयों के होते हुए भी, मै उन समस्त अग्नियों पर विचार करती रही,

जिनके बीच मै हाल में अपनी कल्पना मे विचरती रही थी। मेरे सामने आक्रान्त देशों में, जहाँ आँखोंवाले और आधे अन्धे नर-नारियो और बच्चों तक ने विनाश से बचने के लिए घोर युद्ध किया था, अग्निवर्षक हवाई हमलों का नर-मेध था। मेरे सामने 'मृत्यु का धुआँ' था, जो नाजीवाद, जिसे मिथ्या देवतावाद (बालिज्म) कहना अधिक ठीक होगा, के गैस-गृहो में उस लाखों यहूदियो को तडपा-तड़पा कर भस्म किये जाने से उठा था, और जब मुझे द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान में टोकियो के कागज के कमजोर मकानों का विध्वस्त अवस्था में जलना याद आता तो मेरा हृदय फट पड़ता। ओह मैं सजीवता की क्या कहूँ जिसके साथ मेरी लघु ज्वाला संहार और लूट-पाट के बीच फँसे लोगों के दुखो को प्रकाश में ला रही थी, मेरे अन्तर मे रोष की अदम्य ज्वाला धधक रही थी और मैंने मनुष्य के चारो ओर छिपी कुत्सित भावनाओं से स्वतन्त्रता, विश्व-बन्धुत्व, आत्म-विकास और प्रसन्नता पर रोक लगानेवाले क्रूर सिद्धान्तो तथा आत्म-तुष्टि के उड़ते हुए साँपों से प्रत्येक संभव प्रकार से भिड़ने का संकल्प कर लिया।

मेरे विचार भौतिक जलन से विध्वंस की उस अग्नि की ओर दौड़ने लगे जिसका साक्षात्कार मुझे तब हुआ था जब मैंने अमरीका और यूरोप के अस्पतालों में जल और स्थल के घायल सैनिको से भेंट की थी—अंग-भंग, आराम होने मे न आनेवाली चोटे, पक्षाघात (पैरप्लेजिया), अकस्मात् अंध या बधिर हो जाने से उत्पन्न निराशा, एकाकी कक्षो का जीवन, किसी न किसी प्रकार की बदसूरती के कारण जीवन भर के लिए समाज से बहिष्कृत होने का भय, अनेक नाम-रहित रोग जिनका लोग उच्चारण तक न करते थे, परन्तु रोगी के मस्तिष्क को स्वस्थ और स्वच्छ रखने के लिए जिनका उपचार किसी प्रकार भी कम आवश्यक न था; ये थे उस विध्वंसाग्नि के कुछ कुकृत्य! इन स्मृतियो के धुँधलके मे मैंने अपनी दृष्टि को सद्भावना के उन प्रकाश-स्तम्भो पर स्थिर करने का अपूर्व निश्चय कर लिया जो मानव-जीवन के त्राण और उन्नयन के लिए उद्यत रहते हैं।

मुझ पर जो आपत्ति आ पड़ी थी, उसका एक "मधुर लाभ" यह हुआ कि अब मै उन सर्व-सामान्य क्षतियों के विषय में जो महान् और क्षुद्र, मानव और पशु, इन दोनों प्रकार के अनेकानेक जीवनों को अस्थिर कर देती है, अकृत्रिम ढंग से चर्चा कर सकती थी, और यह विचार मुझे सदैव उत्साहित करता था कि अभी भी मेरे पास पौली और हरबर्ट स्वस्थ और सुरक्षित हैं।

जब हम २० दिसम्बर को वैस्टपोर्ट लौटे तो हम अपने एक सच्चे मित्र मि० जी० ए० फीफर—चचा गस—जिनकी स्नेहपूर्ण कृपा अध्यापिका के देहान्त से पहले से ही हमारे पथ को आलोकित करती रही थी, द्वारा प्राप्त एक मकान में ठहरे। क्रिसमस की सुबह को पौली हरबर्ट और मै अपने उस अमूल्य गृह की समाधि की ओर चल पड़े, जो अब एक गहरा, काला गड्ढा मात्र रह गया था और जिसमे हमने सात वर्षो तक काम, आराम और साहस का जीवन बिताया था और जहाँ हममे से प्रत्येक ने एक दूसरे की प्रसन्नता से आनन्द प्राप्त किया था। वहाँ उस रिक्तता मे परिणत गृह के पास हम मंत्र-मुग्ध से रह गये। मुझे प्रतीत हुआ जैसे मै अग्नि-शिखाओं के बीच चल रही हूँ, जैसा कि मध्य युग में किसी अपराधी को अपनी निर्दोषिता की परीक्षा देते समय करना पड़ता था। यहाँ केवल हरबर्ट का कमरा और गराज का कुछ भाग बच रहा था।

व्रैथमवाले अपने मकान को छोडते हुए अध्यापिका को और मुझको बहुत दुःख हुआ था, परन्तु तब कम से कम इतना तो था कि हम अपनी किताबे और सामान अपने साथ ले जा सके थे, और इनके मधुर साहचर्य ने हमको अपरिचितों के बीच अपने आपको उस अपरिचित वातावरण के अनुकूल बनाने मे सहायता दी थी। परन्तु इस बार तो हमें सचमुच विछोह देखना पड़ा था। वे पुस्तके चली गई थी, जिन्होने मेरे नारीत्व के प्रारम्भिक दिनों से मेरे मस्तिष्क को खाद्य प्रदान किया था, जिनमें से कुछ को मै यात्राओं में भी अपने साथ ले जाया करती थी और जिनमें से कुछ को मैने माँ, अध्यापिका और अभिभावक-पिता हिट्ज से प्राप्त उपहारों के रूप मे सँभाल कर रखा था। वह बाइबल जिसके उभरे बिन्दु मेरी उँगलियों के निरन्तर स्पर्श से धुँधले पड़ गये थे, वे शेक्सपियर की कृतियाँ, जिनका विश्व-जनीन प्रतिभा में बाइबल के बाद पहला स्थान था और जो बचपन से ही मेरे मन-मन्दिर मे बस गई थी, और सभी कालों के कवियों के वे सामंजस्यपूर्ण उद्धरण जो मेरे मौन क्षणों में प्रतिध्वनित होते रहते थे, मुझसे छिन गये थे। तब से मुझे इनमें से कुछ पुस्तकों को पुनः प्राप्त करने का सौभाग्य मिल चुका है; परन्तु वह वेदनामय शून्यता जो मै उन स्नेह-स्पन्दित अथवा आध्यात्मिक-उपदेशो से आलोकित अक्षरों का, जो हमेशा के लिए नष्ट हो गये, ध्यान आने पर सदैव अनुभव करती हूँ! ओह, उस राख में अध्यापिका के सँजोये हुए स्मारकों और यात्राओं में संगृहीत अपनी बहुमूल्य वस्तुओं की कल्पना कर पौली और मैने हृदय की जिस तीव्र वेदना से एक

दूसरे के हाथ कसकर भींच लिये, उसकी मैं क्या कहूँ! उस असह्य क्षण में, मैंने अपने हृदय के ऊपर एक हाथ को सान्त्वना देते हुए अनुभव किया और मुझे इस विश्वास से बल मिला—

...काया और अज्ञात भावना में,
कि जीवन सदैव मृत्यु का स्वामी है,
और प्रेम कभी अपदस्थ नही हो सकता!

हम धीरे-धीरे अपने भग्न गृह के चारों ओर घूमे और पौली का ध्यान उस सुन्दर 'पिन-ओक' की ओर आकर्षित हुआ जिसे हम "अध्यापिका का वृक्ष" कहा करते थे, क्योंकि यह वृक्ष उनके कोमल कमनीयता के आदर्श का प्रतीक था और प्रकाश-पुंज सा प्रतीत होता था। यह एक तरफ से बुरी तरह झुलस गया था और हमें सन्देह होने लगा कि यह तीखी ठंड और सर्द हवाओं के थपेडों को क्या झेल पायेगा, परन्तु अगले बसन्त में इसमें पंखों जैसी हरियाली के साथ शाखाएँ फूट निकली और तब से यह निरन्तर उठता और बढ़ता रहा है और अब इसकी कृतज्ञशीलता ग्रीष्म की उष्णता को शान्त करने लगी है।

कुछ दिनों बाद पौली की और मेरी अपनी प्रिय सखी और साहित्यिक परामर्शदाता 'ऐनी सलिवाँ मेसी' की लेखिका नेला ब्रैडी हैनी से लम्बी बातचीत हुई। जब हम इकट्ठे बैठे हुए थे, हमने अनुभव किया कि हमारा दुख उसके कोमल हृदय मे द्विगुणित हो रहा था और उसके शब्दों से जो सुखदायी स्वर्गीय ओस-बिन्दु ढुलक रहे थे, उन्होने मेरी इस धारणा को और भी दृढ कर दिया कि मुझे दुखी न होना चाहिए, जैसा कि यूनानी कहा करते थे, उसने कहा 'तू आपत्तियों के सामने न झुक, अपितु और भी वीरता से आगे बढ़।' उसने इस पर हर्ष प्रकट किया कि मेरी जीवन-नौका को आगे खेने के लिये पौली और हरबर्ट बच रहे थे और उसने मुझे स्मरण दिलाया कि अब मै पुराने उत्तरदायित्वों मे और अप्रिय निश्चयों से मुक्त होकर अपना काम आगे बढ़ा सकती हूँ। मैंने उसे बताया कि बड़े आश्चर्य की बात यह है कि एक ध्वनि जो वर्षो तक निरन्तर यह चेतावनी देती रही थी कि जब हम लौटेंगे तो हमारा घर खँडहर हो चुका होगा, अब मौन हो चुकी है। मैं समझ न पाती थी कि यह ध्वनि मुझे क्यों परेशान करती थी, विशेषत. जब कि मै उपेक्षा से इसकी अवहेलना करती रही थी।

अन्य बातों के बीच मैंने नेला से उन पुस्तकों की चर्चा की जिन्हें मैं खो चुकी थी—मेरी बाइबल, स्वीडनबर्ग की कृतियाँ, जिनकी प्रतिलिपि. मि०

हित्ज ने मेरे कालेज के दिनों में तथा बाद में की थी और जो मेरे साथ एक घर से दूसरे घर में पहुँचती रही थी, 'एलिस इन वण्डरलैंड' की वे गुटमुटी छोटी जिल्दें जो मुझे हावर्ड के एक प्रतिभाशाली छात्र कार्ल ऐरेन्सबर्ग से जन्मदिन के उपहार के रूप मे प्राप्त हुई थी, 'प्रोमेथियस अनबाण्ड' की वह पुरानी प्रति जिसमे मैंने अनेक स्थलों पर चिह्न लगाये थे, लाल जिल्द मे बँधी जॉन बी० टैब्स की "पोयम्स" जिस पर मेरी बहिन मिल्ड्रेड के हस्ताक्षर अंकित थे, तथा अनेक निधियाँ जिनको मै अमूल्य समझती थी। परन्तु जब मै यह कह रही थी, मुझे अध्यापिका की आत्मा की निर्माणकारिणी अग्नि का भान हुआ और इस अनुदर्शन मे मुझे इस बात का नूतन आभास हुआ कि कैसे उनके (अध्यापिका के) व्यक्तित्व के स्फुलिंग और उनके अंधेपन की छायाएँ जो पहले आंशिक थीं और बाद में प्रायः पूर्णता पर पहुँच गई थी, पचास वर्षो तक मेरे जीवन की अंग बनी रही है। नेला ने मुझसे कहा "जब तुम फिर से अध्यापिका की जीवनी लिखोगी, वे तुम्हे एक पवित्र अग्नि के सदृश प्रतीत होंगी—जो भस्म नही करती प्रत्युत उष्णता, आशा और प्रकाश प्रदान करती है।" जिसकी लिखी हुई अध्यापिका की बोधपूर्ण, सजीव कथा ने अनेक हृदयो मे स्थान पाया है, अपने मे उसके विश्वास का स्पर्श पाकर मै हार्दिक आशा करती हूँ कि मै अपने पाठकों को उस स्त्री के अन्तर मे निहित देदीप्यमान अग्नि की कुछ झाँकियाँ दे सकूँगी, जिसमे सम्भ्रान्त जीवन की अमिट चाह और "स्वप्नातीत सौन्दर्य" को देखने की क्षमता थी।

२

छोटी-सी हैलेन के शून्यप्राय संसार में धधकती हुई अवरुद्ध वासनाओं और भावनाओं की धुएँ-भरी ज्वालाओं को अध्यापिका की आत्मा से निकला हुआ स्वच्छ तेजोमय स्फुलिग दबा सका। यह स्फुलिंग "पानी" (वाटर) शब्द के रूप मे प्रकट हुआ। अध्यापिका के उद्देश्यों की व्याख्या "करुणा" शब्द के पुराने घिसे-पिटे अर्थ से नही हो सकती। हैलेन को उस नन्ही मुन्नी हैलेन को जो केवल पशुओं की सी और वह भी कभी-कभी बर्बर पशुओं की सी अन्तः प्रेरणाओ द्वारा शासित थी और जिसे मै एक "छाया" (फैन्टम) कहना अधिक पसन्द करूँगी मुक्त करने मे अध्यापिका के प्रयत्नों की पृष्ठभूमि में उसका मानव के मित्र के रूप में प्रकृति पर अविश्वास काम कर रहा था। स्वयं अपने अन्धेपन के साथ अध्यापिका का संघर्ष बचपन से ही प्रारम्भ हो गया था, और बोस्टन मे अन्धो के लिए बनी 'पर्किन्स इन्स्टीट्यूशन' मे पढ़ते समय जब उसकी आँखों की ज्योति आसक्ति रूप से लौट भी आई तब भी प्रकृति पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने का उसका संघर्ष समाप्त न हुआ। यह संघर्ष उसके पार्थिव जीवन के अन्त तक चलता रहा।

यह सदैव ही गुप्त रूप से या खुले तौर पर उन बुराइयो से घृणा करती थी उसे उद्देश्यहीन जान पड़ती थी और जिन्होने उसकी आँखो की ज्योति नष्ट कर दी थी तथा संसार भर में लाखों व्यक्तियों के स्वास्थ्य, स्वच्छता और प्रसन्नता को बरबाद कर दिया था इस मनःस्थिति में उसका उस अन्धे, गूँगे और बहरेपन पर आक्रमण कितना प्रचण्ड रहा होगा, जिसने उसकी छोटी-सी शिष्या को प्रतिरुद्ध भावनाओं के तिहरे कारागार में डाल रखा था। बड़ी हिम्मत के साथ उसने ठान लिया कि वह स्वयं को प्रकृति के स्थान पर बैठायेगी और हैलेन पर इसने जो उद्देश्यहीन अधिकार जमा रखा है उस अधिकार से इसको, उस बच्ची के भाग्य की निष्ठुरताओं के स्थान पर प्रेम और सृजनात्मक विचारो को प्रतिष्ठित कर, च्युत कर देगी।

यह अध्यापिका के जीवन का एक ऐसा काल है, जिसे स्मरण कर मुझे वेदना होती है। मेरा यह सोचना स्वाभाविक है कि अच्छा होता कि यदि शल्य-चिकित्सा (आपरेशन) के परिणामस्वरूप अपनी ही आँखों से पढ सकने में समर्थ हो जाने के कारण प्रसन्नता की जिस हिलोर ने उसे आप्लावित कर दिया था, उसके बाद उसे कोई ऐसा बच्चा मिल गया होता जो उसके सहानुभूतिपूर्ण स्पर्श को समझ पाता। परन्तु खेद है कि उस "छाया" (हैलेन) मे मानवता के स्वाभाविक बन्धनों की कुछ भी समझ न थी। स्नेहपूर्ण स्वरों और मुस्कराते चेहरों की चमक से बचपन में जो मधुरता जाग उठती है, वह उसमें सोयी हुई थी। वह न तो आज्ञापालन जानती थी और न किसी के दयाभाव को समझ पाती थी। मुझे स्मरण है कि तब वह (हैलेन) मोटी, मजबूत, बेपरवाह और निडर थी। दूसरों का कहा मानने से उसने इनकार कर दिया था और जब उसे पहले पाठ पढ़ाये जा रहे थे, उसे जबरदस्ती सीढियों से ऊपर के कमरे में ले जाना पडता था। फिर, भोजन के समय उसके भोजन करने के तरीको को सुधारना पड़ता था। इस "छाया" को अपनी तथा दूसरो की तश्तरियों से उगँलियो से ही भोजन उठा लेने की आदत थी। ऐन सलिवाँ को यह आचरण सह्य न था इसलिए ऐसे अवसरों पर दोनों में युद्ध छिड जाता, जिसके दौर में परिवार के अन्य लोग कमरा छोड़कर चले जाते। "छाया" लात-घूँसे चलाती, चीखती, अपनी कल्याणेच्छ अध्यापिका को नोचती और उसको उसकी कुर्सी से घसीटती हुई एक असुर का रूप धारण कर लेती, फिर भी ऐन उसको चम्मच से खाने और हाथों को तश्तरियाँ दूर रखने के लिए बाध्य करने में सफल हो जाती। फिर कभी "छाया" अपने नोकिन को फर्श पर फेंक देती और तब तक एक घन्टे के युद्ध के बाद ऐन उससे इसको फर्श से उठवाकर ले और तह लगवाकर रख लेती। एक दिन सबेरे "छाया" उन शब्दों को सीखने के लिए बैठती ही न थी, जिनका उसके लिए कोई अर्थ न था और उसने लात से मेज गिरा दिया। जब ऐन ने मेज को फिर अपनी जगह पर रखकर पढ़ने के लिए "छाया" पर जोर डाला तो, बिजली की सी तेजी से "छाया" के घूँसों ने झपटकर ऐन के दो दाँत तोड़ डाले।

महान् उद्देश्य से अनुप्राणित किसी युवती को इससे अधिक दुःख स्थिति का सामना न करना पडा होगा। "छाया" को अनुशासित करने का जब-जब प्र यत्न किया जाता था, तब-तब उसके माता-पिता हस्तक्षेप कर देते थे। इसलिए ऐन ने उनसे "छाया" को किसी शान्त एकान्त स्थान पर ले जाने की

अनुमति ले ली और उनके सुझाव के अनुसार उसे घर के पास के एक लता-मंडप से ढके "आइवी ग्रीन" नामक कक्ष में ले गई। यहाँ का सारा फर्नीचर बदल दिया गया था जिससे "छाया" इसे पहचान न सके—मेरी घ्राण-स्मृति भी भिन्न है और तय किया गया कि परिवार के लोग यहाँ प्रतिदिन आया करेंगे, परन्तु इस तरह से कि हैलेन को उनके आने का पता न लगे। अध्यापिका के बाद के कथनों से मुझे ज्ञात हो सका कि इस कक्ष मे हम दोनों एक प्रकार से पिजड़े में बन्द कर दी गई थी और मुझे आश्चर्य है कि ऐन ने अपनी व्यक्तिगत सुरक्षा का ध्यान न रखते हुए इस एकान्त कक्ष में रहने का साहस किया।

यद्यपि मैं ऐन और छाया के बीच अनेक झपटो का उल्लेख कर चुकी हूँ, लेकिन मैने इनका उल्लेख इसलिए नही किया है कि मुझे इनका सुसम्बद्ध एवं विस्तृत स्मरण है, अपितु इसलिए कि इनसे अध्यापिका के उठाये हुए काम की दुष्करता का आभास मिल जाता है। अपनी पुस्तक "मेरी जीवन-कथा" (दि स्टोरी ऑव माइ लाइफ) में, जो मैंने एक प्रसन्न और सुखी युवती की सी लापरवाही के साथ लिखी थी, मै उन कठिनाइयों और बाधाओ का चित्रण करने मे विफल रही थी जो अध्यापिका के सामने उपस्थित थी और इस पुस्तक मे कुछ और भी ऐसे दोष रह गये थे, जिनको अब मै अपनी परिपक्व बुद्धि से अध्यापिका के त्यागो को समझते हुए सुधारे बिना नही रहने देना चाहती।

उस एकान्त कक्ष मे मुझे जिस छाया का स्मरण है वह अपने नये वातावरण में खोयी हुई सी थी। मेरी स्मृति मे वह हाथ-पैर पटकना, खींचना और घूँसे तानना उभर आता है जो ऐन के कारण नही होता था अपितु जिसे छाया अपनी बाहों को मुक्त करने के लिए किया करती थी। तब उछल-कूद मचाती हुई और लातें चलाती हुई छाया किसी उपद्रवी घोडे के बच्चे से कम न थी। सचमुच उस समय की वह हट्टी-कट्टी छाया अपने कल्पित शत्रु (अध्यापिका) को खूब परेशान करती थी। मुझे एक चीज के चारों ओर जो मेरी स्पर्श स्मृति के अनुसार बिछौना जान पडती है, झपटी-झपटी का और छाया को उस पर लिटाने या उस पर से उठाने और कपडे पहनाने के लिए ऐन की दृढ़ मुद्रा का स्मरण हो आता है। छाया को समय का कोई ज्ञान न था और यह बात वह बहुत वर्षो बाद समझ सकी कि उसे निरुत्साहित किये बिना नियन्त्रण में लाने में ऐन को कितने घण्टों तक श्रम करना पड़ता था। इतने पर भी इस कार्य मे ऐन को तब तक आसक्ति सफलता ही मिल पाई थी, जब कि वे दोनों फिर घर में आई। कभी छाया इस बात पर बिगड़

उठती कि ऐन उसे बार-बार "पानी" और "मग्घा" का भेद समझाने का प्रयत्न करती थी। फिर मुझे स्पर्श-स्मृति के सहारे याद आती है कमरे मे तेजी से बढ़ते हुए कदमों की और एक हाथ की—जो मेरी माँ का हाथ था—जो छाया को पकड़कर उसकी खूब अच्छी ठोक-पीट करने के लिए उसे कमरे से घसीट ले जाता था। इसके बाद छाया सुधरने लगी, परन्तु अभी उसमे प्रशसा के उस प्रेम का अभाव था जो एक सामान्य बच्चे में होता है, उसे कभी यह भान न होता था कि उसे दंड दिया गया है क्योकि अभी वह भले-बुरे मे भेद न कर पाती थी, उसका शरीर बढ़ रहा था, परन्तु उसकी बुद्धि इस प्रकार अवरुद्ध थी, जैसे फलीते में अग्नि। परन्तु अन्ततः ५ अप्रैल, १८८० के दिन, तस्कम्बिया मे आने के ठीक एक महीने बाद, ऐन "वाटर" (पानी) शब्द द्वारा छाया की चेतना का स्पर्श कर सकी। यह घटना कुएँ पर घटी। छाया के हाथ मे एक मग्घा था और जब वह इसे कुएँ पर लगे पम्प की टोटी के नीचे किये हुए थी ऐन पम्प चलाकर इसमे पानी उड़ेलने लगी और जब पानी छाया के उस हाथ के ऊपर बहने लगा, जिसमे वह मग्घा पकड़े हुए थी, ऐन उसके दूसरे हाथ मे "वा-ट-र" के हिज्जे बार-बार दुहराने लगी। अकस्मात् छाया की समझ में इस शब्द का अर्थ आ गया और उसके मस्तिष्क मे चेतना के स्फुलिग फड़कने लगे। बीमारी के बाद उसे इस चेतना के जागरण से जो प्रथम आनन्द का अनुभव हुआ, उसमें मग्न होकर वह इधर-उधर की वस्तुओं को छू-छूकर उनके वाचक शब्द जानने के लिए बड़ी उत्कंठा से ऐन के सदैव सहायता के लिए तत्पर हाथ की ओर बढ़ने लगी। उसके मस्तिष्क मे एक के बाद एक शब्द का अर्थ स्पष्ट होने लगा, अनुभव करने लगा और इस प्रकार उसमें स्नेह की चेतना का जन्म हुआ। बहुत देर बाद कुएँ से दो आनन्द-विभोर प्राणी लौट रहे थे जो एक दूसरे को "हैलेन" और "अध्यापिका" के नाम से सम्बोधित कर रहे थे। निस्सन्देह आनन्द के इन क्षणों का जीवन शाश्वत अन्धकार मे डूबे जीवन से कहीं अधिक पूर्ण होता है।

मुझे अत्यधिक खेद है कि मैने, "मेरी जीवन-कथा" (दि स्टोरी ऑव माइ लाइफ) मे हैलेन की भाषा तथा बोलना सीखने में प्रगति के संबंध में बडी लापरवाही से लिखा है। वहाँ मैने इन बातों का वर्णन इतना संक्षिप्त किया है कि उससे एक सामान्य पाठक को जान पडेगा कि जैसे हैलेन के एक ही क्षण में "भाषा का समस्त रहस्य अवगत कर लिया हो।" अपने इस कलाहीन वर्णन से, जिसे मैं निश्चयपूर्वक कह सकती हूँ कि कोई आलोचनात्मक एवं

परिपक्व बुद्धि का लेखक सारी पृष्ठ-भूमि को स्पष्ट करते हुए लिखता, मैंने पाठकों के मन में कितना भ्रम उत्पन्न कर दिया है।

एक मानव के रूप मे मेरा विकास अध्यापिका का जीवन कार्य होने के कारण मेरे लिए उचित है कि मै पुनरुक्ति दोष में जा पड़ने की शका का शिकार बनकर भी नन्ही हैलेन की उस वास्तविक स्थिति का वर्णन करूँ, जो उसकी उन्नीस महीने की अवस्था में ही आँखों और कानो की शक्ति से वंचित हो जाने पर उत्पन्न हो गई थी। अत्यन्त दुखदायी आकस्मिकता के साथ बेचारी हैलेन प्रकाश से अन्धकार मे जा पड़ी थी और एक छाया-मात्र बन गई थी। उसके लिए वायु मे कोई ध्वनि न थी, उसके मस्तिष्क पर और उसके सारे मार्ग मे मौन छा गया। मस्तिष्क के इस अकाल ने उसके अस्तित्व को जकड लिया। वह जो नगण्य शब्द सीख पाई थी वे मुर्झा गये। जो सूर्य का प्रकाश उसे दिशा-निर्देश करता था, अब उसके लिए बुझ गया उसकी जो आँखे अब तक मुस्कानो पर पली थी, उन्हे अब अपरिवर्तनीय शून्य के अतिरिक्त और कुछ भी न मिलने लगा। वसन्त की रंगीनियाँ और मंजरियाँ अब उसे मुग्ध न कर पाती थी, फलो से लदी ग्रीष्म ऋतु उसका ध्यान आर्कषित किये बिना ही चल देती और उसे ज्ञात न हो पाता कि शरद् ऋतु धन्य-समृद्धि लेकर आ गई है। अब पक्षियों ने उसके हृदय मे कूकना बन्द कर दिया, क्योकि अब वह उनके उल्लास को प्रतिध्वनित न कर पाती थी। उसका शरीर अवश्य सुन्दर था, परन्तु ओह! वास्तविक बचपन का वह अभाव जो उसके माता-पिता को निराश कर देता था, सबको आह्लादित करनेवाली मुसकान के स्थान पर उसका यह भावशून्य और दृष्टि, उस सभी कुछ की मृत्यु प्रतीत होते थे, जिससे वाणी, विनोद और चेतना का आश्वासन मिलता है। परिवार के लोग इस छाया को हाथों से आस-पास की वस्तुओ को टटोलते हुए देखते और तब इन वस्तुओं का अर्थ समझने मे कुंठित उसकी चेतना का अनुभव करते, परन्तु वे इस सम्बन्ध मे उसकी क्या सहायता कर सकते थे।

छाया ने अपनी इस दुखस्थ अवस्था का कोई समाधान नही खोजा क्योंकि वह इसे समझ ही न पाई थी। न उसने मृत्यु की ही चाह की, क्योंकि उसे अभी मृत्यु की कल्पना ही न थी। वह जो कुछ भी स्पर्श करती थी, उसके लिए वह सब आश्चर्य या प्रत्याशा, उत्सुकता या विवेक की भावनाओ से रहित एक पिंड मात्र होता था। यदि वह किसी भीड मे खड़ी होती, तो उसे जन-समुदाय की कल्पना न हो पाती। उसके लिए कोई भी वस्तु किसी अन्य का अंग न थी और उसमे प्राय: प्रचण्ड क्रोध उमड़ उठता, जिसकी स्मृति मुझे

क्रोध की भावना के अनुभव के कारण नहीं है, वरन् उस क्रोध का शिकार बननेवाली वस्तुओं पर पड़नेवाली लात-घूँसों की बौछार के स्पर्श की अनुभूति के कारण मुझे उसका स्मरण हो जाता था। इसी प्रकार मुझे उसके गालों पर ढुलकते हुए आँसुओं की तो याद है, परन्तु उस दुख की नही जिसके कारण ये आँसू ढुलक पड़े होंगे। भावनाओं के लिए छाया के पास कोई शब्द न थे और इसलिए वे स्मृति में अंकित भी न हो सकी। उसे "परछाईं" का कोई ज्ञान न था, क्योकि वह नही जानती थी कि "पदार्थ" क्या होता है। उसके लिए न तो कोई सौन्दर्य था, न कोई समरूपता और न कोई अनुपात ही। उसके लिए तो सर्वत्र अभाव अनिर्दिष्ट अभाव-मात्र था—ऐसा अभाव जो मानवता के उन सभी अभावो का बीज था, जिनकी पूर्ति सैकड़ों ठोस उपायों द्वारा होती रहती है। कुएँ पर होनेवाली घटना से पहले छाया ने कभी किसी निश्चित वस्तु की ओर बढ़ने की अन्त.प्रेरणा का अनुभव किया ही न था, इस घटना के बाद से ही उसे उन वस्तुओं के नाम सीखने की अन्त.-प्रेरणा का अनुभव होने लगा जिनकी उसे इच्छा होती थी या जिनका वह स्पर्श करती थी। परन्तु इस समय भी यह अन्त:प्रेरणा अविकसित अवस्था में थी।

कुएँ पर जो घटना घटी उससे इतना भर हुआ कि छाया के सामने फैली शून्यता लुप्त हो गई, परन्तु इतने ही से छाया वास्तविक संसार मे न पहुँच गई थी। वह जिन वस्तुओं को छूती, उनके साथ उनके वाचक शब्दों, जैसे "पम्प," "फर्श," "बच्चा," "अध्यापिका," इत्यादि, का ठीक-ठीक सम्बन्ध जोड़ने लगी। इस प्रकार अपनी भौतिक आवश्यकताओं को व्यक्त करने में असमर्थता से छुटकारा पा जाने से उसे जो आनन्द का अनुभव हुआ, उसमे बह-बह चली। अब वह अध्यापिका की ओर आकर्षित होने लगी, इसलिए नहीं कि वह अध्यापिका के प्रति कृतज्ञता का अनुभव करने लगी थी, अपितु इसलिए कि अध्यापिका की उँगलियों की गति से उसकी शब्दो की भूख शान्त होती थी। उसका यह आकर्षण ऐसा था, जैसे कि कोई बच्चा माता के स्तनों से दूध पाने के लिए माता की ओर खिचता है। वह केवल उन शब्दों का ही चिन्तन करती रहती थी, जिन्हें वह सीखती थी और जब इन शब्दों के प्रयोग की आवश्यकता होती, वह इन्हें याद करती। इसके अतिरिक्त वह न तो कोई अन्य चिन्तन करती थी और न अपने मन मे किसी वस्तु का वर्णन करने का ही प्रयास करती थी। परन्तु उसने पहले-पहल जो शब्द समझे, वे उष्ण रश्मियों के उस प्रथम अभाव के समान थे, शिशिर के हिमपात की एक के बाद

एक तह को, एक टुकड़ा यहाँ से तो एक टुकड़ा वहाँ से, इस रूप में गलाना प्रारम्भ कर देता है। जब वह बहुत से संज्ञा-शब्द सीख चुकी, तब विशेषण पदों की बारी आई और अज्ञान का हिम अधिक तीव्र गति से गलने लगा। अन्तत: अध्यापिका ने क्रियापदों का ज्ञान कराना प्रारम्भ किया, पहले एक-एक कर और फिर कभी समूह के रूप मे, परन्तु हैलेन के लिए शब्दो में कोई पारस्परिक सम्बन्ध न था, न उसमे कोई कल्पना थी और न कोई आकार या सामंजस्य की भावना। बहुत समय के बाद ही धीरे-धीरे वह सरलतम ढंग से प्रश्न पूछने लगी। अभी वह क्या, कहॉ, कैसे, क्यों तथा ऐसे ही अन्य शब्दों को, जिनकी खूँटी पर हम अपने वाक्यांशों को लटकाते हैं, हृदयंगम न कर सकी थी, परन्तु जैसे-जैसे वह इन शब्दो को अपनाती गई और इनके सहारे रुक-रुक कर प्रश्नात्मक वाक्य बनाने लगी, अध्यापिका के हाथ से मिलने-वाले प्रत्युत्तरों से उसकी हिचक दूर होने लगी। इसके बाद तो अध्यापिका सारे समय हैलेन से बातें करती रहती और हाथों के स्पर्श के मध्यम से चलने-वाले संभाषण की इसे जादूभरी प्रक्रिया से किस प्रकार हैलेन का ज्ञान प्रारम्भिक ऊबड़-खाबड़ टटोलों से बढ़कर परिपक्वता की ओर बढ़ने लगा, यह सोच-कर आश्चर्य होता है। इस बच्ची के मन में कौन से असम्बद्ध विचारखंड व्यक्त होने के लिये छटपटा रहे है, यह अनुमान लगाने में अध्यापिका को अपनी प्रवीणता का अधिकतम प्रयोग करना पड़ता होगा। जिस शब्द-समूह को सीखना इस बच्ची को पाँच साल पहले से प्रारम्भ कर देना चाहिए था, उसे कुछ ही महीनों में सीख लेने की चेष्टा में इसकी द्रुतगति से चलती हुई उँगलियों के संकेतों को पढ़ते-पढ़ते अध्यापिका की आँखे अवश्य ही थक जाती होंगी। फिर भी इस अल्पकाल में हैलेन जितना थोड़ा सा प्रारम्भिक ज्ञान हृदयंगम कर सकी, उतने से ही उसके स्पर्श में आनेवाली प्रत्येक वस्तु का जैसे रूप ही बदल गया। अध्यापिका के निर्माणकारी हाथ के प्रभाव से हैलेन के सामने धरती, वायु और पानी का वास्तविक अर्थ जल्दी-जल्दी स्पष्ट हो गया और जैसे-जैसे हैलेन को जीवन अर्थ-पूर्ण प्रतीत होने लगा तथा माता और पिता, नन्ही मिल्ड्रेड, बहिन लीला और उसकी छोटी कन्याओं तथा उन नीग्रो बच्चों के साथ, जिन्होंने वर्षो तक उसके जंगली व्यवहार को सहन करते हुए उसके लिए खेल जुटाने की चेष्टा की थी और जो हमेशा उसे स्नेह करते रहे थे, भावात्मक सम्बन्ध का अनुभव करने लगी, वह पहले की "छाया" अन्तर्हित हो गई। उन प्रारम्भिक दिनों में इस पुन: प्राप्त बन्धुत्व की भावना से उत्पन्न आनन्द का प्रवाह ही वस्तुत: आश्चर्य की वस्तु था, न

कि भाषा को एक पूरे गढ़े हुए औजार के रूप में पकड लेने मे हैलेन की वह प्रगति जिसे भूल से "चमत्कार-पूर्ण" कह दिया गया है।

ऐन सलिवाँ की प्राथमिक शिक्षा-विधियों मे से एक विधि थी हैलेन को खेलना सिखाना, उसने हैलेन मे क्षमता को ढालनेवाला एक ऐसा तत्त्व प्रवेश करा दिया, जिसके बिना अध्यापन या कुशल-कार्य मुश्किल से ही सम्भव होता है। हैलेन जव से बहरी हुई थी। तब से हँसी नही थी। जब वह कुछ आज्ञा-पालन और धैर्य सीख चुकी, तब एक दिन अध्यापिका ने उसके कमरे मे खिल-खिलाकर हँसते हुए, प्रसन्नता की लहरे थिरकाते हुए, प्रवेश किया। उसने नन्ही हैलेन का हाथ अपने प्रसन्न मुख पर रखते हुए "लॉफ" (हँसना) शब्द के हिज्जे, किये और तब उस बच्ची को ऐसा खुलकर हँसाया कि सारे परिवार का हृदय प्रसन्न हो गया। उसने इस क्रिया को बार-बार दुहराया और इसके बाद हैलेन को उछलने, झूलने, कूदने, लुढ़कने, टपने इत्यादि की क्रियाओ का परिचय दिया, प्रत्येक क्रिया के प्रदर्शन के साथ वह उसके वाचक शब्द के हिज्जे करती जाती थी। कुछ ही दिनो मे हैलेन एक दूसरी ही बच्ची बन गई, जो प्रसन्नता की दीप्ति विस्तारित करने लगी और अब वह तथा ऐन मिलकर जो आश्चर्यजनक क्रीड़ाये करने लगी, उनका तो कहना ही क्या? ओह, कैसा था वह भरपूर प्रसन्नता का फूट पडता हुआ प्रवाह, वह अकथनीय स्फूर्ति, नई खोजो का वह उत्साह, जिसने हैलेन को प्रकाश के समान आवृत कर लिया था। हैलेन के साथ उछल-कूद मचाते हुए स्वयं अध्यापिका का भी ऐसा अनुभव होने लगता था जैसे वह परियो के देश मे आ गई हो, जहाँ उसे रचनात्मक क्रीड़ा का वह उपहार प्रदान किया गया, जिससे वह स्वयं अपने बचपन मे भी परिचित न हो सकी थी, इस प्रकार सब तरह की हरकतों व्यायामो और खेलों द्वारा हैलेन को उन विभिन्न क्रियाओ का नाम पूछने की तथा अध्यापिका के उँगलियों के माध्यम से दिये जानेवाले शब्द-ज्ञान के निरन्तर प्रकट होनेवाले स्फुलिंगों के सहारे अपना ज्ञान बढाने की प्रेरणा दी जाने लगी। शब्द-ज्ञान कराने की इस प्रकिया का जादू अविस्मरणीय था। जब हैलेन और अध्यापिका लुक-छिप का खेल खेलतीं या गेद उछालती अथवा बिल्लियों के बच्चों या कुत्तो के पिल्लो के साथ खेलती रहती, तब अध्यापिका की उँगलियाँ हैलेन के हाथ मे निश्चित रूप से चमकती रहतीं।

अध्यापिका ने अपने कमरे मे कुछ कबूतर एक पिंजरे मे रख छोडे थे, जिससे कि जब वे बाहर निकाले जायें और वह (अध्यापिका) उनका पीछा कर रही हो उस समय हैलेन उनके पंखों की हवा का अनुभव कर सके और

पक्षियों की उड़ान के विषय में जान सके तथा पंखों की महत्ता समझ सके। जब इन कबूतरों का संकोच धीरे-धीरे दूर हो गया तो ये उड़कर हैलेन के सिर और कन्धों पर बैठ जाते और हैलेन उनको चुगाना तथा उनकी कूक, उनकी गुटरगूँ तथा उनके पंखों की फड़फड़ाहट समझना सीख गई और यही कारण है कि देख सकने पर भी पक्षी उसके जीवन के वैसे ही अंग बने रहे हैं जैसे फूल और पत्थर।

हैलेन के खरगोशों के दरबे में अति सुन्दर लाल जैसी आँखोंवाले सफेद खरगोश थे। अध्यापिका ने खरगोश पहले कभी न देखे थे और उनकी निरन्तर हिलती हुई नासिकाएँ उसको बहुत आनन्द देती थी, परन्तु उनका भोजन चबाने का ढंग उसे गलत जान पड़ा और वह एक खरगोश को दूसरे ढंग से भोजन चबाना सिखाने का प्रयत्न करने लगी, इस पर मेरे माता-पिता हँसते-हँसते दुहरे-तिहरे हो गये। यह घटना उन अनेक प्रसंगों में से एक थी, जिनसे अध्यापिका का प्राणि-विज्ञान तथा अन्य विषयों का गलत ज्ञान प्रकट होता था—आखिर उसे स्कूली शिक्षा कुल ६ वर्षों तक ही तो मिल पाई थी—परन्तु उसने हैलेन के साथ इन पालतू खरगोशों की जो आदतें देखी, उनसे जंगली खरगोशो के बारे मे अनेक रोचक बातें खोज निकाली। इस प्रकार यह आनन्द-दायक शब्द क्रीडा चलती रही और धीरे-धीरे हैलेन ने अपनी उँगलियों में सवारी के घोड़े "प्रिन्स" की हिनहिनाहट, गायो का राँभना, सुअर के पिल्लों की ची-ची और मुर्गे की गरूर भरी बाँग सुन ली। हैलेन गा या अलाप तो सकती नही थी, परन्तु जैसा कि अध्यापिका कहा करती थी उसका चेहरा तब ऐसा दमकता था जैसा कि बोलने की शक्ति प्राप्त कर लेने पर भी दमक पाता।

मैंने जो कुछ लिखा है वह ऊबड़-खाबड़ ही है, परन्तु यह ब्राउनिंग के उस नक्षत्र के समान है, जिसने उसे पहले लाल प्रकाश की और तब नीले प्रकाश की किरण के दर्शन कराये थे। इसी प्रकार हैलेन के पुनर्जागृत शैशव का भोर का तारा मेरे सामने प्रकट होता है।

अध्यापिका ने अपनी इस अशान्त अतृप्त शिष्या को अपनी समस्त शक्ति, अपनी कल्पना, पशुओं, पौदो, और खनिजों के विषय में पुस्तकों से बटोरा हुआ अपना ज्ञान और अपने में जो कुछ प्रकाशमान और सुकुमार था वह सब कुछ दे डाला। हैलेन जीवन के आनन्द में मग्न थी, जब कि अध्यापिका को अपनी प्रतिज्ञा का निरन्तर स्मरण बना रहता था—इस प्रतिज्ञा का कि वह इस बच्ची को बुद्धि के कान और आँखें देकर, उपायकुशल बनाकर और समाज

के सम्पर्क में लाकर इसके जीवन की शून्यता को समाप्त कर देगी और अन्धी, बेपरवाह तथा भावना शून्य प्रकृति ने इस असहाय नन्ही मानव आत्मा को जिन क्षमताओं से वंचित कर दिया है उन क्षमताओं को इसे प्रेम, आविष्कार और साहित्य के सहारे किसी न किसी मात्रा मे प्राप्त करा देगी। यह थी अध्यापिका की अनुभूति, जिसका आभास मुझे बहुत बाद में हुआ, जब कभी हैलेन संज्ञाओं, क्रियाओं या अव्ययो मे उलझ जाती और अपनी मुखमुद्रा से अपनी असमर्थता प्रकट करती, तब अध्यापिका उसे कोई ऐसा महत्त्वपूर्ण शब्द या कोई ऐसा सहायक वाक्य बता देती, जिससे उसके व्यक्तित्त्व को नये पर मिल जाते। जब हैलेन, कुछ और बड़ी हो गई, अध्यापिका उसको "मदर गूज" जैसे छन्दों से हँसाने में या सरल परन्तु कोमल छन्दों से अनुप्राणित करने में समर्थ होने लगी। यहाँ भी प्रक्रिया वही थी जो पढ़ना सीखने की सामान्य विधि में अपनाई गई थी—हैलेन को प्रत्येक शब्द नही समझाया जाता था, उसको स्वयं शब्दों का अर्थ खोज निकालने के लिए छोड़ दिया जाता था। यद्यपि हैलेन को उस थाती की विशालता का आभास न था जो उसे इस प्रकार प्राप्त कराई जा रही थी परन्तु कविता से उसका भाव-विभोर हो जाना आज भी मुझमें आनन्द का कम्पन उत्पन्न कर देता है।

कौन मधुर उच्छ्वासमयी आत्मा है, ताइम पादप की सुगंधि से भी बढ कर कौन सुरीली ध्वनियाँ मन्त्रमुग्ध कर देती रजनी के स्निग्ध शैशव को ?

यह होती हैलेन की भावनाएँ, जब वह अध्यापिका के साथ कविता पढ़ती होतीं।

इस जादू का सा प्रभाव उत्पन्न करने में अध्यापिका की कोमल उँगलियाँ भी भाग लेतीं—वे उँगलियाँ जो छन्द के प्रवाह के साथ-साथ थिरकती रहती और बीच-बीच में हैलेन का स्पर्श कर उसमें आनन्द या वेदना की संवेदना करा देतीं। धीरे-धीरे हैलेन के साथ अध्यापिका की पढ़ाई अधिक और बार-बार होने लगी और हैलेन उससे जो शब्द सीख पाती उनसे वह (हैलेन) नये-नये प्रश्न बनाती और इस प्रकार उसे और भी शब्दों का परिचय मिलता।

जो किताबें हैलेन को हिज्जे करके सुनाई जातीं, या जिन्हें वह स्वयं पढ़ती, उनसे उसका शब्द भंडार बढ़ने लगा। बोलने की शक्ति प्राप्त कर लेने के परिणामस्वरूप उसकी मानसिक प्रक्रियाएँ तीव्रगति से सक्रिय हो गईं और इससे उसको सुसम्बद्ध विचारों तथा अधिक सबल तर्क-शक्तिवाला प्राणी बनने में बहुत सहायता मिली। जैसा कि मै पहले भी कह चुकी हूँ, "मेरी जीवन-

कथा" में मैंने न तो शिशु हैलेन की उस स्थिति का उचित विश्लेषण किया जो उसे पढ़ाना प्रारम्भ करने से पहले थी और न उन क्रमिक अवस्थाओं का जिनसे होकर उसने भाषा सीखी और न अध्यापिका की शिक्षण-विधि की अकृत्रिमता का ही। इसके अतिरिक्त उस पुस्तक में मैंने ऐसी अनेक परमावश्यक बातें छोड़ दी हैं, जिनसे ऐन सलिवाँ के एक बहरे-अन्धे प्राणी को यथासम्भव एक सामान्य प्राणी के सतर पर लाने के बहुमुखी कार्य का महत्त्व स्पष्ट होता है।

३

उदाहरण के लिए, अध्यापिका कहा करती थी कि हैलेन कितनी भद्दी और गन्दी है। उसको इस बच्ची की लैम्प या अन्य वस्तुओ को उठाकर एक ओर पटक देने की आदत छुडाने में हफ्तों लग गये। निरन्तर सक्रियता में हैलेन के आनन्द को मन्द किये बिना, अध्यापिका ने उसे सिखाया कि कैसे प्रत्येक वस्तु को—कनेरी चिडिया को, बिल्ली के बच्चे के मुलायम बालों को, वृन्त पर झूलते हुए गुलाब को, जिसकी पंखुड़ियों मे ओस-कण ढुलक रहे हों, पालने मे पड़ी हुई अपनी एक वर्ष की बहिन मिल्ड्रेड को—कैसे धीरे से हाथ लगाना चाहिए। कोमल स्पर्श का महत्त्व मुझे एक कबूतर के बच्चे की मृत्यु से अवगत हुआ, जिसको—मुझे यह स्मरण कर दु:ख होता है—हैलेन ने मात्रा से अधिक चुगा दिया था। और अध्यापिका ने एक बार हैलेन को एक झीगुर को एक वायु-रहित बक्स मे बन्द कर गाने के लिए बाध्य करने के 'लिए हृदय-हीन रूप से तग करते हुए पकड़ा। (वस्तुतः हैलेन समझती थी कि क्योकि इसमे कोई कोमल अंग नही है, इसलिए इसमे चेतना का अभाव है।) यदि ऐन सलिवॉ इस प्रकार की निगरानी न रखती तो न जाने कितने कोमल प्राणी इस बच्ची के उजड्डपन से आहत होते या भयभीत किये जाते।

हैलेन को ठीक तरह से बैठना और खड़ा होना और सुन्दर ढंग से चलना सिखाने के अतिरिक्त, अध्यापिका को वे सब सावधानियाँ रखनी पड़ी, जो कि बहुत से माल-पिताओं को अपने बच्चों से उनके कानों के पीछे का मैल साफ कराने, उनसे बालों पर कंघी और ब्रश कराने और उन्हें साफ कपड़े पहनवाने में अपनानी पड़ती हैं। इसमें बहुत समय लग गया क्योंकि हैलेन को अंग-विन्यास की कोई कल्पना न थी और वह अपने ढंगों को निरन्तर सुधारा जाना पसन्द न करती थी। इस शैतान बच्ची को सुधारना बहुत कठिन था। हैलेन को अपनी दादी के, जिसे वह पसन्द नहीं करती थी, चिकोटियाँ भरने से रोकने के लिए अध्यापिका को उसकी बहुत मिन्नतें करनी पड़ीं। हैलेन के से स्वभाव की बच्ची पर शक्ति का व्यय करना, शक्ति का दुरुपयोग करना ही था और

ऐन एक या दो साल तक उसकी हरकतो को सहन करती गई। परन्तु जब इस शैतान बच्ची की उन आदतों को सुधारने का प्रयत्न किया जाने लगा, जिनके कारण बच्चे बहुत ही भद्दे बन जाते हैं, तब तो इसकी जिद्दीपन अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया। हैलेन अपने नाखूनों को दाँतों से कुतरा करती थी और एक दिन जब वह ऐसा कर रही थी, मनुष्य के रूप में मानो एक बवण्डर उसके ऊपर टूट पड़ा जिसने उसके कानों को खूब गरम किया और उसके हाथों को पीठ के पीछे बाँध दिया, जिससे वह नाखूनों को दाँतों तक न ले जा सके। हाथ बँध जाने पर, हैलेन की अपने विचारों को व्यक्त करने की इच्छा बहुत तीव्र हो उठी जिससे कि वह अपने इस पीडक दैत्य से लडने में समर्थ हो सके। इस प्रकार हाथ बाँधे जाने से हैलेन को इतनी तकलीफ नहीं हुई जितनी कि ऐन को जो कि इसके बाद पढ़ने या अन्य किसी काम में मन लगा पाने मे असमर्थ होने के कारण कमरे मे चहलकदमी करती रही।

इससे मुझे हैलेन के एक दूसरे अपराध की याद आती है और वह यह कि मुँह से बोलना सीख लेने पर भी वह अपने आप मे अपनी उँगलियों पर शब्दों के हिज्जे करती रहती थी इस आदत को छोड़ देने के लिए अध्यापिका की झिड़कियो, मिन्नतो और दूसरे बच्चो के उदाहरण देने का कोई भी फल न हुआ, परन्तु इसी बीच मैंने पढा कि अच्छी या बुरी आदते सूत-सूत जोड़कर बनाये गये ऐसे मजबूत रस्से के समान होती हैं, जिसे तोडा नहीं जा सकता। इसके बाद मैंने अपने मन में निश्चय कर लिया कि मैं हिज्जे करने की इस आदत को रोक दूँगी जिससे कि यह इतनी मजबूत न बनने पाये कि मैं इसे तोड़ न सकूँ, और इसलिए मैंने अध्यापिका से कहा कि वह मेरी उँगलियों को कागज में बाँध दे। उसने ऐसा कर तो दिया, परन्तु मेरे कष्ट का ध्यान कर उसे बहुत दुःख हुआ और वास्तव में वह रो उठी। अनेक घंटों तक दिन-रात मै अत्यन्त कष्टपूर्वक उन शब्दों को मुँह मे बनाती रही, जिनसे मेरा अन्य लोगों के साथ सम्पर्क स्थापित हो सकता था। यह प्रयोग सफल रहा, सिवाय इसके कि आज भी मैं उत्तेजना के क्षणों में या नीद से उठने के बाद अपने आपको उँगलियों पर हिज्जे करते पाती हूँ।

आइये, हम फिर उन पहले दो वर्षो की ओर लौट चलें जब कि अध्यापिका ने मेरे निर्माण में परिश्रम किया। किसी-किसी दिन हैलेन अपने पाठ पर पर्याप्त ध्यान नहीं देती थी या वस्तुओं अथवा गतियों को पर्याप्त ध्यान से नही देखती थी। उसे अँगूठियाँ पहनने का शौक था और ऐसे दिन अध्यापिका उससे

अँगूठियाँ निकाल लेती और उसे तब तक कोने में खड़ी रखती जब तक वह यह न समझ लेती कि शिष्या को पर्याप्त दण्ड मिल गया है। जब हैलेन इतने शब्द सीख चुकी कि वह भले बुरे मे भेद कर सके, तब इसके बाद वह जब कभी कोई गलत काम करती, अध्यापिका उसको एक शरारती बच्चे की तरह बिस्तर पर लिटा देती। सुस्ती, लापरवाही, गन्दगी, टालने की लत ये दोष हैलेन के आचरण में बसे हुए थे, जिनका अध्यापिका ने बड़ी सूझ-बूझ, विनोद और शिक्षापूर्ण व्यंगों के द्वारा सामना किया। अपनी सफाई ढूँढ़ना एक दूसरा दोष था जिसके साथ अध्यापिका हैलेन की तरुण अवस्था तक टक्कर लेती रही और जो आज भी कभी-कभी मुझ पर हावी हो जाता है। मै इन सब बातों का उल्लेख इसलिए कर रही हूँ, जिससे दूसरे लोगों को उन दिक्कतो और कठिनाइयो का आभास मिल जाय जो अध्यापिका को मेरे कारण उठानी पड़ी।

मै समझती हूँ कि इस समय अध्यापिका अपनी स्थिति का उन जड़ों के समान अनुभव करती थी, जो अन्धकार और शीत में फूलों के कोमल तन्तुओं का निर्माण करने में जुटी रहती है और मेरी यह एक बड़ी प्रिय स्मृति है कि अध्यापिका कहा करती थी कि उसके जीवन का यह काल एक ऐसा काल था जो आनन्द और सन्तोष से अत्यधिक पूर्ण था। उसे एक केन्द्र मिल गया था, जिस केन्द्र से उसका व्यक्तित्व प्रकाश और शक्ति-विकीर्ण कर सकता था। निर्धन, आधी अन्धी और अपने आदर्शों एवं विचारों मे एकाकी अध्यापिका ने अपनी आत्मा को उन अन्य अध्यापकों की ओर प्रेरित किया जिन्होंने अज्ञान, बर्बरता और बन्धनों के अन्धकार को भंग किया था। वह अनुभव करती थी कि अपने युग से उनकी निर्लिप्तता में और दूसरों के लिए बौद्धिक मुक्ति प्राप्त करने की उनकी सफलताओं मे वह भी उनके साथ-साथ रह रही है और उनके आत्म-निग्रहपूर्ण जीवन से प्रेरणा लेकर वह शक्ति का अनुभव करने लगी।

वह कभी भी उस प्रकार की "स्कूल-मास्टरनी" नही थी, जैसा कि मैंने उसे कुछ लेखों में चित्रित किया गया पाया है। वह एक प्राणवती युवती थी जिसकी कल्पना, नन्ही हैलेन के साथ प्राप्त सफलताओं से, एक बहरे-अन्धे प्राणी को एक उपयोगी, सामान्य मानव के रूप में ढालने के अद्वितीय स्वप्न से दीप्त थी। इन स्वप्नों से उद्दीप्त उसके शब्द इस बच्ची के हाथों पर ज्योतिर्पिण्डों के समान ढुलकते थे और उसमें नई दिशा में बढ़ने की प्रेरणा की चमकती हुई लकीरें खीच देते थे।

आज तक भी मै अपने हथेली पर अध्यापिका की उँगलियो के बिजली जैसे स्पर्श को याद किये बिना अपनी चेतना का उपयोग नही कर पाती और न अपने मन को कार्य के लिए उद्‌बोधित कर पाती हूँ। मेरी जो अविचारपूर्ण प्रशंसा की जाती है उससे खिन्न होकर मै उन लोगो की प्रशंसा मे आनन्द का अनुभव करती हूँ, जिन्होंने ऐन सलिवॉ के, एक जीवन को तिहरे विनाश से बचाकर उसको रूप और सौन्दर्य प्रदान करने के आविष्कारपूर्ण प्रयत्नों को देखा है। यह कोई छोटा काम न था। हैलेन की बुद्धि को किसी दैवयोग से मुक्ति नहीं मिली अपितु यह तो अध्यापिका के रूप में एक अवतारी आत्मा की अन्तर्दृष्टि और अध्यापिका की बुद्धि को आन्तरिक अग्नि से प्रदीप्त करने की एक जन्म-जात शिक्षक की-सी क्षमता थी जिसने हैलेन की बुद्धि की कुंठा को समाप्त किया। विनम्रतापूर्वक मै इस पुस्तक में अपने दोनो के सामूहिक संघर्षो और विजयों को मामूली चमत्कारों का रंग न देकर भगवान् द्वारा आदिष्ट और उसके स्वर्गीय प्रेम के द्वारा घटनेवाली मानवीय घटनाओं का गौरव प्रदान करने की आशा करती हूँ।

आँखों की ज्योति विकृत होने पर भी, अध्यापिका की वह चेतनाएँ जिनका आँखे और कान प्रतिनिधित्व करते है, जागरूक और उन्मुक्त रही। हैलेन के साथ ऐन ने जो कुछ काम किया उसके प्रधान तत्व थे उसकी शुद्ध अँगरेजी और सौन्दर्य-प्रेम, साहित्य, चरित्र और सम्भाषण मे श्रेष्ठता प्राप्त करने की उसकी उत्कट इच्छा, उसकी अल्पशिक्षा, उसकी सामाजिक असमानता की अनुभूतियों, उसकी आर्थिक कठिनाइयों और उसके उग्र स्वभाव पर विजय पा गई थी। अपने बचपन से लेकर पूर्णत: अन्धे हो जाने के समय तक, जब कि वह दूसरों पर आश्रित बना दी गई, उसने अपने विरुद्ध जुटी हुई परिस्थितियों से जो संघर्ष किया उसे कौन नाप सकता है? उसे स्वयं अपने मे और अपने चारों ओर विद्यमान अनेक बाधाओ को ठेलना पड़ा होगा। एक भूखे दिमाग को सामान्य भाषा और ज्ञान की खुराक पहुँचाने के लिए स्वयं ही आँखे और कान गढ़ने में तत्पर अध्यापिका को अपनी शिष्या के व्यक्तित्व की प्रबल आवश्यकताओ के सामने झुकना पड़ा। यद्यपि उसके व्यक्तित्व में भी वे भ्रमपूर्ण प्रवृतियाँ थीं जो इस संसार में सभी में स्वभावत: होती हैं, फिर भी वह उन स्त्रियों में से न थी, जिनकी ऐमील ने प्रशंसा करते हुए भी इसलिए आलोचना की है क्योंकि वे "भलाई अपने ही ढंग से करना चाहती है।" वह भलाई को केवल भलाई के लिए चाहती थी, वह ऐसी भलाई करना चाहती थी जो उसकी शिष्या के

जीवन में अत्यधिक फलदायी सिद्ध हो। मै उसके उस विश्वास और लगन से और भी प्रभावित हूँ जिससे मेरा उद्धार संभव हो सका और मानो मेरे रूप में उसने एक दूसरे यूरीडायस का अन्धकारमय मौन की नारकीय (प्लूटो-नीय—प्लूटो नरक का अधिदेवता माना जाता है) छायाओं से बचा लिया हो। वह किसी दूसरे क्षेत्र में भी प्रसिद्धि प्राप्त कर सकती थी और मुझे आज भी आश्चर्य होता है कि क्यो वह आधी शताब्दी तक मेरे साथ टिकी रही।

स्वभावत. नन्ही हैलेन अध्यापिका को ज्ञान देने की मनोमुग्धकारिणी क्षमता-युक्त एक स्नेही व्यक्ति के रूप में ही जानती थी। ऐन ने टिवक्स्बरी की दानशाला में बिताये अपने वर्षो की छाया कभी भी इस सामान्य परि-स्थितियों मे बढती हुई बच्चो पर नही पड़ने दी। वह अपने इस रहस्य को तब तक छिपाये रही जब तक कि वह चौसठ वर्ष की और मै पचास वर्ष की न हो गई। परन्तु मेरे बचपन के दिनो मे वह मुझसे अपने जन्मस्थान मैसाच्युसेट में फीडिंग हिल नामक गॉव के बारे मे और अपने छोटे भाई जिम्मी के बारे में, जिसकी मृत्यु से उसको हार्दिक दु:ख हुआ था, खुल कर बाते करती थी। उसके परिवार के विषय में मेरे उत्सुकतापूर्ण प्रश्नो के उत्तर मे वह मुझे अपनी बहन मेरी तथा अपनी अन्य परिचित लडकियों के विषय में कहानियॉ सुनाती और आयर्लैण्ड के लोगो के विषय की वे कथाएँ सुनाती जो उसने अपने पिता से सुनी थीं। इस प्रकार इस एकाकी नारी और इसकी शिष्या में सहानुभूति का एक दूसरा सुन्दर सम्बन्ध स्थापित हो गया।

ऐन ने कभी अपने मुँह से अपने एकाकीपन की शिकायत न निकलने दी, प्रत्युत जब मैं उन प्रारम्भिक वर्षो का स्मरण करती हूँ, मै ऐन के उस विश्वास से प्रभावित हुए बिना नही रह पाती, जिसको लेकर वह उस निर्माणकारिणी अग्नि के बीच चलती रही, जो अग्नि व्यर्थ की सामग्रियों में से भी सामान्य व्यक्तियों का निर्माण कर देती है। वह एक ऐसे क्षेत्र का अन्वेषण कर रही थी, जिसने उसमें साहसिकता, नि.स्वार्थ इच्छाओं और महान् कार्य करने की उच्चाभिलाषाओं की अन्त:प्रेरणाएँ जागृत कर दीं। इससे पहले किसी ऐसे व्यक्ति का उल्लेख नही मिलता जिसने किसी बहरे-अन्धे प्राणी को (जैसा कि हैलेन को परिस्थितियों ने बना दिया था) अल्पांश से भी अधिक परिमाण में एक सामान्य प्राणी की सी स्थिति प्राप्त करने मे समर्थ समझा हो, और देखिए, इधर ऐन सलिवॉ थी जो इस स्वप्न के अग्निमय पंखों पर आकाश में तैर रही थी! कैसे उसकी कल्पना में यह स्वप्न समाया

और क्यो वह अपने जीवन भर इस लक्ष्य को जिसे वह "पूर्णता" कहती थी बनाये रही, मै नही जानती, परन्तु उसकी उँगलियों पर मै उससे जो सूचनाओं के टुकडे पकड सकी, उनसे मै जानती हूँ कि उसके मन मे एक स्वर्गीय शिशु की एक सुन्दर और शोभायुक्त कुमारी की भाग्यहीनो का स्वाभाविक ध्वनि में पक्ष-समर्थन करती हुई युवती की रंगीन कल्पनाएँ जो कभी चमक उठतीं और कभी निराशा से धुँधली पड जाती, समाई हुई थी तथा और भी अनेक प्रतिमाएँ उसके मन में बसी हुई थी जिनको वह प्रत्यक्ष न कर सकी और उसकी इस विफलता का स्मरण कर मेरी आँखो में ऑसू उमड़ आते है। जैसे मै अनेक बार वृक्षों पर फीतो के समान झूलती हुई मंजरियो के स्पर्श से मुग्ध हुई वैसे ही ऐन की स्वयं मेरी पूर्णता के हेतु सँजोई हुई उदारतापूर्ण उच्चाभिलाषाओं की सुन्दरता की स्मृति मुझे मुग्ध और अवाक् कर देती है। अपनी कल्पना में वह प्रत्येक पालने में इस आशा से झाँका करती थी कि कही उसे मानवता का कोई नया शानदार संस्करण दिखाई दे जाये। सचमुच उसमें और "ए-ई" में, जिसकी कविताओं को मै प्रायः उसके हाथ में देखा करती थी, कोई आध्यात्मिक सम्बन्ध रहा होगा। इन दोनों ने ही स्वप्नों द्वारा सौन्दर्य, शुद्धता और आनन्द की सीढियाँ चढ़ी थी, जिन्हे कैसी भी विरोधी परिस्थिति इनसे अलग न कर सकी। मै हृदय से प्रार्थना करती हूँ कि वह "दूर-दूर भागने वाला सौन्दर्य" जिसके पीछे वह इतनी व्यग्रता से पडी रही थी, हमेशा उसके साथ रहे। मैं समझती हूँ कि भौतिक सौन्दर्य के प्रति उसके प्रेम का स्रोत सुन्दरता का यही आदर्श था।

ऐन सलिवाँ का जन्म सुसंस्कृत वातावरण, सुनियमित जीवन तथा कलात्मक एवं बौद्धिक आत्म-प्रकाशन के लिए हुआ था। काम के प्रति उसमें अभिमान था, क्योंकि उसकी दृष्टि में मनुष्य का गौरव उसके कामों में निहित है और इसलिए वह यह सहन नही कर पाती थी कि कोई काम खराब किया जाय। मनुष्यों में या किसी जगह पर किसी प्रकार की भी गन्दगी से उसे बड़ा कष्ट होता था, विकृत रूप से उसे घृणा थी, यद्यपि उसका करुणापूर्ण हृदय विकृत रूपवाले लोगो की परिचर्या के लिए तत्पर रहता था। हीन बनानेवाली निर्धनता को किसी भी रूप में देखकर उसकी ऑखो को बहुत कष्ट होता था, और मैंने उसको रात-रात भर इस पर विचार करते हुए और इसको दूर करने के उपाय सोचते हुए देखा है। सजीले चेहरों, प्राकृतिक दृश्यों की सुषमा तथा कला में सौन्दर्य उसकी भावनाओं को इतना प्रभावित कर देते थे कि कभी-कभी तो सचमुच उसके ऑसू निकल आते थे। किसी सुन्दर पात्र या किसी सुरुचिपूर्ण

शिल्पयुक्त मूर्ति के टूटने से उसे आघात पहुँचता था, और वह ऐसी क्रुद्ध हो उठती थी जैसा कि मैडम क्यूरी अपने किसी अन्तवासी पर प्रयोगशाला में काम करते समय किसी मेज को गन्दी कर देने पर होती थी। मुझे प्रारम्भ के एक दिन की याद है जब ऐन बोस्टन मे एक दुकान में गई जहाँ वह एक फर-लगी खूबसूरत मखमली टोपी पर इतनी रीझ गई कि उसे खरीदने पर तुल गई और इस पर उसने अपनी छोटी सी तनखाह खर्च कर दी। मै उसके साथ थी और उसका समर्थन कर रही थी। उसने पर्किन्स इन्स्टीट्यूट लौटते हुए, जहाँ हम उन दिनों ठहरे हुए थे, सारे रास्ते भर उस टोपी को पहना, और मुझे यह याद कर हँसी आती है कि इस लड़कियों जैसी फजूलखर्ची के लिए, जो अध्यापिका की सौन्दर्य की चाह और उसके अपने कमाये हुए धन के उपयोग में अभिमान के कारण हुई थी, हमे कैसी झिड़कियाँ सुननी पडी।

इन अप्रासंगिक बातों का वर्णन मैने अध्यापिका की प्रकृति के, उस प्रकृति के जो उसके कार्यो की प्रेरक शक्ति थी, विभिन्न पक्षो को स्पष्ट करने के लिए किया है। यदि उसमें श्रेष्ठता प्राप्त करने का यह प्रेम न होता तो वह रास्ते से दूर एक कोने मे बसे हुए गाँव मे अपने जीवन के उदास क्षणो में भी अपने काम पर जुटी न रह पाती। कभी-कभी वह विचलित हो जाती थी और मुझे हिज्जो की विधि से बताती थी कि उसे प्रत्येक वस्तु कितनी व्यर्थ लग रही है। मै आगे उसके जो शब्द उद्धृत कर रही हूँ उनमें जो लम्बा शब्द (मोनोटोनस) आया है, वह नन्ही हैलेन को प्रसन्न कर देता था। अध्यापिका कहती थी "आये दिन यहाँ कुछ भी नवीन घटना नही होती और जीवन ऐसा विरस (मोनोटोनस) हो गया है जैसा कि "ह्विपपुअरविल एक जंगली जन्तु का गीत"। परन्तु अध्यापिका का दृढ़ निश्चय उसके कार्यो में उसके स्वप्नों का सौन्दर्य और उसकी प्रतिदिन की अनुभूति स्निग्धता को उतारने में सहायक हुआ। यह है उस रहस्य का एक अंश जिसके द्वारा उसने मेरे लिए ऐसा आनन्दपूर्ण बचपन उत्पन्न कर दिया, जो आज भी मेरी स्मृति का प्रिय विषय है।

मेरे पास आने से पहले अध्यापिका ने स्वयं को एक प्राणी का अन्धकारमय मौन से उद्धार करके सर्वथा अपरिचित कार्य के लिये, तैयार करने के लिये अपनी इस नवोदित कल्पना को डा० सैमुएल ग्रिली के लोरा ब्रिजमैन के साथ किये कार्य के विवरण के अध्ययन से शिक्षित कर लिया था। इस समय भी वह एक समय में केवल थोड़ी ही देर तक पढ पाती थी और बीच-बीच में उसे जबरदस्ती लम्बा विश्राम लेना पड़ता था। अब अपने निरन्तर बढते हुए कार्य के साथ-साथ वह अपनी आँखों का निर्दयतापूर्वक दुरुपयोग करने लगी,

परन्तु नन्हीं हैलेन बहुत समय बाद ही समझ पाई कि उसके लिए पढ़ने में अध्यापिका को अपनी आँखो पर कितना जोर डालना पड़ता था। कभी-कभी हैलेन उसको मिचली या सिर-दर्द के कारण बिस्तर पर लेटी हुई पाती, परन्तु अध्यापिका ने अपनी आँखों के विषय मे कभी भी नही बताया। जैसे ही उसकी पीड़ा शान्त होती, वह उँगलियों पर हिज्जे करना आरम्भ कर देती। हैलेन को यूनानी पुराण-कथाएँ सुनाती और उसको सुझाती कि किस प्रकार वे दोनों इन कथाओ के प्रत्येक पात्र का अभिनय कर सकती है। जब वह स्वस्थ हो जाती, वह और हैलेन मिलकर कोई खेल शुरू कर देती, जिसमें वे पर्सीफोन और प्लूटो या आर्गोनाट्स का अथवा पर्सीयूस और एरिएद्ने या बोदीसिया तथा उसे रोमन विजेताओं का अभिनय करतीं।

हैलेन तब नौ साल की थी, जब ऐन ने उसको पहली बार अपनी आँखो की पीड़ा की गम्भीरता के विषय मे बताया और उससे कहा कि उसे कुछ समय के लिए बोस्टन मे अपने नेत्र-चिकित्सक के पास जाना पड़ेगा। तब भी हैलेन उसके कहने का अर्थ न समझ सकी। उसने सोचा कि आँखें जल्दी ही ठीक हो जायँगी। तब वह अनुभव न कर सकी कि ऐन को अपनी आॅखों की और अधिक चिन्ता करनी चाहिए और न तब वह यही समझ सकी कि ऐन अपनी आँखों के विषय में किसी प्रकार की सावधानी नही रख रही है।

जब आॅखो की वेदना फिर से उभड आई, तब हैलेन पूछती रहती, "तुम्हारी आॅखों में ऐसी पीडा क्यो होती है?"

"ओह, बहुत से कारण हैं," ऐन उत्तर देती, "लाल धरती पर चमकता हुआ सूर्य इनके लिए नहीं है" या "कल मैने लिखने में बहुत समय लगा दिया था।"

परन्तु कुछ दिनों बाद ही हैलेन ने उसको एक किताब को अन्य लोगों से भिन्न प्रकार से अपने चेहरे को बिल्कुल पास सटाये हुए पकड़ लिया और पूछा, "अध्यापिका, तुम किताब को बिल्कुल आँखों से सटाकर और सिर को एक सिरे से दूसरे तक हिलाते हुए क्यों पढ़ती हो?"

तब अध्यापिका ने स्वीकार किया कि उसकी दृष्टि कितनी अपूर्ण थी। "हैलेन, तुम चिन्ता न करो," उसने कहा, "मै प्रसन्न हूँ क्योंकि मै पढ़ सकती हूँ और इतना देख सकती हूँ कि आकाश, पृथ्वी और जल के रंगों का आनन्द उठा सकूँ और सब जगह अपना रास्ता देख सकूँ।" उसने आगे कहा, "मैं सबसे अच्छी तरह से सबेरे देख सकती हूँ, जब प्रकाश बहुत तेज रहता है।" तब हैलेन समझ पाई कि अध्यापिका को सबसे अधिक जिस वस्तु की आवश्यकता

है, वह है अपनी आँखों को आराम देना और उसने निश्चय किया कि वह उसको किताबों मे केवल सबेरे के समय ही उलझने देगी और उसके बाद उसको खेल में घसीट लेगी। परन्तु एक बार हैलेन ने ऐन को दोपहर के बाद भी पढ़ते पाया और उसने उसकी बाहो को झिझोड दिया। वह तो उसके हाथ से किताब छीनकर दूर पटक देना चाहती थी, परन्तु उसको भय था कि इस प्रकार कही वह किसी और को चोट न पहुँचा दे। अध्यापिका को मानना पडा कि "मै एक भी पक्ति नही देख पा रही हूँ।" हैलेन ने उसको भोजन के समय तक के लिए बिस्तर पर लिटा दिया।

बहुत वर्षो बाद ही हैलेन समझ पाई कि ऐन शिक्षण-पद्धति सम्बन्धी विषयों पर सूचनाएँ प्राप्त करने के लिए, स्वयं का सुधार करने के लिए और केवल कभी-कभी ही मनोरंजन के लिए अपनी दृष्टि पर सहनशक्ति से अधिक जोर डाल रही थी। अध्यापिका ने अपनी अभिलषित निधियों को प्राप्त करने के लिए पढ़ने मे अपनी दृष्टि को प्राय समाप्त कर दिया था। वह केवल ज्ञान की ही इच्छुक नही थी, अपितु वह स्वयं अपने और हैलेन के लिए भी बढिया से बढ़िया अँगरेजी तथा उन सहस्रों छोटी-मोटी शालीनताओं एवं सुविधाओ को भी हस्तगत करना चाहती थी, जिनमे वास्तविक संस्कृति और परिष्कार प्रति-फलित होते है। एक रूप में वह और हैलेन एक साथ बढ़ते हुए शिशु थे, परन्तु ऐन को अपनी शिक्षा की त्रुटियो पर संकोच होता था जब कि हैलेन अपने पाठों के बीच नाचती फिरती थी और खेल में अपने हृदय का आनन्द उँडेल देती थी।

जब मुझे याद आता है कि किस प्रकार अध्यापिका ने असंख्य प्रकार से अपनी आँखो को मेरे लाभ मे लगा दिया था तब उसकी आँखे मुझे उन "सुकुमार वायवीय सुन्दरियों" के समान प्रतीत होती है जो इतनी कोमल थी कि उसके निरन्तर, कष्टसाध्य आदेशों को पालन का भार सहन न कर पाती थी और अपने किसी अपराध के न होने पर भी कष्ट पाती थीं। उसकी आँखे असमान थी—एक आँख दूसरी से अधिक देख पाती थी, और इसलिए उसकी दृष्टि यथोचित रूप से किसी पदार्थ पर केन्द्रित न हो पाती थी। फिर भी, यद्यपि उनसे कठोर परिश्रम कराया जा रहा था और उनका बुरी तरह उपयोग किया जा रहा था, वे अपने कार्य को सुचारु रूप से करने का प्रयत्न करती थी। विश्राम की उत्कट इच्छा से दहकती हुई ये आँखें प्रकाश का साक्षात्कार करती थीं, जिससे वह घर से बाहर शोभा के क्षणों को आत्मसात् कर सके या वे किताबों पर कष्टपूर्वक दौडती थी जिससे वह मानव-हृदय की गहराइयों अथवा कविता के उन कुसुमों से जो

अपने सौरभमय तन्तुओ और अपने स्वर्गीय रंगो को
सदैव शाश्वत ओसकणों से सद्य.स्नात
रखते है, अपनी आत्मा को आलोकित कर सके।

नन्ही हैलेन ऐसी अनुभूतियों पर दीर्घकाल तक विचार नही करती थी, परन्तु जैसे-जैसे वह तरुणाई की ओर बढ़ने लगी, अध्यापिका की ऑखों की चिन्ता उसके हृदय को अधिकाधिक भाराक्रान्त करने लगी और सबसे अधिक कठोर बात तो यह थी कि इस वेदना से अध्यापिका को छुटकारा दिलाने में अपनी असमर्थता का ज्ञान उसे चुप रह जाने के लिए बाध्य कर देता था।

फिर भी, जीवन के प्रति अध्यापिका के आनन्दमय एवं उत्साहपूर्ण दृष्टिकोण ने उसको अपने काम और निराशा के बीच ऐसा सन्तुलन बनाये रखने मे समर्थ बना दिया था, जिससे उसका उत्साह अक्षुण्ण बना रहा। यद्यपि उसकी प्रकृति किसी प्रकार भी शान्त नही थी और उसकी बेसब्री हैलेन या किसी और मे सुस्ती का आभास पाकर फूट पडने को हो जाती थी, फिर भी वह सूक्ष्म परन्तु आवश्यक बातों पर विचार करते समय या हैलेन की प्रगति की मंदगति देखकर यथोचित धैर्य रखने मे अपने मन को शान्त और स्वच्छ बनाये रखने में समर्थ थी। तब से मेरी यह धारणा बन गई है कि अध्यापिका ने और अधिक समय तक अकेले रहना पसन्द किया होता, जिससे वह अपनी शिष्या को जनता की दयापूर्ण परन्तु साथ ही अविचारपूर्ण परिवर्तनशील मन.स्थिति का सामना करने के लिए अधिक अच्छी तरह से तैयार कर सकती।

उदाहरण के लिए मैं पेंसिल से लिखने की घटना को लेती हूँ। पहले तो हैलेन को अन्धो के लिए विशेष रूप से बने राइटिंग-बोर्ड के खानों में अक्षर बनाने में बड़ा आनन्द आया, परन्तु कुछ महीनो के बाद उसके मन में इस कार्य के प्रति गहरी अनिच्छा ने घर कर लिया क्योकि मित्रो और सम्बन्धियों के लिए उससे इतने अधिक हस्ताक्षर और पत्र मॉगे जाने लगे कि इनको लिखते-लिखते उसके हाथ थक जाते और पेसिल को कसकर पकड़ने से उसके अँगूठे पर छाले पड गये। अब मुझे स्मरण कर बड़ी हँसी आती है कि यह लिखाई हैलेन के मार्ग मे एक शेर की तरह आ पड़ी थी—और मुझे उसके लिए खेद भी होता है। अध्यापिका का हैलेन को लिखने के मेज के सामने बैठाना और उसको लिखने का अभ्यास करने के साथ-साथ "सोचने" का सुझाव देना, यह सब कितनी करुण और हास्यास्पद बात थी। हैलेन की बुद्धि घोंघे के समान अपने खोल में ही घुसी रहना चाहती थी और स्वत: कोई विचार या प्रश्न उत्पन्न करने से मानो इनकार कर देती थी, और मुझे यह सोचकर

बड़ी लज्जा आती है कि हैलेन तब कागज पर कैसी बेवकूफियाँ उतारा करती थी।

एक दिन जब हैलेन को एक ऐसे कमरे में लिखने का अभ्यास करने के लिए रख दिया गया था, जहाँ ताजे पकाये हुए गरी के केक एक मेज के ऊपर सुखाने के लिए फैलाये हुए थे और माँ तथा अध्यापिका अगले दिन हैलेन के जन्म-दिन की तैयारियों में लगी हुई थी, उसके हृदय में विद्रोह की ज्वाला धधक उठी। केक उसको इतने लालायित कर रहे थे कि वह अपने आपको वश में न रख सकी और जब वह दो या तीन केक हड़प चुकी तब उसका मन शान्त हुआ और वह फिर से लिखने के अभ्यास मे जुट गई। परन्तु जब लोग उससे अपने लिए लिखवाने के लिए उसे तंग करने लगे तब तो वह अपने आप को नियन्त्रण में न रख सकी और चीखने-चिल्लाने लगी। इस पर अध्यापिका ने उसके हाथ मे गोदते हुए कहा, "ओ कृतघ्न, भाग्यहीन, इन लोगों ने तो तुझ पर कृपा की है, मुझे तुम्हारे कारण लज्जा उठानी पडती है।" परन्तु हृदय में वह हैलेन के पक्ष मे थी और उसने लोगो का आना-जाना बन्द करवा दिया, केवल कभी-कभी जब कोई विशेष आग्रह करता तब ही वह उसे मेरे पास आने देती। बाद मे अध्यापिका ने मुझसे कहा कि उसे इस बात का बहुत खेद था कि उसने लिखने के अभ्यास में व्यर्थ ही मेरा इतना समय गँवाया और बाद मे जब मैं टाइप करना सीख गई, तब तो मैंने इसे बिलकुल ही छोड़ दिया।

हैलेन के विचार-प्रवाह को उत्तेजित करने के लिए ऐन ने उसको लौगफेलो की "हियावाथा" कविता, "एवेजे-लाइन" कविता के कुछ अंश और ब्रियेंट की "टु ए वाटरफाउल" जैसी कविताएँ याद करने के लिए उत्साहित किया। हैलेन को यह सोचना बड़ा प्यारा लगता था कि पद्य और संगीत—ये दोनों सहजात बहनें उसके शुद्ध उच्चारण के मार्ग की बाधाओं को दूर कर देगी और अध्यापिका को भी ऐसी ही आशा थी। अध्यापिका किसी ऐसी विधि के लिए बहुत ही बेचैन थी जिसके द्वारा वह अपनी शिष्या को स्वाभाविक वाणी का उसी प्रकार बोध करा सके जिस प्रकार वह उँगलियों पर भाषा का ज्ञान कराती थी। उसकी इस भावना को व्यक्त कर सकने के लिए हैलेन को बहुत बाद मे शब्द मिल गये, उसके शब्दों में किसी प्रकार की भाषा के बिना कोई मनुष्य नहीं बन सकता और वाणी के बिना कोई पूर्ण मनुष्य नही बन सकता।" बहरों की शिक्षा मे वाणी के गम्भीर महत्त्व का आभास ऐन को अन्तःप्रेरणा से हो गया था और बोलने की शक्ति प्राप्त करने के लिए हैलेन की उत्कण्ठा ने मिलकर उन दोनों को इस दिशा में अप्रतिहत

गति से आगे बढाया। बोस्टन में कुमारी साराह् फुलर के साथ मौखिक भाषण के विषय में ग्यारह प्रारम्भिक पाठ पढकर, ऐन ने अपने इस नवीन कार्य को अपनी स्वाभाविक एकान्तनिष्ठा के साथ प्रारम्भ किया, परन्तु इस मार्ग पर वह चलते हुए उसे भय एवं कम्पन का अनुभव हो रहा था—ये भावनाएँ उस आत्म-विश्वास के सर्वथा विपरीत थीं जिसके साथ उसने मुझे उँगलियो की भाषा सिखाना प्रारम्भ किया था—और दु:खपूर्ण सत्य यह है कि सबसे पहले मेरे उच्चारण मे काम आनेवाले अंगों को ठीक किये बिना मुझे उच्चारण करना सिखाने मे उसने तथा कुमारी फुलर ने भारी भूल की थी। किसी प्रकार से बोध्य उच्चारण करने का प्रयत्न करते हुए मुझे उस विश्वव्यापी संघर्ष का भान हुआ जो अवरोधों के विरुद्ध करना पड़ता है और जिसमे मै आज भी संलग्न हूँ। फिर भी यद्यपि हैलेन बड़े परिश्रम से ही उच्चारण कर पाती थी और उसका स्वर कानों को अच्छा लगनेवाला न था, वह इतने भर से ही आनन्द से थिरक उठती थी कि वह शब्दों का उच्चारण तो कर सकती है। उसके आधे कारागार मे पड़े हुए से विचार अब उसकी हाथ पर शब्दों के हिज्जे करने की विधि की शृंखलाओं में बँधे न रह गये। जैसे-जैसे शब्द और शब्दार्थ मे निरन्तर बढ़ती हुई गति से उसकी वाणी मे व्यक्त होने लगे, ये शृंखलाएँ भी टूटने लगी और उसकी जिह्वा इस प्रगति के साथ कदम मिलाना सीखती गई। यह जानकर उसकी प्रसन्नता की सीमा न रह जाती थी कि उसके परिवार के लोग तथा कुछ घनिष्ठ मित्र उसकी बात समझ लेते है। हैलेन में पूर्णतर जीवन के ये लक्षण अध्यापिका को मुग्ध करने लगे और वह कहा करती थी कि हैलेन में सामान्य वाणी उत्पन्न करने के लिए वह इस जन्म और अगले जन्म के समस्त सौन्दर्य को स्वेच्छा से न्योछावर कर देगी। "ओह नहीं अध्यापिका, तुम्हें ऐसा न करना चाहिए", वह बच्ची पुकार उठती, परन्तु अध्यापिका हैलेन को पूर्ण मानव के रूप में देखने की अपनी इच्छा का दमन न कर सकी। स्वभाव से ही वह एक नवीन उद्भावनाओं की जननी, नवीन मार्ग का निर्माण करनेवाली और जीवन के पूर्णतामय मार्ग की यात्री थी। इसलिए वह मुझे ऐसा स्वर और ऐसी वाणी प्राप्त करा देने में मेरे साथ दिन पर दिन, महीने पर महीने और वर्ष पर वर्ष भर परिश्रम करती रही, जो अन्धों की सेवा करने में मेरे लिए पर्याप्त हो।

मैं यहाँ पर विस्तृत वर्णन नही करूँगी, क्योकि इन घटनाओं का वर्णन मै अपनी अन्य पुस्तकों मे कर चुकी हूँ। मै केवल इतना ही कह देना चाहती

हूँ कि अध्यापिका और मैं तब तक अपनी इस प्रारम्भिक गलती को, कि हम उच्चारण के अंगो को ठीक किये बिना उच्चारण के अभ्यास पर लगे रहे थे, नहीं समझ पाये जब तक कि बोस्टन संगीत संरक्षण मंडल (बोस्टन कन्जर्वेटरी ऑव म्यूजिक) के एक प्रसिद्ध संगीत, अध्यापक श्री चार्ल्स ह्वाइट ने बहुत कृपापूर्वक मुझे तीन ग्रीष्म ऋतुओं मे उच्चारण के पाठ नही पढ़ाये।

यह सोचकर अध्यापिका के हृदय को मर्मान्तिक आघात पहुँचा कि मेरे निर्माणकालीन वर्षो मे उसे शरीर के ध्वनि-उच्चारण-सम्बन्धी अगो का अपेक्षित ज्ञान नही था और न ही मेरे उच्चारण के सम्बन्ध मे काम करने के लिए पर्याप्त अवकाश। फिर भी अपराजेय उत्साह के साथ और श्री ह्वाइट से प्राप्त विचारो को लेकर वह मेरे स्वर को सुधारने मे लगी रही। परिश्रम के साथ-साथ वह भविष्य के स्वप्न देखती जाती थी और ऐसे धैर्य के साथ, जो मुझे आज भी अलौकिक लगता है, वह मेरे दोनो हाथो को अपने चेहरे पर रख देती थी, जिससे मै तत्काल उसके ओठो, गले और गलमुख के समस्त कम्पन को ग्रहण कर सकूँ। हम साथ-साथ शब्दो और वाक्याशो को तब तक दुहराते रहते जब तक कि मेरा उच्चारण सहज न हो जाता और मेरी हिचक दूर न हो जाती और इस प्रकार यह प्रक्रिया उसकी अन्तिम बीमारी के वर्ष तक चलती रही और हमेशा की तरह उसकी बेचारी आँखें अपना श्रमपूर्ण कार्य करती जाती थी—यह देखने का कार्य कि मै उच्चारण करते समय अपने ओठो को ठीक आकार दे रही हूँ या नही, अपने जबड़ों को यथासम्भव सरलता से हिला रही हूँ या नही और मेरी भाव-भंगिमा स्वाभाविक है या नही। इस पृथ्वी में मैं जिन परिस्थितियों से गुजरी हूँ, उनमे इससे अधिक दुखदायिनी बात और क्या हो सकती है कि मै उस व्यक्ति की इच्छा की पूर्ति में, जो एक शिक्षक और एक कलाकार का समन्वय थी, इतनी पिछड़ जाऊँ। परन्तु चाहे जैसे भी टूटे-फूटे ढंग से ही सही, बोलने में समर्थ हो जाने और अपने कुछ मित्रों को अपनी बात समझा सकने के योग्य हो जाने से मेरी सेवा करने की क्षमताएँ बहुत बढ़ गई और इस अमूल्य उपहार के लिए मै ऐन सलिवॉ की ऋणी हूँ।

४

वाणी प्राप्त कर लेने पर मैंने अपने बौद्धिक विकास की शैशव अवस्था से एक पृथक्, चेतन एवं किंचित् परिमाण में आत्म-निर्धारण की शक्ति से युक्त 'अहम्' की अवस्था में प्रवेश किया। अभी तक भी मै चंचल और किन्हीं बातों में आलसी तथा लापरवाह थी। अध्यापिका ने मुझमें इच्छा-शक्ति विद्यमान पाई और उसने कभी मेरी इस इच्छा-शक्ति का दमन करने की चेष्टा नहीं की, अपितु उसने इसको और ऊँचे स्तर पर पहुँचाने की चेष्टा की। उसने मुझ पर कोई बात लादी नहीं। जब से मैंने चीजों को तोडना-फोड़ना छोड़ दिया, उसने परिचित वातावरण में बालसुलभ मेरी उछल-कूदों के लिए मुझे पूर्ण स्वतन्त्रता दे दी। परन्तु यद्यपि उसका तरुणों की इच्छा-शक्ति की स्वाधीनता मे विश्वास था, फिर भी स्वेच्छापूर्वक अपने निर्माण में उनकी योग्यता का वह बहुत बढा-चढाकर अनुमान नहीं लगाती थी। जब मैं स्वतन्त्रता की चर्चा करने लगी, तब उसे प्रतीत हुआ कि मैं यह अनुभव ही नही कर पाती हूँ कि परिस्थितियो ने मुझे दूसरों से कितना अलग किया हुआ है। परन्तु उस समय वह कह देती, "ओह, यदि तुम (संयुक्तराज्य अमरीका के) तेरह उपनिवेशों के समान पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त कर लो तो कितनी अद्‌भुत बात हो।" परन्तु धीरे-धीरे उसने मेरी भौतिक पराधीनता के तथ्यों को मेरे सामने प्रकट किया। वह कहा करती, "मुझे तो काम कर सकने के लिए कुछ सुनने और देखने की शक्ति प्राप्त थी, फिर भी अपनी आँखो की खराबी के कारण मुझे निरन्तर दूसरों की सहायता की आवश्यकता होती है। तुम्हारे लिए यही अच्छा होगा कि तुम बड़ी होने पर जीवन की भूल-भुलैया में अपना रास्ता न भूलकर इस भूल-भुलैया के बाहर देखने का प्रयत्न करो। एरिअद्‌ने के सूत्र का, जिसके बारे में तुम मुझे सुना रही थीं, अनुगमन करो—तुममें जो भी शक्तियाँ हैं उन पर सावधानी से ध्यान दो और उनका अधिकतम उपयोग करो। याद रखो कि चाहे स्थिति जो भी हो, तुम जिस वास्तविक स्वाधीनता को प्राप्त कर सकती हो, वह तुम्हारी आत्मा और मन में ही निवास करती है।"

मैने कहा, "मै पढ सकती हूँ और मेरे हाथ जो भी किताब पड़ेगी, मै उसे निगल जाऊँगी।"

उसने उत्तर दिया, "यह स्वतन्त्र होने का एक शानदार तरीका है, परन्तु इतना ही पर्याप्त नही है। यदि तुम किताब की कीड़ा बन जाओगी तो तुमसे संसार को क्या लाभ होगा? हमें तो यह देखना है कि तुम जिन किताबो को पढ़ती हो, उनसे तुम दूसरों को कितना आनन्द दे सकती हो। लौगफेलो की "दि चिल्ड्रन्स आवर" और "दि लाइट ऑव स्टार्स" शीर्षक कविताओं को याद करो और उनको तब तक जोर-जोर से दुहराओ जब तक कि लोग तुम्हे समझने न लगे।"

तब अध्यापिका ने मुझे एक सुन्दर उदाहरण वाल्टर स्कॉट की नन्ही मित्र, की जो उमर मे मेरे बराबर थी, कथा के रूप मे दिया, जो स्कॉट की कविताओ या कविताओं के अंशों को स्पष्ट, उत्साहपूर्ण स्वर से पढ़ती थी और उसके इस कविता-पाठ से अनेक लोगों ने आनन्द का अनुभव किया था। मैंने सब प्रकार की अनेक कविताएँ याद कर ली—इनमें से कुछ सुरीली थी, कुछ ऊँचे भावों से भरी और कुछ हास्यपूर्ण थी और अपने स्वर मे इन कविताओ के सौन्दर्य को प्रतिफलित करने का अभ्यास मैंने अध्यापिका के साथ असंख्य बार किया। एक बार मुझे "एवेजेलीन" काव्य का अधिकांश भाग कण्ठस्थ हो गया था और इस पर मुग्ध होकर अध्यापिका ने मुझे कहानियो तथा कविताओ के सुन्दर-सुन्दर अशों को याद कर लेने के लिए प्रेरित किया। वह कहा करती, "कहानियों को खाली पढ़ो ही नही, वरन् उस स्वर्ण सूत्र को खोजने की चेष्टा करो जिससे तुम ज्यूस देवता की उन लँगडी परन्तु मधुर-स्वरवाली और प्रकाशभरी पुत्रियों के समान बन सको, जिन्हें यूनानी लोग "स्तुतियाँ" (प्रेयर्स) कहा करते थे। कौन जानता है, कभी तुम भी श्रोताओं को आकर्षित कर सको और उन्हें अपने कविता-पाठ से तथा इन कविताओ के उदात्त भावों से मंत्रमुग्ध कर सको।" मैंने निरन्तर प्रयत्न किया परन्तु, यह सफलता मानो निषिद्ध फलों के समान मुझ तरुण किताबी कीड़े के भाग्य में न बदी थी। अपने दैनिक पाठों और बोलने के अभ्यास के बाद मै कभी-कभी काव्यों के संसार में न जाकर "दि लास्ट डेज ऑव पौम्पिई" पढ़ने बैठ जाती। जब मेरी गोद मे किसी काव्य के अतिरिक्त कोई और पुस्तक होती तब कभी-कभी अकस्मात् आकर अध्यापिका कह उठती, "अच्छा तो तुम पकड़ी गई, पता लग गया, फँसा लिया तुम्हें" और मै दुबारा यह भूल न करने की क्षमा माँगती। कभी-कभी मै दक्षिणी गुलाबों और

बक्सों में उगाई हुई झाड़ियों की सुगन्ध का आनन्द लेते हुए, जिसे मैं कविता में सिर खपाने की अपेक्षा कहीं अधिक पसन्द करती थी, खाली बैठी रहती। तब मेरे इस आचरण से निराश और हताश होकर वह हिज्जों के द्वारा मुझे कहती, "बड़ी लज्जा की बात है! तुम्हारे पास वे पुस्तके है, जो चुने-चुने शब्दों और रोचक विचारो से भरी है और यहाँ तुम एक भावशून्य बछडी की तरह बैठी हो!" तब वह अगले दिन तक मुझसे बात न करती। परन्तु इसके बाद उसके मुख पर हँसी खिल उठती और वह कहती, "अच्छा आओ, हम उन लम्बे शब्दों का अभ्यास करें, जो तुम्हे अच्छे लगते है; तुम इन शब्दों को छोटे शब्दो की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह से कहती हो और मै पता लगाना चाहती हूँ कि ऐसा क्यों है।" मुझे अपने पाठो मे आनेवाले कुछ बडे-बड़े शब्द याद है—"एटीट्यूट" (रुख), ऑल्टीट्यूड (ऊँचाई) "कन्सिडरेब्ल" (पर्याप्त) और "पैट्रीफाइड" (पत्थर बना हुआ)। मुझे इनमे से अन्तिम शब्द एक घटना के कारण याद हो गया, जो यह थी कि एक दिन मैंने अपने गले और जीभ को इतना कडा कर लिया कि इससे अनजाने ही मैंने अध्यापिका को डरा दिया और वह चिल्ला उठी, "ओह हैलेन, ठहरो! तुम तो ऐसी दिखाई पड रही हो, जैसे तुम पत्थर बन गई हो (पैट्रीफाइड)।" जब हम कुछ देर तक इन लम्बे शब्दों का अभ्यास कर चुकते तो अध्यापिका कह उठती, "देखो हैलेन, क्या तुम कविता में वही स्वर और रुचि नही ला सकती, जो तुम इन शब्दों में ले आई हो।" कभी-कभी यह प्रेरणा काम कर जाती और कभी न कर पाती। मेरी प्रत्येक प्रगति से अध्यापिका खिल उठती, और मेरी असफलताओं पर प्रायः वह कठोर हो जाती। और एक दूसरी मारजोरी डौ (वाल्टर स्कॉट की नन्हीं मित्र का यही नाम था) बनने के प्रयत्नो में मुझे जिन अनवरत उतार-चढावों का सामना करना पड़ रहा था, वे मेरी सहन-शक्ति से बाहर थे। अध्यापिका की आँखों को निरन्तर अपने चेहरे और ओठो पर ऐसे टिके हुए देखकर, जैसे कि उसे किसी भी क्षण आँखों से हाथ धो बैठने का डर हो, मै सचमुच घबरा जाती थी। मै यह सोच-सोचकर भाव-विभोर हो उठती हूँ कि कैसे उसके विचारों, उसके कैल्त-जाति के से उत्साह और उसकी प्रकृति में भी मेरे मस्तिष्क के लिए काव्य में से एक "काष्ठ और स्फटिक की नौका" बनाने की चेष्टा की थी, जिसके सहारे मै चेतना के कारागार से दूर जा सकूँ, परन्तु यह याद कर मुझे इतना ही खेद भी होता है कि इस असम्भव को संभव बनाने के प्रयत्न में उसने अपनी आँखों और शक्ति का कैसा व्यर्थ प्रयोग किया।

यदि मै उन सुन्दर फीतों की-सी कोमलता के साथ, जिन्हे मैने ब्रिटैनी और आयर्लैंड मे देखा था, शब्द-जाल बुनने में समर्थ होती तो मै सरलता से इस कथा का वर्णन कर सकती कि कैसे मेरे सम्बन्ध में अध्यापिका का एक दूसरा स्वप्न धूलि-धूसरित हुआ। एक बार जब हम बोस्टन गये हुए थे, हमारे एक कलाकार मित्र ऐलबर्ट, एच० मन्सेल ने, जिसने मेरा एक चित्र बनाया था, मुझसे कहा, "मूर्तियों" के स्पर्श से तुम्हे जो आनन्द मिलता है, वह मैं जानता हूँ। तुम्हारे हाथों मे कला के सौन्दर्य को अनुभव करने की क्षमता है। तुम अपने मे मूर्तिकला की योग्यता का विकास करने का प्रयत्न क्यों नहीं करती? उसके इन शब्दों ने अध्यापिका और मुझमे नई क्षमताओं की खोज की संभावनाओं से, उत्साहित कर दिया। (इस समय अध्यापिका ने मुझे यह नहीं बताया था कि शल्य-चिकित्सा के द्वारा इतनी दृष्टि जितनी कि उसे मिल सकती थी, प्राप्त कर लेने के थोड़े ही दिनों बाद, उसने बरफ की एक मूर्ति बनाई थी, और मै बहुत वर्षो बाद जान पाई कि अध्यापिका में मूर्ति-कला की योग्यता थी, जो विकसित की जा सकती थी।) यह विचार उसके लिए बहुत संगीतमय था कि यदि मै अपने स्पर्श में कुछ अधिक संवेदनशीलता ला सकूँ तो संभव है कि मै प्लास्टिक की सुन्दर और अर्थपूर्ण कलाकृतिओं का निर्माण कर सकूँ। यह सोचकर वह विस्मित हो रही थी कि क्या किसी ऐसे अन्धे को, जिसमे सौन्दर्य-बोध हो, मूर्तिकला के उच्चकोटि के नमूने तैयार करना सिखाया जा सकता है, और प्रत्येक मनुष्य में छिपी संभावनाओं की खोज करने की उसकी अतृप्त आकाक्षा उसको सौन्दर्य के इस मार्ग पर ले चली। वह अपने मन में यह भी कल्पना करने लगी कि कैसे दूसरे विषयो की शिक्षा को मेरी कला की अनुभूति और निर्माण के आनन्द के चारो ओर केन्द्रित किया जा सकता है। हम दोनों ने पहले मोम और तब मिट्टी की मूर्तियाँ बनाने की शिक्षा प्रारम्भ की। प्रारम्भ मे तो मै अपनी बनाई सभी वस्तुओं, जैसे प्लेट और प्याले, टोकरियाँ, फल इत्यादि से मुग्ध हो जाती थी। अध्यापिका आशाभरी दृष्टि से देखती रहती और जब मैं किसी झाड़ी के प्रचलित नमूने या किसी पक्षी के नमूने की नकल करती होती, वह भविष्य के स्वप्न देखती। वह मुझे आदेश देती, "प्रत्येक वस्तु को ऐसे छूओ, जैसे तुम किसी फूल को छू रही हो—धीरे से, कोमलता से, बड़े ध्यान से अध्ययन करो जैसे तुम मेरी आवाज का करती हो और मिट्टी को गढ़ने में बड़ी सावधानी से नमूने की नकल करो।" मैं उसे प्रसन्न करना चाहती थी और इसलिए मै तब तक काम करती रहती जब तक कि मेरे हाथ थक

न जाते। वह मुझे मूर्तिकारों की अपनी चाही वस्तु प्राप्त कर लेने तक अपने अध्यवसाय में डटे रहने की गहरी लगन से परिचित कराने के लिए, उनकी जीवनियाँ पढ़कर सुनाती, और मैं पुनः प्रयत्न में लग जाती। परन्तु एक कृत्रिम, विशाल और अरुचिकर झाड़ी की नकल करने में मुझे मुँह की खानी पड़ी। इस झाड़ी की उन सौन्दर्यमय झाड़ियो से कोई समानता न थी, जिनका मैंने जंगलों में अनुभव किया था। अध्यापिका इस पर डटी रही कि मैं इस झाड़ी की ठीक-ठीक नकल करने का प्रयत्न करूँ। परन्तु, खेद है कि मै वैसो लगन प्रदर्शित न कर सकी, जैसी वह चाहती थी। मुझे पढ़ना इस काम से अधिक पसन्द था। वह मुझे पढने की आज्ञा न देती थी और उसने मुझे इस नीरस काम मे जोते रखा। सन्तोषजनक परिणाम प्रकट न हो सका और एक दिन सबेरे उसका क्रोध भडक उठा और उसने ठंडी, भीगी मिट्टी को उठाकर मेरे गाल पर दे मारा। परन्तु, अध्यापिका मे एक ऐसा अनिर्वचनीय स्नेह था, जिसने उसको अपने इस क्रोधपूर्ण व्यवहार का पश्चात्ताप करने के लिए सरलता से प्रेरित कर दिया और वह अपने आपको बुरे से बुरे शब्दों से कोसने लगी। इस बवण्डर के थोडे ही समय बाद वह मेरे पास आई और बोली, "हैलेन, मुझे क्षमा कर दो। मै तुम्हारी एक बहरी-अंधी के रूप में कभी भी कल्पना नहीं कर पाती—मै तुम्हे इतना प्यार करती हूँ कि ऐसी कल्पना मुझे सह्य नही है। परन्तु मुझे इतना तो ध्यान रखना ही चाहिए कि तुम एक मानव-प्राणी हो और मुझे इतनी महत्त्वाकांक्षी न बन जाना चाहिए, कि तुम्हें बीच-बीच में आराम भी न करने दूँ। "इससे अधिक द्रवित करने-वाली बात और क्या हो सकती है कि एक बुद्धिमती, स्वाभिमानिनी स्त्री एक बच्ची से क्षमा-याचना करे—जैसे राजा लियर कौर्डेलिया के सामने क्षमा-याचना के लिए घुटनों के बल झुक गया था। परन्तु ये कोमल शब्द इस विफलता के खेद को कम नहीं कर सकते कि वह मुझे उस रत्न को प्राप्त न करा सकी जिसकी सहायता से उसने अपने आपको एक मेरी जैसी जिद्दी बच्ची से बदलकर वर्तमान रूप में ढाला था। मुझे इस बात का भी कम खेद नहीं है कि मैं अपने आपको उस गौरवशाली अध्यवसाय मे सम्पूर्ण हृदय से न लगा सकी, जो संभवतः "आँखों, सितारों और पंखों से जटित है।" जीवन में बहुत बाद में मैंने कुछ मूर्तियाँ सिरों की बनाई हैं, जो कम से कम मेरे एक-दो कलाकार मित्रों को तो मेरे आध्यात्मिक आदर्शो की प्रतीक प्रतीत हुई है, और यदि इस समय मै खाली होती तो मै कम से कम अध्यापिका के संतोष के लिए और इस संतोष के लिए कि जिसको प्राप्त करने का प्रयत्न

मैं अपनी बहरी-अंधी अवस्था में न कर सकी, उसको अब मैंने प्राप्त कर लिया है, मैं इस कला के अभ्यास में अवश्य कठिन परिश्रम करती। यह अध्यापिका नही, अपितु मेरा भाग्य था या स्वयं मै ही थी, जो तब एक जिद्दी बच्चे की 'अचेतन निष्ठुरता से हठी बनी हुई थी, जिसने मेरे भविष्य का पाँसा फेंका।

५

तब अध्यापिका उन्तीस वर्ष की थी और मै पन्द्रह वर्ष की, जब मैं सुन्दरता की उपासिका के रूप में उसके व्यवसाय से भिन्न उसके व्यक्तित्व की कल्पना कर सकी। जब मै अधिक सयानी हो गई, तब वह अपनी विभिन्न मन:-स्थितियों को मुझ पर निस्संकोच प्रकट करने लगी और यही कारण था कि मैं आगे चलकर भाग्य के तूफानों का ऐसे सामना कर सकी, जैसे कि मै उनसे खूब परिचित होऊँ।

पन्द्रह वर्ष की हो जाने पर, जब मैं उसका और अधिक गहराई से अध्ययन करने में समर्थ हो गई, तब मैं समझ पाई कि उसकी मन:स्थितियाँ निरन्तर बदलती रहती है। वह कहती, "मै तुम्हे जो बतानेवाली हूँ उसे दुहराओ मत" और तब मैं उसकी उन थका देनेवाली कथाओं को सुनती कि उसको क्षुद्रतापूर्ण स्त्रियाँ कैसे अपने बुद्धिशून्य अभिनयों तथा सामाजिक मूर्खताओं द्वारा परेशान किया करती थीं। हम दोनों ने साथ-साथ जीवन के विभिन्न पक्ष देखे और प्राय: हमें महान् गुणवान् एवं प्रभावशाली व्यक्तियों की संगति मिल जाती थी जिनमें ऐसी स्त्रियाँ भी होतीं, जो मन और शरीर दोनों में ही सुन्दर होती और जिनका संभाषण अध्यापिका को मुग्ध कर देता। उसको सबसे अधिक चिढ विचारशून्य बातचीत और व्यक्तिगत परिष्कार से रहित व्यवहार एवं कार्यों से थी। वह दुर्भाग्य-ग्रस्त निर्धनों और अशिक्षित विकलांगो को क्षमा कर देती थी, परन्तु शिक्षा प्राप्त करने और सुसंस्कृत बनने के साधन होते हुए भी जो इनसे लाभ न उठायें उनको वह क्षमा नही करती थी।

अध्यापिका एक समय उदासी का भी शिकार रही, यद्यपि यह स्थिति बहुत दिनो तक न टिकी, परन्तु इसने उसमे अपने अभिन्न मित्रों के अत्यधिक कृपापूर्ण समागमों तक का अभिनन्दन न कर पाने की असामर्थ्य उत्पन्न कर दी थी। वह इन मित्रों से भागकर जंगल में चली जाती या यदि वह किसी जल-समूह के पास होती तो अपने आपको किनारे पर घंटों तक किसी नाव के

नीचे छिपा लेती। परन्तु कुछ समय बाद वह लौट आती और अपने मित्रों से क्षमा-याचना करती। एक बार जब वह ऐरीसिपिलस रोग से पीड़ित हुई तो उसने अपने आपको दिन भर सबसे, यहाँ तक कि मुझसे भी, छिपाये रखा और भोजन के समय जब उसकी खोज हुई तो माँ ने उसको अपने बिस्तर पर चुपचाप लेटे पाया। खेद है कि मुझे कुछ ऐसे मूर्खों से भी पाला पड़ा है जो ऐसे मानवीय रोगो के विषय मे जानना नही चाहते और इसलिए मै पूर्ण सत्य प्रकट नही कर सकती, यद्यपि मै कोई झूठ बात भी नही कह रही हूँ। निःसन्देह ये अन्धकारमयी मनःस्थितियाँ ऐन की युवावस्था मे पर्किन्स में प्रकट हुईं और उसकी मृत्युपर्यन्त यदा-कदा उसे पीडित करती रही और इनसे उसकी दृष्टि को भी कोई सहायता न मिली। ऐसे प्रत्येक अवसर पर वह बडी बहादुरी से इस मनःस्थिति पर विजय पा लेती और यद्यपि वह प्रायः हाथ-पैर पटकने लगती थी, परन्तु उसने अपनी बौद्धिक शक्तियों के स्वतन्त्र प्रयोग की क्षमता को कभी हाथ से न निकलने दिया और न इन शक्तियों को निद्रा के अतिरिक्त कभी निष्क्रिय ही होने दिया और उसकी वह कठोर कार्यनियन्ता बुद्धि उसकी नौका को स्वेच्छापूर्वक चलाती रही। जागने पर वह अपनी कठिनाइयो का हीरे जैसी स्पष्टता के साथ विश्लेषण करती और शीघ्र ही अपनी प्रसन्न, स्वस्थ, विनोदी मुद्रा को प्राप्त कर लेती। उसे जो चिट्ठियों का ढेर लिखना पड़ता था और जिन्हें मुझे उसके लिए टाइप करना पड़ता था, उनसे मै जान पाई कि वह अपनी बुद्धि को ऐसी बातों पर कितना अधिक टिका सकती थी, जिन बातों पर सूक्ष्मतया ध्यान देना आवश्यक होता था और ऐसी दीर्घकालव्यापी योजनाओं के निर्माण की उसमें कितनी अधिक क्षमता थी, जैसी एक योजना के फलस्वरूप मेरी कालिज की शिक्षा संभव हुई।

बहुत वर्षों बाद अध्यापिका और मै साथ-साथ आयर्लैंड गये और जब मै अपनी स्मृति मे उस देश के साथ जिसने मुझे अध्यापिका दिलाई थी, अध्यापिका की अभिन्नता स्थापित कर पाती हूँ—एक ऐसा देश जो नमी और कठोर, चमकती हुई चट्टानों से भरा हुआ है, जो सूर्य के प्रकाश से आप्लावित और परियों जैसे अंकुरों तथा हरियाली से कम्पित है, जो सक्रिय, अत्यधिक कल्पनामय, संघर्षप्रिय और व्यंग्य-निपुण लोगों द्वारा अनुप्राणित है, जहाँ प्रत्येक वस्तु में अतिशय का स्पर्श है, जहाँ ये सब गुण सामूहिक रूप से प्रकट होते हैं या आश्चर्यजनक रूप से परिवर्तनशील जलवायु के संकेतों के अनुसार एक दूसरे को आच्छादित करते हुए व्यक्त होते हैं।

अध्यापिका तर्क-सम्मत न थी। फिर भी मेरी परिचित स्त्रियों में वही

एक ऐसी थी जो तर्क-वितर्क की गुत्थियो में उलझ सकती थी और इसमें से विजयी होकर निकल सकती थी। जब कोई उसके सामने किसी विषय के पक्ष या विपक्ष मे अनावश्यक रूप से निश्चयात्मक या उत्साहपूर्ण ढंग से बोलती होती तो उसे अध्यापिका के उग्रतापूर्ण उत्तरों से सावधान रहना पड़ता था। किसी भी विषय पर—शिक्षा, राजनीति, धर्म—या सामाजिक सम्पर्क के अन्य किसी भी क्षेत्र में उसे सामान्य चलती बातों से बड़ी उकताहट होती थी। विज्ञान या दर्शन के विषय में लम्बी-चौडी बातचीत उसे बहुत भारस्वरूप लगती थी, परन्तु मार्क ट्वेन अथवा डा० ऐलैक्जैण्डर ग्राहमबेल जैसे आनन्द-पूर्ण संभाषण करनेवालों की कला उसके मस्तिष्क को पर्याप्त लम्बे समय तक किसी गम्भीर विषय में संलग्न रखने मे समर्थ थी और इससे वह अपने में स्फूर्ति तथा उदात्तता का अनुभव करती थी। शब्द-जाल से उसे चिढ़ थी, परन्तु किसी व्यक्ति के उच्च भावों को व्यक्त करनेवाले प्रत्येक शब्द के सौन्दर्य को अनुभव करने की क्षमता उसमें थी।

मै उससे तर्क-वितर्क न करने की चेष्टा करती थी। तर्क में मैं शायद ही कभी सफल रही हूँ क्योकि मै जानती थी कि वह मुझे हरा देगी और चुप करा देगी, विशेषतः जब उसकी कल्पना उत्तेजित हो या वह क्रोध में हो। उसकी आलोचनाएँ अनायास उसके मुँह से निकल पड़ती थीं और ये अत्य-धिक रंजित तथा संक्षिप्त होती थीं तथा इन्हें सुनकर तो मै "एक साथ ही हतप्रभ, आनन्दित और आश्चर्य से मौन" हो जाती थी। वह कवि के रूप में कभी बात न करती थी, सिवाय उन क्षणो के जब वह मुझसे भावविभोर कर देनेवाली सुन्दरताओं का वर्णन करती होती, परन्तु छिपे-छिपे वह उन पद्यांशो को लिख लेती जो उसके मन मे स्फुरित होते। इनमें से अधिकांश पद्य तो उस अग्नि मे स्वाहा हो गये, जिसने आरकान रिज मे हमारे पहले मकान को भस्म कर दिया था, परन्तु कुछ पद्य बच रहे है। एक पद्य यह है—

जब ईश्वर प्रकाश के द्वारों को खोल देता है,
भाव-प्रवण लघु कल्पनाएँ चन्द्र-बिम्ब के प्रान्त-भाग पर छा जाती है
विहंगों की प्रेतात्माओ जैसी।
जीवन का अन्धकारमय प्रवाह बहता है
दिशा-काल के बीच अनवधानतः,
कोई नहीं पहचानता उस प्रकाश को
जो उनके विवृत नयनों मे प्रविष्ट होता है, अन्त समय तक।

सब वस्तुएँ घूम रही है एक विशाल सागर में;
दूसरा मौन विचार उँडेल देता है
रात्रि में विकसित होनेवाले पुष्पों के समान।
वे शून्य में गिरते है अप्रैल की वर्षा के समान,
स्वयमेव रंजित और आकार-प्राप्त
शुक्ति मे निहित मुक्ता के समान।
तब अदृश्य हाथ स्वर्ग की बावड़ियों मे डूबते है;
वहाॅ और फिर वहाॅ ही
बुद्धि के हाथ भीगते हैं
रजत-सदृश वर्षा की बूँदों से;
अपनी अद्‌भुत-ग्राहिणी समस्त अनुभूतियों से बुद्धि लक्ष्य करती है
वायु की परिवर्तनशील उड़ानो को,
रात की दीवारो पर मोती ढलकाते हुए,
वर्षा की बूँदों को अन्धकार के बीच ठेलते हुए,
बुद्धि प्रकाश के लोक की ओर बढ़ते हुए।

यदि अध्यापिका की आँखे सर्वसामान्य के समान होती, तो मुझे विश्वास है कि वह अन्तरिक्ष, नक्षत्रों और ग्रहों का एक विशाल, सतत परिवर्तनशील दृश्य के रूप मे चिन्तन करते हुए अवश्य आनन्द-विभोर हुई होती। परन्तु जैसी उसकी स्थिति थी, उसमें उसने पुस्तको की दुनिया को पसन्द किया—और उसकी निर्बल दृष्टि इस दुनिया का भी कितना थोड़ा सा हिस्सा आत्मसात् कर सकी। कविता और संगीत तो उसके सहचर थे। उसकी उँगलियों में शब्द बजते, छलछलाते, नाचते, भिनभिनाते और गुनगुनाते थे। वह प्रत्येक शब्द को मेरे मस्तिष्क में गुँजा देती थी—वह मेरे चारों ओर के मौन को मौन न रहने देती थी। वह उस प्रत्येक वस्तु के, जिसमे स्पर्श कर पाती थी, दृश्य, श्राव्य इत्यादि प्रत्येक गुण को मेरे विचारो में प्रविष्ट करा देती थी। वह मुझे प्रत्येक ऐसी वस्तु के संवेदनात्मक सम्पर्क में ले आती थी, जिस तक हम पहुँच पाते थे या जिसे हम अनुभव कर पाते थे—जैसे सूर्य के प्रकाश से उज्ज्वल ग्रीष्म की नीरवता, प्रकाश में साबुन के बुलबुलों का कम्पन, पक्षियों के गान, तूफानों की उग्रता, कीड़ों की ऊँची आवाजें, वृक्षों की मर्मर ध्वनि, प्रिय या अप्रिय ध्वनियाँ, अग्नि के समीप सुपरिचित कंपन-ध्वनियाॅ, रेशम की फरफराहट, दरवाजे की चूँ-चूँ ध्वनि और नसों मे रक्त की धड़कन। उसका एक अन्य पद्यांश यह है—

हाथ, संवेदनशील हाथ,
हाथ जो कोमल हरित पर्णों के समान आलिंगन करते है,
हाथ, उत्कण्ठित हाथ—
हाथ जो ज्ञान एकत्र करते हैं महान् पुस्तकों से,
ब्रेल—पुस्तकों से—
हाथ जो शून्य स्थान को भरते है निवास-योग्य वस्तुओं से,
हाथ इतने शान्त, किसी किताब पर जुडे हुए—
हाथ जो रात भर पढ़े शब्दों का विस्मरण कर देते है,
हाथ खुले पृष्ठ पर सोये हुए,
मजबूत हाथ जो विचारों की फसल बोते और काटते हैं,
हाथ जो संगीत सुनते हुए आनन्द-कम्पित और विभोर हो जाते हैं,
हाथ जो गीत और नृत्य की ताल बनाये रखते है।

———

६

मेरी बाल्यावस्था मे अनेक ऐसी परिस्थितियाँ आई जिन्होंने अध्यापिका के संश्लिष्ट व्यक्तित्व को अधिकाधिक स्पष्ट कर दिया। सन् १८९७-९८ की शिशिर एवं वसन्त ऋतु में हम अपने मित्र श्रीमान् और श्रीमती जोजेफ ई० चेम्बरलिन के साथ मैसाच्युसेट में सुन्दर और पुराने ढंग के गाँव रैन्थम में रहे। हम उनके अंगूरों की लताओं से वेष्टित, आमोद-गृह, रैड फार्म में जहाँ से "किंग फिलिप्स पौड" (राजा फिलिप का तालाब) दिखाई देता था, वर्षों तक आते-जाते रहे थे और हमारी ये मुलाकातें बड़ी आनन्दमय होती थीं, परन्तु जब वे हमें अपने घर ले गये तब मैं जिस बात से आकर्षित हुई वह यह थी कि यहाँ अध्यापिका के व्यक्तित्व के नये पक्ष सामने आये। वह कहा करती थी कि वे आठ महीने उसके जीवन का सर्वाधिक प्रसन्नतामय काल था। जब से वह मेरे साथ थी, तब से यह पहला अवसर आया था, जब उसने वास्तविक स्वतन्त्रता का आस्वादन किया और मेरे लिए, जो कि अध्यापिका को अपना निजी जीवन बिताते देखने के लिए इतनी उत्कण्ठित रहती थी, इससे बढ़कर आनन्दजनक बात और क्या हो सकती थी।

"दि फ्रौस्ट किंग" (कुहरे का राजा) की दुर्भाग्यपूर्ण घटना, जिसने हमे अकथनीय दुख दिया था, के बाद से सात वर्षो तक अध्यापिका मानो शक्ति-हीनता की भावना की बन्दी बनी रही। "दि फ्रौस्ट किग" एक छोटी सी कहानी थी, जो मैंने दस वर्ष की अवस्था मे लिखी थी। वस्तुतः मै इस कहानी को अपनी ही बुद्धि की उपज समझती थी और मैने इसे जन्मदिवस के उपहार के रूप में पर्किन्स इन्स्टीट्यूट के अध्यक्ष श्री ऐनेग्नोस को भेज दिया था। वह इससे इतने प्रसन्न हुए कि उन्होने इसे प्रकाशित करा दिया और तब यह जानकर कि यह कथा कुमारी मारगरेट कैन्बी की किताब की एक कहानी "बर्डी ऐंड हिज फेरी फ्रंड्स" की नकल मात्र थी, अध्यापिका और मै भयत्रस्त हो उठी। मैने यह कहानी दो या तीन साल पहले पढ़ी थी या किसी ने (अध्यापिका ने नहीं) मुझे इसे पढ़कर सुनाया था और मै इसे पूर्णतः भूल

चुकी थी जब कि यह कहानी इतने सजीव रूप में मेरी स्मृति में उभर उठी कि मै इसे अपनी ही समझ बैठी।

कुमारी कैन्बी बहुत उदार और समझदार थी और हमारे बहुत से मित्रों ने हमारा पक्ष लिया। मेरी प्रसन्नता से सम्बन्धित सभी बातों मे अभिमानिनी और संवेदनशील अध्यापिका ने साहित्यिक प्रयत्नों मे मेरी रुचि को पुनर्जागृत करने का प्रयत्न किया, और मुझे "दि यूथ्स कम्पेनियन" नामक पत्र के लिए अपने जीवन की संक्षिप्त कथा लिखने के लिए उत्साहित किया, परन्तु मैं अपने भावों को स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त न कर सकी। मुझे यही भय लगा रहता था कि मैं कही अनजाने किसी की नकल न कर बैठूँ और फिर मुझ पर साहित्यिक चोरी करने का दोष लगाया जाये।

मेरी ईमानदारी के प्रति ऐसे लोगों के आक्षेपों से, जो यह मानते ही न थे कि सभी बच्चे चाहे वे अन्धे हों या आँखोवाले, दूसरों के अनुकरण से तथा दूसरों की बातों को आत्मसात् करके ही अपने विचारों को शब्दों में प्रकट करना सीखते हैं, अध्यापिका को बहुत चोट लगी और वह स्वयं अपनी शिक्षा के अधूरेपन का स्मरण कर परेशान रहने लगी।

अब तक उसका मेरे विकास के लिए अपने अपनाये रास्ते पर विश्वास था, परन्तु अब यह विश्वास उठता-सा प्रतीत होने लगा। फिर भी उसने ठान लिया था कि मेरी बुद्धि किसी प्रकार के भय से बाधित न होकर निरन्तर विकास की ओर बढ़ती रहे और अब वह अनुभव करने लगी कि मुझे प्रशिक्षित शिक्षकों की देख-रेख में अध्ययन करना चाहिए। मेरी "नकल" के विषय में पर्किन्स इन्स्टीट्यूशन में जो एक समिति में जाँच हुई और जिसका सामना मैने अकेले ही किया, इसके बाद मैं इस संस्था में रहना न चाहती थी, परन्तु मैं जाऊँ तो कहाँ और अध्यापिका जो प्रयोग कर रही थी, उसके विषय में वह किससे परामर्श ले?

मित्रों ने रोचक आमोद-यात्राओं, जैसे कि प्रेजिडैण्ट क्लीवलैण्ड के उद्घाटन-समारोह में जाना और नियागरा-प्रपातों के बीच एक उत्तेजनापूर्ण दिन बिताना, का आयोजन कर हमारा ध्यान दूसरी ओर मोड़ने का प्रयत्न किया। डा० ऐलैक्जैंडर ग्राहमवेल हमारे साथ शिकागो की विश्व प्रदर्शिनी में गये। मुझे निरन्तर नये शब्दों के प्रवाह से अनुप्राणित होता, और संसार के सम्बन्ध में मेरी कल्पना को सम्पन्न बनता देखकर अध्यापिका को सान्त्वना मिली परन्तु समस्या फिर भी बनी हुई थी कि विशेष विषयों का ज्ञान करानेवाले योग्य शिक्षकों की देख-रेख में वह मुझे कहाँ, ओह कहाँ रखे?

सन् १८९३ की हेमन्त ऋतु में हम पैन्सिल्वानियाँ के हल्टन नामक स्थान मे श्री और श्रीमती विलियम वेड के परिवार मे गये और अध्यापिका को लगा जैसे यहाँ मेरे लिए एक उपयुक्त द्वार खुल गया हो। श्री वेड के एक पडोसी श्री आयरन्स ने, जो लैटिन के अच्छे विद्वान् थे, मुझे शिष्या के रूप मे ग्रहण करना स्वीकार कर लिया। नियमित रूप से कक्षा में अध्ययन प्रारम्भ करने में मुझे आनन्द का अनुभव हुआ और श्री आयरन्स के योग्य अध्यापन ने मुझमे वास्तविक विद्यार्थी का रूप जागृत कर दिया, जैसी कि अध्यापिका को मुझसे पहले से ही आशा थी। श्री आयरन्स मुझे गणित में भी सहायता देते थे और उनके साथ मैने टैनीसन की कविता "इन मैमोरियम" को, जो मेरे पास उभरे अक्षरों में थी, आलोचनात्मक दृष्टि से पढा। मै सीजर के गैलिक युद्धो के विषय में पढने लगी और मै इस स्वप्न में तैरने लगी कि अब विदेशी भाषाएँ मेरा प्रिय विषय बन जायेंगी। परन्तु हम हल्टन मे केवल तीन ही महीने ठहरे। इसके बाद जब मेरे नियमित पाठ स्थगित हो गये तो अध्यापिका लंगर-विहीन जहाज के समान अनुभव करने लगी। परिस्थिति से जकड़ी हुई और परेशान-सी अध्यापिका ने मेरे लिए मेरी योग्यताओं के अनुरूप कोई मार्ग खोजने के लिए चारो ओर नजर दौड़ाई। मेरे पिता ने उसका अनेक वर्षो का वेतन नही चुकाया था, परन्तु उसने मुझसे इस बात की कभी चर्चा न की। वह मेरे जाने हुए अत्यधिक धन-हीन लोगों में से थी। जैसा कि मुझे बाद में बड़ी होने पर मालूम हुआ, उसका विश्वास यह था कि भले ही किसी के पास एक भी पैसा न हो, फिर भी उसे अगले दिन का सामना सिर उठाकर करना चाहिए और इसी रूप में इन्द्रधनुष के छोर तक यात्रा करनी चाहिए। मुझे शिक्षित करने और मुझे दूसरों के कल्याण का साधन बनाने की उसकी इच्छा धन की आशंका की अपेक्षा कहीं अधिक प्रबल थी। वह जिस शान और हिम्मत के साथ मेरा पक्ष समर्थन करती थी, उसका कोई विरोध न कर सकता था। मुझे यह जानकर आश्चर्य न हुआ कि बहरों के सम्मेलन में हमारे शामिल हो सकने के मार्ग के आर्थिक काँटे डा० बेल जैसे समझदार मित्र ने हटाये थे। मेरे सम्बन्ध मे अध्यापिका की यह ज्वलन्त कल्पना कि मै सामान्य मानवता के संसार की निवासिनी बनकर रहूँगी, उसको मेरा अन्धा और बहरापन सहन न करने देती थी, और वह मेरे साथ न्यूयार्क नगर मे बहरों के लिए राइट-ह्यूमेसन स्कूल में इस आशा से गई कि यहाँ मेरी वाणी को पंख मिल सकेंगे, और वह इतनी परिष्कृत हो सकेगी कि मै प्रसन्नता या सान्त्वना के जो शब्द कहना चाहूँ,

उनमे मधुरता घोल देगी। परन्तु हमारे लिए निराशा आड़ में छिपी थी। यद्यपि यहॉ मेरे अन्य अध्ययन बहुत रुचिकर थे और अध्यापकों ने जिस दयालुता से मुझ तक उच्च ज्ञान पहुँचाया वह मेरे लिए एक स्नेहपूर्ण स्मृति है, परन्तु मेरी शिक्षा के इस अंश का व्यय-भार वहन करने में हमें बोस्टन के श्री जॉन स्पोल्डिग ने ही समर्थ बनाया, जिनका अध्यापिका पर और मुझ पर बड़ा विश्वास था।

इस समय तक मै सोलह साल की हो चुकी थी और मैने कालेज जाने की ठान ली थी। अध्यापिका की सदा सुलभ सहायता से मैंने उन मित्रो की बड़ी योग्यता और जोरदार ढंग से प्रस्तुत किये हुए परामर्श का प्रतिरोध किया जो सोचते थे कि मुझे सरलता का मार्ग अपनाना चाहिए और मुझे चाहिए कि मै साहित्य या अन्य किसी विषय के विशेष विद्यार्थी के रूप में रैडक्लिफ पाठ्य-क्रम को अपना लूँ और अपने आपको किसी निश्चित कार्य को सम्पन्न करने के लिए तैयार करूँ। एक या दो विषयो को पूर्णत. तैयार कर सकने लायक प्रतिभा या गुण मुझे अपने मे प्रतीत न हुआ। मै नही चाहती थी कि मै अन्य लोगों से भिन्न हूँ इसलिए लोग मुझे बताते रहें कि मुझे क्या करना चाहिए और क्या नही करना चाहिए। मै ऑखों और कानोंवाली लड़कियों के साथ सामान्य ज्ञान प्राप्त करने में होड़ लेना और बाद में अपने मस्तिष्क के प्रदेश में कार्य की जो भी संभावनाएँ प्रकट हो उन्हें नापना पसन्द करती थी। जब मै उस भाग्य-निर्णायिक समय का स्मरण करती हूँ तो मुझे अध्यापिका के उस समय के उस आत्म-निग्रह पर आश्चर्य होता है, जिसके साथ उसने मेरे अपनाये मार्ग मे पड़नेवाली कठिनाइयों और अनिश्चितताओं का सामना किया। मै ठीक कर रही थी या गलत, इस विषय मे उसने कभी अपनी कोई राय प्रकट नही की। इस अवसर पर उसकी साहसिकता की सदा साथ रहनेवाली भावना अवसर के अनुकूल उद्बुद्ध हो उठी। अनेक दिनो तक मेरे भविष्य के बारे में सोचते हुए उसने जो परेशानी का समय बिताया, उनके बाद उसे इस बात से संतोष हुआ कि मैने स्वयं ही निश्चय कर लिया था। कैम्ब्रिज में मेरी तैयारी के वर्षों मे, वह उस समय की प्रत्याशा कर सकती थी, जब वह कोई मकान या मकान का भाग किराये पर ले सके, जहाँ हम अकेले रह सके और ब्रिगेट क्रिमिन्स को, जो एक आयरिश स्त्री थी और जो हमको पसन्द थी, घर के प्रबन्ध का काम सौप दें।

कालेज जाने के मेरे विचारों के सम्बन्ध में अध्यापिका को आशा थी कि

मैं वहाँ उन्हीं स्थितियों में जाऊँ जब कि मेरा वहाँ वैसा ही सम्मान हो जैसा अन्य लड़कियों का, और सदिच्छुक परन्तु बीच में हस्तक्षेपप्रिय लोग मेरी योजनाओं को अबाध रूप से सम्पन्न होने दें और निन्दक जो तब भी उसके मार्ग में भद्दी आलोचनाएँ बिखेर रहे थे और मेरी क्षमताओं में संदेह का प्रचार कर रहे थे, शान्त हो जायें। उसकी यह आशा पूर्ण न हो सकी। जैसा कि मैंने अपनी किताबों मे अन्यत्र कहा है, और मैं यहाँ पर अध्यापिका की मेरे प्रति की गई एक ऐसी सेवा पर बल देना चाहती हूँ, जो जीवन भर मेरे काम आई।

अध्यापिका अन्धों के एक पृथक् वर्ग में विश्वास न करती थी, अपितु वह उनकी गिनती उन सभी मानव-प्राणियों में करती थी जिनको यथासंभव अपनी रुचियों एवं योग्यताओं के अनुकूल शिक्षा, मनोविनोद और रोजगार प्राप्त करने का अधिकार है। यही कारण था कि उसने श्री ऐनिग्नोस की हम दोनो को अन्धों के लिए बनी पर्किन्स इन्स्टीट्यूशन में रखने की योजना का प्रतिरोध किया। श्री ऐनिग्नोस मेरे लिए एक अद्भुत मित्र सिद्ध हुए थे और मेरा उनके प्रति इसलिए भी विशेष स्नेह था कि उन्होंने अध्यापिका को मेरी मुक्तिदाता के रूप में मेरे पास भेजा था। पर्किन्स इन्स्टीट्यूशन में मुझे उभरे अक्षरोंवाली पुस्तको के तथा उन अन्धे बच्चों के साथ के रूप में, जो मेरी उँगलियों पर शब्दो के हिज्जे कर लेते थे, मुझे अमूल्य सुविधाएँ प्राप्त हुई थी। परन्तु अध्यापिका किसी भी ऐसे विकलांग बच्चे को जिसे सामान्य वातावरण में सिखाया जा सकता है, किसी पृथक् संस्था में रखने का विरोध करती थी और जब से हमने अन्य सुयोगो की खोज के लिए पर्किन्स इन्स्टीट्यूशन को छोड़ा, तब से श्री ऐनिग्नोस ने भी हममे रुचि लेना छोड़ दिया। अध्यापिका राइट ह्यूमेसन स्कूल से भी सन्तुष्ट न हो सकी, यद्यपि वहाँ मेरी प्रसन्नता की वह प्रशंसा करती थी। यही कारण था कि वह मुझको कैम्ब्रिज में लड़कियों के "गिल्मैन प्रिपेरेटरी स्कूल" में ले गई। उसे निश्चित विश्वास था कि यहाँ मै सामान्य जनो के बीच अधिकतम पूर्णता का जीवन बिता सकूँगी। समय ने उसके इस काम की समझदारी सिद्ध कर दी है। परन्तु मुझे लोगों के हस्तक्षेप से तथा अपरिचितों के उत्साह से, जो मेरे काम स्वयं कर देने के इच्छुक रहते थे, बचाने में अध्यापिका को अपनी शक्तिशाली प्रकृति का प्रदर्शन करना पड़ा। यह बात अविश्वसनीय-सी प्रतीत होती है कि मेरे प्रति अध्यापिका की दस वर्ष की अनुरक्ति के बाद गिलमैन स्कूल में हमारी इच्छाओं के प्रतिकूल हमें अलग करने का जान-बूझकर प्रयत्न किया

गया। यह जुदाई उस समय तक के लिए थी जब तक मै इस स्कूल मे रहूँ। प्रारम्भ मे योजना यह बनाई गई कि मेरा पाठ्य-क्रम पाँच वर्षो का हो, परन्तु जैसे-जैसे मेरा अध्ययन प्रगति करने लगा, सहायक प्रधानाध्यापक का विचार हुआ कि मेरी पाठ्य-क्रम की अवधि घटाकर तीन वर्ष की जा सकती है। इससे मुझे प्रसन्नता हुई और अध्यापिका की भी यही राय थी। वह और श्री गिलमैन इस बात पर परस्पर सहमत न थे कि मेरी कैसी व्यवस्था की जाये। अपने कटु अनुभव से उसे सन्देह हुआ कि अनेक लोग जो हमारी सहायता के लिए आगे बढ रहे हैं, वस्तुतः मेरा अपने ही उद्देश्यो मे उपयोग करना चाहते हैं और घटनाओ को देखते हुए श्री गिलमैन इस दोषारोपण के भागी सिद्ध होते है।

एक ऐसे व्यक्ति के प्रति जिसका प्रथम और अन्तिम विचार मेरे सौन्दर्य, ज्ञान और आत्म-संतुष्टि के भाग को बढ़ाना था, अन्यायपूर्ण व्यवहार होते देखना मेरे लिए हृदयहीन अग्नि-परीक्षा के समान था। जब कि उसके चारों ओर विरोधी कुचक्र चल रहे थे, ऐन सलिवाँ कक्षा में मेरे बगल में बैठकर प्रत्येक अध्यापक के निर्देशो को मुझे हिज्जे करके बताती और अपनी आँखों पर उनकी सहन-शक्ति से अधिक जोर डालकर मेरे लिए वे पुस्तकें पढ़ती जो ब्रेल अक्षरों मे नहीं थी और मुझे जिन जर्मन और फ्रैंच शब्दों की आवश्यकता होती उन्हें कोषो मे ढूँढती। ग्रीक लिखने की मेरी सामग्री के आने में देर लग रही थी और वह मेरे लिए भौतिक-विज्ञान तथा बीजगणित के प्रश्न ब्रेल अक्षरों मे लिखती और कडे कागज पर रेखागणितीय चित्र उभारती और तब भी दुष्ट नारकीय शक्तियाँ सामान्य लड़कियों के बीच मेरे प्रथम स्कूली वर्ष में हमें अलग करने का साहस कर रही थीं। इस दुःखद प्रसंग का वर्णन मैंने अन्यत्र किया है, परन्तु इसकी स्मृति मेरे हृदय पर तब तक भार बनी रहेगी जब तक प्रभु मेरे आत्मा को घर वापस नहीं बुला लेता। उस भयंकर रात में, जब अध्यापिका को ज्ञात हुआ कि श्री गिल्मैन ने हम दोनो को पृथक् कर देने का आन्दोलन उठा दिया है, वह हमारे सच्चे मित्र श्री और श्रीमती रिचर्ड डर्बी फुलर से मिलने के लिए बोस्टन के लिए रवाना हो गई। निराशा ने उसको अभिभूत कर दिया था। जब वह चार्ल्स रीवर (चार्ल्स नदी) के पास पहुँची तो स्वयं को पानी में फेंक देने के प्रबल भाव ने उसको अभिभूत कर लिया, परन्तु तभी उसे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे कोई देवदूत उसको रोकते हुए कह रहा हो "अभी नही।" इससे उसे बल मिला और वह दूसरे दिन सबेरे कैम्ब्रिज लौट आई। उसने मुझसे तथा मेरी बहन मिल्ड्रेड से मिले बिना स्वेच्छा

से, बिना बल-प्रयोग के, चले जाने से इनकार कर दिया। यह हृदय को भग्न कर देनेवाला समय था, परन्तु अध्यापिका ने और मैने यह सिद्ध कर एक विजय प्राप्त कर ली कि दो और वर्षो मे मै रैडक्लिफ कालेज मे प्रवेश करने के योग्य हो गई।

हमारे कैम्ब्रिज छोड देने के बाद भी मेरे स्वास्थ्य के विषय मे बडी चर्चा की गई और मै यह देखकर बहुत व्याकुल हुई कि अध्यापिका को चेतावनी दी जाने लगी कि वह मुझे अत्यधिक परिश्रम न करने दे। जैसा मुझे बाद मे पता चला, यह उस संघर्ष का एक उदाहरण था जो विकलागो के प्रति अच्छी समझ-बूझ मे और उनके प्रति उस मूर्खतापूर्ण भावुकता मे, जो उन्हे काम करने की आवश्यकता से ही मुक्त कर देना चाहती है, चलता है। जब मै उन असंख्य विकलांगो, तपेदिक के रोगियों तथा अन्य रोगों या बहिष्कार के शिकार बने लोगो पर विचार करती हूँ जिन्होंने अपने लिए गौरवशाली सफलताओ के मार्ग का उद्घाटन किया है तो मुझे यह सोचकर अपनी आत्मा में लज्जा का अनुभव होता है कि मेरी जैसी स्वस्थ और हट्टी-कट्टी लड़की पर करुणा का कैसा अपव्यय किया गया। मै जानती थी और अध्यापिका भी समझती थी कि मै कितना परिश्रम उठा सकती हूँ। यह तो स्वयं मेरी ही इच्छा थी कि मै डटकर अध्ययन करूँ और अध्यापिका तो केवल उस मार्ग का अनुसरण-मात्र कर रही थी, जिस पर मै चलना चाहती थी। शिक्षा के पीछे मेरी दौड़ को, जिसे अध्यापिका के विरोधी यह कहकर लांछित करते थे कि मुझे शिक्षा के पीछे दौडाने में अध्यापिका मुझे मानो चक्की मे पीस रही है, वह मुझे उस आनन्द से, जिसका अनुभव सामान्य युवक कोई उपलब्धि प्राप्त करने में करते हैं, वंचित किये बिना रोक नहीं सकती थी और जो मै अध्यापिका का इतना सम्मान करती हूँ तथा उसके समझदारी से पूर्ण स्नेह के लिए उसकी मंगल-कामनाएँ करती हूँ, इसके असंख्य कारणो में से एक यह भी है कि उसने चारों ओर से जोर डाले जाने पर भी मुझे इस दौड़ से नही ोका।

कठिन परिश्रम के सम्बन्ध में, अध्यापिका मे एक ऐसा कलात्मक गुण था, जिसका महत्त्व पूरा-पूरा आँका नही जा सकता। चाहे मै जो भी अतिरिक्त काम कर रही होऊँ, वह कभी भी उस अनुशासन को ढीला नही करती थी जो उसके कविता तथा सुन्दर अँगरेजी के प्रेम से उत्पन्न हुआ था। सब प्रकार के लोगों के साथ मेरा पत्र-व्यवहार दिन-पर-दिन कठिन होता जा रहा था, और उन पर व्यक्तिशः ध्यान देना और भी आवश्यक हो गया था। यदि मेरे लिखे पत्र या लेख उसकी सुरुचि एवं स्पष्टता के मानों के अनुकूल न होते

या यदि उनमें मेरा व्यक्तित्व न झलकता होता तो वह मुझे ये कमियाँ दिखा देती और तब मैं उनको तब तक बार-बार लिखती जब तक वह यह न कह दे कि ये केवल शुद्ध ही नही है, अपितु सहायक एवं सुन्दर ढंग से अभिव्यक्त भी है। मेरे लिए यह एक विशेष सुविधा थी कि मै अँगरेजी साहित्य का अध्ययन एक शब्दशिल्पी (अध्यापिका) के पार्श्व मे बैठकर कर रही थी जो उन दिनो की आशा मे जब कि मै किताबें लिखने मे समर्थ हो जाऊँगी, मेरी शैली को उत्कृष्टतम बनाने में संलग्न रहती थी। परन्तु फिर भी अध्यापिका को और मुझे यह ध्यान बना रहता था कि हम इस धरती पर

क्षणिक दु.खों, सरल छलनाओं,

प्रशंसा, आक्षेप, प्रेम चुम्बनो, अश्रुओ और मुस्कानों के लिए है।

इस समय तक मै उसकी अपने प्रचार और शोषण से सम्बन्धित कुछ दुश्चिन्ताओं से परिचित हो चुकी थी और उसकी आर्थिक कठिनाइयों से अवगत हो गई थी। जैसे-जैसे मैं एक स्त्री के रूप में बढ़ती गई वह अपनी मन:-स्थितियों को मेरे सामने प्रकट करने लगी और ऐसा करने में उसे यह आशंका न रहती थी कि मेरे मन में उसके प्रति कोई गलतफहमी पैदा हो जायेगी। वह अपने आपको घबराहटों से या, जैसा कि वह कहा करती थी, अपनी "शारीरिक स्थिति" से मुक्त न कर पाती थी और वह आत्मा के आन्तरिक प्रदेश में अपने आपको खीच लेना भी नही जानती थी। वह न तो अपने आपको साधारण बना पाती थी और न अपनी उच्च आकाक्षाओं को रोक पाती थी (मै इसे पूर्णता का प्रेम कहना पसन्द करती हूँ) और न मेरे विषय मे अपनी स्वप्न-पोषित योजनाओं का घेरा कम कर पाती थी। उसे बेचैनी खाये डालती थी और यह तो उसकी शक्ति के बाहर था कि वह अपने स्वभाव में से अति का त्याग कर दे। वह किसी ऐसे भाग्य के सामने झुक नही सकती थी, जिसका अर्थ हमारी पराजय हो। वह, जैसा कि मैं कहूँगी, किसी "अन्धेपन के धर्म" की अनुगामिनी नही थी—ऐसे धर्म की जो मनुष्य को प्रकाश और अन्धकार दोनों स्थितियों मे पूर्णत: शान्त रहना सिखाता है और जो उसे एक ऐसी वस्तु बना देता है जो आग और पानी दोनों का प्रतिरोध कर सके और इस प्रकार दुतरफा सुरक्षित हो। अपने काम के विषय में उसकी धारणा इतनी ऊँची थी कि हमारे स्नेह के कारण उत्पन्न टेढ़े-मेढ़ेपन के सिवाय वह सदैव सर्वत्र परिस्थितियों के बीच में से अपना मार्ग निकाल लेती थी और निष्ठुर बाह्य जगत् का सामना करती रहती थी। प्रतिदिन सबेरे वह अपने आपको इस निश्चय से सज्जित कर लेती कि आज का दिन हम दोनों के लिए प्रसन्नतापूर्वक बीतेगा और प्रायः जब वह

अस्ताचलगामी सूर्य को देखती होती और उसकी आँखे इसके मनोहर रंगों को आत्मसात् करती होती, उसका हृदय सुसम्पादित कार्य की तृप्ति से भर उठता, परन्तु कभी-कभी ऐसा होता कि मेरा लिखा हुआ निबन्ध उसे प्रसन्न न कर पाता या मै रेखा-गणित का कोई प्रश्न हल न कर पाती या मेरी अन्य कोई मूर्खता उसे क्रुद्ध कर देती—तब तो ऐसा प्रतीत होता मानो कोई तूफान मेरे ऊपर से होकर चल रहा हो।

गिलमैन स्कूल में अध्यापिका पर जो अतिशय भार आ पड़ा था, उसे देखते हुए मैं चैम्बरलिन-परिवार की इस बात के लिए कि उन्होंने हमें अपने यहाँ स्थान दे दिया, जितनी भी कृतज्ञ होऊँ कम ही है। हम इस परिवार के साथ इसलिए गये थे जिससे मैं अध्ययन कर सकूँ, इसलिए नही कि हम झील मे जमी हुई बरफ पर बिना पहियों की गाडी चलाने या बरफ के गोलो से खेलने या बरफ के ऊपर चलने मे आनन्द का अनुभव करते हुए समय बितायें। परन्तु यहाँ मुझे आदर्श परिस्थितियाँ प्राप्त हुईं। इस परिवार के सभी सदस्यों का उच्चारण इतना स्पष्ट था कि मै उनके ओठों की गति से उनके उच्चरित शब्द पढ़ पाती थी और उस परिवार की एक सयानी लडकी बैठी तो उँगलियों पर हिज्जे भी कर लेती थी। मिल्ड्रेड के समान वह भी मेरी बड़ी आनन्ददायक खेल की साथिन बन गई और वह अपने ऊपर से कही ऊँचे दर्जे की किताबों में भी रुचि लेती थी, जैसे कि हौथौर्न की "दि हाउस ऑव सैवन गैबल्स" में। वह मुझे घर से बाहर ले चलना और ऐसे खेल रचना, जिनमें दूसरे बच्चे भी हमारा साथ दे सके, जानती थी। अपने पाठ पढने के बीच-बीच मे मैं इन बच्चों के साथ चुहुल करती रहती और जब हम साँस लेने के लिए रुकते तो नन्हें बच्चे मुझसे वे कहानियाँ सुनने के लिए तूफान मचा देते जो मेरे मस्तिष्क में भरी थीं, विशेषतः "दि ऐल्फ हू सैट अप हाउसकीपिंग" कहानी और ऑस्कर विल्ड की "राजकुमार तथा स्वालो पक्षी" वाली कहानी। मेरा जीवन इतने स्वाभाविक ढंग से बीत रहा था, इस बात से सान्त्वना पाकर अध्यापिका उस परिवार के बौद्धिक, स्नेहपूर्ण वातावरण मे, जहाँ वह जानती थी कि उसकी प्रशंसा की जाती है, विश्रान्ति का अनुभव करने लगी। यहाँ उसके चारों ओर सरलता, शुद्ध दयालुता और स्वास्थ्यकर ग्रामीण वातावरण था। वसन्त तक वह अपने वर्षो के दुश्चिन्ताओं के भार को फेंक चुकी थी और पुनः अपनी सहज-वृत्ति प्राप्त कर चुकी थी। यह देखकर मैं बहुत प्रभावित होती थी कि कैसे थोड़ी सी समझदारी या सहनशीलता या विनोद से हमारी आत्मा की झुर्रियाँ मिट रही थीं। मई मास के आगमन तक वह अपने मे स्फूर्तिमय, आनन्द-

मय जीवन का अनुभव करने लगी। अपने में विश्वव्यापी जीवन का स्फुरण कर वह ऐसी आनन्दित होने लगी मानो ईश्वर से तादात्म्य का अनुभव कर रही हो। उसकी शिराओं मे रक्त का ऐसे संचार होने लगा जैसे पौदों में जीवन-रस का और वह पुनः अपनी प्रकृति को भानेवाले बादलों के लोक में पहुँच गई।

जैसा मै बता चुकी हूँ कि रैड फार्म (चैम्बरलिन-परिवार का निवास-स्थान) किंग फिलिप पौंड (राजा फिलिप का तालाब) के किनारे था, और स्निग्ध वेला मे, वृक्षों के नीचे खड़े होकर उनके सघन पत्रों के रंगों के सामंजस्य को तथा चमकते हुए सूर्य द्वारा झील में छोड़ी हुई स्वर्णिम रेखाओं को एकटक देखना अध्यापिका के लिए समाधि जैसी अवस्था उत्पन्न कर देता था। यह एक आश्चर्य-जनक बात थी कि थोड़े से वृक्षों के झुरमुट, कुछ चट्टानें और नीची पहाड़ियों से घिरी झील अध्यापिका के लिए कितने नाना प्रकार के दृश्य, आकृतियों की रेखाएँ और दृश्यों की संभावनाएँ उपस्थित कर देते थे। उस पर मानो कैल्त जाति की कथाओं में वर्णित किसी परी का जादू-सा फिर जाता। वह ऑपेरा-चश्मों को पहने बिना उड़ते पक्षियों जैसे दूरवर्ती मनोरम दृश्यों को न पकड़ पाती थी, परन्तु केवल उनके सुरीले कूजन को सुनना ही उसके लिए महान् प्रसन्नता का विषय बन जाता, और वह झील, आकाश तथा पहाड़ी के सम्मोहन में उसे अपनी सुध न रहती। छोटी नाव के चप्पू चलाना और उसे खेना सीखने में उसकी आँखों पर बहुत जोर पड़ता था, परन्तु घमने के अतिरिक्त अन्य मनोविनोदों का आनन्द ले सकने में, समर्थ होने के नशे से अभिभूत होकर उसने यह सीखने में अपनी आँखो पर उनकी शक्ति से अधिक जोर डाला, जैसा कि वह किताबें पढ़ने मे भी करती थी। वह आह्लाद से पागल हो गई और प्रकृति के अक्षय भंडार से नई-नई सामग्रियाँ एकत्र करने लगी।

"श्री चैम्बरलिन बोस्टन के टैन्स्क्रिप्ट" के "लिस्नर" थे और रैड फार्म में सब प्रकार के लोग आया करते थे—लेखक, कवि, चित्रकार, दार्शनिक और अभिनेता। उनकी संगति में अध्यापिका स्वयं को वायु में पक्षी के समान ऊपर उठते हुए अनुभव करती थी। उनके प्रेरणादायक वार्तालाप उसमे विद्युत् का स्पन्दन उत्पन्न कर देते थे और उसके विचारों को ऐसे फैला देते थे जैसे वर्षा की बौछार फूलों को। इन आनेवालों में मेरीविल्किन्स, लुई गुइनी और एक मनोहर इंडियन बालिका, जो अपनी जाति "सिओक्स" के बारे में रोचक कहानियाँ लिखा करती थी, जैसे लोग होते थे। हमने व्लिस कारमैन, रिचर्ड होवी, ऐडवर्ड होम्स जिसने बाद में मास्टर कम्पास का आविष्कार किया,

लुइ मीरा जिसने शिकागो के विश्व-सम्मेलन के लिए शानदार चित्र बनाये थे और कनाडा के कवि फैड्रिक लैम्पसन से भी भेंट की। अनन्त विषयो पर इन लोगो की चर्चा सुनते हुए अध्यापिका मे यौवन की आभा झलक उठती और मुझे बताया गया था कि इन अवसरो पर वह आशुबुद्धि, विनोद और हास्य प्रतिध्वनित करती थी। उसे उन करुण स्त्री-पुरुषो के साथ विचारों का आदान-प्रदान करने मे आनन्द प्राप्त होता था, जो जीवन के नये प्रदेशों की खोज मे अभी-अभी निकले थे। प्रकृति के सम्मोहक वातावरण मे कविता, नई-नई मित्रताएँ और उन लोगो के द्वारा प्रशंसित होना जो उसकी रुचियो की कोमलता और साहित्य के प्रति उसकी उत्कण्ठा का साक्षात्कार करते थे—इन सब बातों ने मिलकर उसके जीवन को कमनीय स्पर्शों से, जिन्हे वह कभी न भूली, आकार देना प्रारम्भ कर दिया। यदा-कदा इन लोगो में विनोद की भावना जाग उठती और उनके विनोद पर अध्यापिका की हँसी के फव्वारे छूट पड़ते; इस हँसी को देखकर वे गम्भीर, रोबदार व्यक्ति, जिन्होने उसे कुचलने की चेष्टा की थी, अवश्य आश्चर्यचकित होते।

बार-बार मै लोगों को कहते सुनती थी कि ऐन सलिवाॅ बड़ी चित्ताकर्षक स्त्री है और उसके विनोदों में अदम्य चमक है। कभी-कभी वह अन्य युवतियों के समान, अपने साथ प्रेम का खेल रचनेवाले कुछ युवको को खूब छकाती। परन्तु नये विचारों को सुनने के लिए वह सदैव उत्सुक रहती और जब श्री चैम्बरलिन ने जिन्हें हम चचा ऐंड कहा करते थे, उसका परिचय वाल्ट ह्विटमैन की कविताओं से कराया तब तो उसके सामने एक नया संसार अनावृत हो गया। वाल्ट ह्विटमैन के प्रति उसके मन में उन लोगो ने वैमनस्य उत्पन्न कर दिया था, जिनकी पंडितम्मन्यता और जिनके परिष्कृत छन्दों एवं सतुकान्त पद्यों के प्रति असन्तुलित प्रशंसा-भाव ने उनको इस आधुनिक कवि के वास्तविक महत्त्व को समझने में असमर्थ बना दिया था। बाद में जब मैने और अध्यापिका ने साथ-साथ कालेज में "माइ कैप्टेन", "ओह, माइ कैप्टेन, अमरीका" तथा "ड्रम टैप्स" शीर्षक कविताएँ पढ़ीं, तब अध्यापिका ने अपना आनन्द मुझे भी बाँट दिया। अब तक "लीव्स ऑव ग्रास" उभरे अक्षरों में न छपी थी। अध्यापिका अपना इकतीसवाँ वर्ष बिता चुकी थी। इस समय वह सर्वाधिक आत्म-विभोर थी। वह नवोदित आशाओं से उत्तेजित हो रही थी। जो उदासी उसे सताती रही थी, अब उसने उस पर अपना बन्धन ढीला कर दिया था। भविष्य अब भी अनिश्चित था, परन्तु मेरे सम्बन्ध मे उसकी आशंकाएँ कम हो रही थीं और उसकी जीवन की पकड़ दृढ़तर होती जा

रही थी। उसकी शक्तियों और प्रबन्ध-पटुता का विस्तार हो रहा था और अब उसने मेरे साथ बच्चों-जैसा व्यवहार करना छोड दिया था। अब वह मुझे आदेश न देती थी।

अध्यापिका किताबों में ऐसी बहुत सी बातों को पकड लेती थी जो वास्तविक जीवन से तुलना करने पर झूठी सिद्ध होती थी। एक प्रकार के भय के साथ उसने स्वीकार किया कि वह इस भयंकर भ्रम मे पडी रही थी कि जो कुछ भी जानने योग्य है वह सब पुस्तकों में है और पुस्तकें व्यक्ति को अधिक शीघ्रता तथा अधिक पूर्णता से शिक्षित करती हैं। एक दिन उसने मुझसे कहा, "मै जीवन के विषय में जो भी सिद्धान्त बनाती हूँ, उसे जब तब बदल देती हूँ—और इससे मुझे उकताहट को दूर रखने में सहायता मिलती है।" जैसा मैं कह चुकी हूँ, वह तर्क-सम्मत न थी और यह अनुभव न कर पाती थी कि अपने निष्कर्ष को अन्त.प्रेरणा के आधार पर त्याग देना उसी प्रकार हानिकर होता है जैसे बीज जम गये है या नही, यह देखने के लिए उन्हे बाहर निकालना। मेरा अनुमान है कि उसकी धारणा यह थी कि प्रतिदिन अपने में से कुछ निकाल देने से हमारे भ्रम टूट जाते हैं, हमारे आदर्श बदल जाते हैं, हमारी मित्रताएँ लुप्त हो जाती हैं और हम जिस किसी भी वस्तु से परिचित हो वह हमारी उँगलियों के बीच में से खिसक जाती है। हम अपने बिताये हुए जीवन के इतने प्रतिकूल बन जाते है मानो वह हमारा जीवन ही न रहा हो। परन्तु बाह्य सौन्दर्य के प्रति उसका उग्र प्रेम उसकी संवेदना-शून्य कल्पनाओं से रक्षा करता रहा और कल्पना-शून्य संवेदनाओं से उसकी रक्षा उसकी प्रबल इच्छाशक्ति और उसके बचपन तथा तरुणावस्था की घटनाओं और जिन व्यक्तियो को लेकर ये घटनाएँ घटी उन सबकी कठोर स्मृति करती रही।

अपनी तरुणाई के वर्षो में अध्यापिका तर्क-वितर्क करने मे बहुत उग्र रूप धारण कर लेती थी, चाहे वह पुराने दक्षिणी संघराज्यों के किसी निवासी से बात कर रही हो या किसी उत्तरीय राज्यों के निवासी से जो मुक्त हबशियो की समस्याएँ नही समझ पाते थे अथवा किसी ऐसे धर्म-प्रचारक के साथ उलझी हो जो दूसरों पर अपने ही सिद्धान्तों को लादना चाहता है। वह बहुत जल्दी बुरा मान भी जाती थी और दूसरे को रुष्ट भी कर देती थी। वह अपनी बात पर अड़नेवाली और अभिमानिनी थी और अपने से विरुद्ध मत रखनेवालो को समझा-बुझाकर अपने पक्ष में कर लेने की अपेक्षा वह अपनी बात को जबर्दस्ती उनसे मनवाने में ही अपनी प्रतिष्ठा समझती थी। इसका कुछ कारण तो यह था कि वह वस्तुतः एक स्वतन्त्र स्त्री थी और अपनी परिस्थितियों की अपेक्षा

कहीं अधिक शक्तिशाली थी। शक्तिशाली कहने से मेरा यह अर्थ नही है कि वह दूसरो पर शासन करना चाहती थी, वरन् वह व्यक्तित्व को भाग्य पर शासन करनेवाली देन और दूसरों पर अधिकार जमानेवाली शक्ति मानती थी। वह डा० ऐलैक्जैण्डर ग्राहम बेल जैसी न थी, जो अपने प्रतिपक्षी से कह सकते थे, "शायद आप ठीक कह रहे है। आइए, हम देखे कि हमारे विचार कहाँ तक मिलते है। शायद मुझे आपसे कोई नई बात सीखने को मिल जाये। परन्तु दूसरे में यदि स्वतन्त्र विचार की छोटी-सी भी चिनगारी दिखाई देती तो उसे प्रज्वलित करने मे वह उदार और स्नेहपूर्ण थी और उसका विशाल हृदय उसकी अपनी अविचारशीलता पर पश्चात्ताप करने में तत्पर रहता था। यदि उससे सीधे-सीधे प्रश्न पूछे जाते तो वह अपने विचारो को न छिपाती, वह अनेक प्रकार के सिद्धान्तों का एक अजायबघर थी, परन्तु वह छिद्रान्वेषण से घृणा करती थी। अभी उसे उस विशाल उदारता और सहानुभूति को प्राप्त करना था, जिसके साथ वह आगे चलकर प्रत्येक मिलनेवाले की ओर अग्रसर होती थी। बाद के दिनों मे कभी-कभी बिलकुल महत्त्वहीन प्रतीत होनेवाले लोगो तक मे उसे भलाई का अप्रत्याशित कोष या वस्तुओं को परखने की अद्भुत क्षमता अथवा ऐसी उच्चाकाक्षाएँ, जिन्हे वह जानती थी कि वे पूर्ण कर लेंगे तथा सुख-दुख की अनुभूतियाँ, जिन्हें वे ऐसे स्वर मे व्यक्त करते कि वे उसकी आत्मा मे प्रतिध्वनित होने लगते, दिखाई दे जाते। वह मुझसे कहा करती, "हैलेन, मै जानती हूँ कि अधिकतर लोग एक दूसरे को, जाने-समझे बिना जीवन बिताते है और मै जानती हूँ कि साधारणता से मुझे कितनी बेचैनी होती है, परन्तु यह सब होने पर भी ऐसे सहस्रो मूक प्राणी है, जिनके विचारों को यदि कोई कवि गा दे या कोई प्रतिभाशाली अध्यापक यदि उनकी व्याख्या कर दे तो वे विचार विश्व मे प्रतिध्वनित हो जायें, और यदि न्यू चर्च में तुम्हारा विश्वास हार्दिक है तो तुम्हे उनके व्यक्तित्व में ईश्वर की लिखावट को दीर्घकाल तक बारीकी से पढ़ना चाहिए।"

रैडफार्म अध्यापिका के मानसिक चित्र पर ये मेरे अन्तिम अंकन है। अपने बचपन से लेकर हमेशा ही मुझे उसके चेहरे पर हाथ रखना भाता रहा है। उसका चेहरा इतना सुन्दर और भावाभिव्यंजक, संवेदनशील और व्यक्तियो और वस्तुओं के प्रति रुचि से अनुप्राणित था कि क्या कहूँ। उसकी आँखे हमेशा रोगी रहती थी, यद्यपि मित्रों ने मुझे बताया था कि वे दिखने में असुन्दर न थी, जैसी कि नजर की खराबीवाले बहुत से लोगों की होती है, परन्तु उसका मुख उस सुन्दर गठन से भव्य था जो कि उसके समस्त शरीर को भव्य सौंदर्य

प्रदान कर रहा था। उसके मुँह पर एक स्पृहणीय, चिन्तामय माधुर्य की मनोरम छाप थी और मेरे बचपन-भरे चुम्बनों तथा उसके प्रतिचुम्बनों की स्मृति मुझे दहकते अंगारो मे पलनेवाली चिनगारियों के समान स्नेह की ऊष्णता प्रदान करती है। उसकी भौहें पैलेस ऐथिनी की भौहों के समान सुकुमार थी और उसके सिर की भंगिमा मनमोहक थी। माँ उसे बहुत सुन्दर बताती थी और जान मेसी ने, जो स्वयं भी सौन्दर्य का उपासक था, उसकी भव्यता के सम्बन्ध में मेरी धारणा की पुष्टि की। उदासी की-सी भावना ने संसार की मूर्खता के प्रति एक उपहास की सी भावना ने और आँखों पर निरन्तर पड़नेवाले भार ने उसके मुख पर अपने चिह्न अंकित कर दिये थे परन्तु जब तक वह जान से न बिछुड़ी थी तब तक उसके मुख पर से सहज प्रसन्नता की दीप्ति कभी लुप्त न हुई थी और इसके बाद भी उसके मुख पर उन लोगों के लिए मोहक मुस्कान थिरक उठती थी, जिनके स्थायी स्नेह की वह आकाक्षा करती थी।

अध्यापिका का स्वर भी जिसने मेरे स्वर को भी स्वाभाविक रूप मे ढालने के लिए हार्दिक प्रयत्न किया, देवताओ का वरदान था। जहाँ तक मैं जानती हूँ, उसे स्वर-विन्यास की कभी शिक्षा नही मिली, परन्तु उसके उच्चारण में अद्भुत स्पष्टता थी—उसके उच्चारण मे न तो कोई शब्द घिसटता था और न किसी गलत स्थान पर बलाघात पड़ता था। प्राय: वह कहा करती थी कि वह स्वर-माधुरी उत्पन्न करने का आनन्द पाने और संगीत से होनेवाले भौतिक लाभ प्राप्त करने के लिए गायिका बनना चाहती है।

रैंडफार्म में हमारे निवास के दौरान मे, संयुक्त-राज्य अमरीका ने स्पेन के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। अध्यापिका ने सेना मे परिचारिका (नर्स) के पद के लिए आवेदन-पत्र भेजा। उसको सेवा में लगा हुआ देखने की इच्छा हम दोनों में ही समान रूप से थी, परन्तु उसे मालूम हुआ कि इस काम के लिए उसके प्रशिक्षण में इतना लम्बा समय लग जायगा जितना कि एक जहाज बनाने में और इसलिए उसने यह विचार त्याग दिया। तब उसके मन में अकस्मात् एक स्फुरण हुआ "चलो हम कैरिबियन में क्यूबा या अन्य किसी द्वीप में चलें और वहाँ संतरे या नीबू का बाग लगायें। वहाँ कम से कम हम शांति का जीवन तो बिता पायेगें और शायद तुम कुछ लिखना चाहो।" ऐसे उद्योग की संभावनाओं से मेरा मन बहुत उत्साहित हुआ, परन्तु मैने उसे बताया कि ऐसे काम के लिए हमे आर्थिक सहायता न मिल पायेगी और यदि हम फल उपजाने में समर्थ हो भी गये तब भी हमे योग्य चिकित्सकों की सहायता से

दूर जाकर उसकी आँखो को संकट में डालने का अधिकार नहीं है। मै समझती हूँ, इस विषय मे वह गम्भीर न थी, क्योकि कुछ ही दिनों में वह अपने इस दिवास्वप्न को भूल गई। इस समय हम उस कैम्प में जाने के लिए, जो अध्यापिका ने वोलोमोनेपोआग झील पर किराये पर ले लिया था, रैड-फार्म छोड़नेवाले थे। इस कैम्प मे हम प्रति ग्रीष्म ऋतु में तब तक जाते रहे जब तक हम रैन्थम मे अपने पहले निजी घर मे न चले गये।

७

कैम्प में अध्यापिका अपने आपको और भी स्वतंत्र अनुभव करने लगी। जब मै अपनी स्मृति मे उसके सम्पन्न हृदय की खान में झाँकती हूँ तो वहाँ मुझे उसकी उदार प्रकृति के और भी अधिक पुखराज और लाल दिखाई देते हैं। उसने माँ, मिल्ड्रेड और मेरे छोटे भाई फिलिप को गर्मियाँ तथा पत-झड़ का कुछ भाग बिताने के लिए आमन्त्रित किया, यद्यपि हमारा खर्चा उठाने के लिए उसके पास साधन नही थे। हमारे लिए छुट्टियों के आनन्द का इससे अधिक विशाल कोष और क्या जुटाया जा सकता था। अध्यापिका मेरे परि-वार से ऐसा स्नेह करती थी, जैसे कि यह उसका ही हो और पिताजी की मृत्यु के बाद तो मेरे परिवार के लोगो को हमारे साथ रैन्थम की झीलों और पहाड़ियो मे समय बिताने से अधिक प्रसन्नता और किसी बात में मिलती ही न थी। मेरी छोटी सी किश्ती "नेऐड" के अतिरिक्त अध्यापिका ने एक डोंगी, एक तैरने का पटरा (रैंफ्ट) और तैरने के पंख (स्वीमिंग विंग्स) भी रखे हुए थे। कैम्प में प्रतिभावान् और साधारण सभी प्रकार के मेहमान आते थे—चचा ऐड की गोष्ठी के भव्य युवक और चैम्बरलिन परिवार के सभी सदस्य यहाँ आया करते थे। एक बार ग्रीष्म में जब बोस्टन में बहरे श्रमिकों का एक सम्मेलन हो रहा था, एक दिन सबेरे अध्यापिका को बड़ा आश्चर्य हुआ जब इस सम्मेलन में आये हुए अनेक बहरे, अत्यधिक उत्साह और प्रसन्नता से भरे हुए, तैरने और आमोद-यात्रा करने के लिए तैयार होकर अकस्मात् कैम्प में आ पहुँचे। इनके बिना बुलाये ही पहुँच जाने से अध्यापिका और ब्रिजेट पर, जो अल्पाहार की तश्तरियाँ अभी-अभी साफ करके निपटी थी, भार आ पड़ा और इन प्रसन्नता से भरे आगन्तुकों के तैरने तथा किश्ती खेने और भोजन कराने का प्रबन्ध करने मे उन्हें अपनी सारी साधन-पटुता, विनोद की भावना और शक्ति लगा देनी पड़ी। परन्तु अध्यापिका की सहृदयता और दूसरों के सुख का ध्यान रखने की प्रवृत्ति ने उसे इस अवसर के अनुकूल आचरण करने मे समर्थ बना दिया और पूर्व सूचना के बिना आया हुआ यह दल अपनी इस

आमोद-यात्रा से तथा अध्यापिका ने उनकी अध्ययन की विधियों में, जिन्हें वह अपने मन में बहरों को शिक्षित करने की बहुत ही पुराने ढर्रे की विधियाँ समझती थी, जो रुचि प्रदर्शित की उससे संतुष्ट होकर कैम्प से खूब प्रसन्न होकर लौटा, परन्तु जब यह दल चला गया, अध्यापिका ने मुझसे आग्रह किया कि जब तक मै वर्षों के अनुभव से अपनी विवेक शक्ति को पुष्ट न कर लूँ तब तक मै अन्धों, बहरों या अन्य किसी वर्ग के कार्यो में हाथ न डालूँ। विकलांगो की सेवा के कार्यक्रम मे भली भाँति प्रतिष्ठित हो जाने से पहले ही मेरे भविष्य को किसी दिशा मे ढलने या मुझे ख्याति के आवर्त में डूब जाने से बचाना—यह अध्यापिका के सामने एक दूसरी समस्या थी।

अध्यापिका की नई-नई चीजे खोजने की प्रवृत्ति का आस-पास के लोगो पर बड़ी जल्दी असर हो जाता था। उसकी यह प्रवृत्ति हमारे दैनिक जीवन को स्फूर्तिमय साहसिक कार्यो से पूर्ण बना रही थी—इनमे से कुछ में मै भी भाग ले पाती थी, जैसे डुबकी लगाना और पानी की सतह पर या पानी के नीचे तैरना (मै अपनी कमर मे एक लम्बा रस्सा बाँध लेती थी और यह रस्सा किनारे पर किसी नाव या अन्य वस्तु से बाँध दिया जाता था, जिससे मैं निर्भय होकर तैर सकूँ), डोगियो की दौड, जिसके बाद हम तरुण लोग एक दूसरे को शाबाशी देते थे, पानी मे पोलो का खेल, देवदारु और चीड़ के जंगल में लालटेनें लेकर आमोद-यात्राएँ और झील के चारो ओर लम्बी चहलकदमियाँ या रैन्थम की स्थली में मुग्धकारी नयनों के समान चमकती हुई झीलो की खोज-बीन करना—और कोई भी ऐसा क्षण न आने पाता जब कि हम अध्यापिका से बातें कर रहे हों और वह हमें प्रौढ़ा जान पड़े।

अध्यापिका का विश्वास था कि स्वास्थ्य का स्वतन्त्रताओं मे पहला स्थान है और सचमुच अपनी समस्त शक्तियों का उपयोग कर सकने की मेरी क्षमता ने मेरे लिए एक नई स्वतन्त्रता उत्पन्न कर दी। तैरने से तथा टैन्डम (एक प्रकार की बग्घी जिसमें एक घोड़ा दूसरे से आगे जुता होता है) की सवारी करने से मुझमें जो अपनी शारीरिक-क्षमता के प्रति पहले से अधिक आत्म-विश्वास उत्पन्न हो गया, उससे मेरी उस शक्ति मे जो स्वास्थ्य का आधार है, और भी वृद्धि हुई। इस प्रकार मेरे जीवन को प्रसन्नतामय बनाने के अध्यापिका के नये-नये उपायों से मेरा अस्तित्व दृढ़ हो रहा था और मेरी जीवनी-शक्ति द्विगुणित हो रही थी। उछल-कूद में आनन्द लेने, वसन्त में सेब के वृक्षों पर बौरो का आना देखकर या ग्रीष्म ऋतु में जब वह या मै नाव खेती होती तब सुखाये जाते हुए घास की सुगंधि से मधुर साँझों को

देखकर प्रसन्न होने तथा उत्फुल्लता का अनुभव करने की उसकी क्षमता देख-कर हम लोगो तक को, जो उससे घनिष्ठ रूप से परिचित थे, ऐसा प्रतीत होता जैसे हमारे सामने कोई रहस्योद्घाटन हुआ हो। जब वह दुःखित भी होती, तब भी वह जीवन के कठोर पथ पर आशाएँ बिछाने के लिए तैयार रहती। उसके मन के भाव चाहे जितने भी बदलते रहे हों, उसका विचार था कि सब मिलाकर मनष्य दुःखों की अपेक्षा अधिक सुखों का अनुभव करता है, नही तो मानवता कभी समाप्त हो गई होती।

यद्यपि बचपन में अध्यापिका को पानी मे तैरने का कुछ भी अनुभव न था, परन्तु वह एक कुशल तैराक बन गई और जब हम किनारे से (तैरते हुए) बहुत दूर फिसल जाते, मुझे उसके आत्म-विश्वासपूर्ण अंग-संचालनों को देखना बहुत भाता। एक दोपहर के बाद जब फिलिप्स और मैं नहा रहे थे, उसने सहसा मेरा हाथ कस लिया (वह हाथ पर हिज्जे करना न जानता था) और जब मै उसके ओठों को पढ़ने लगी तो मैने देखा कि उसका चेहरा भय से सिकुड़ गया था, वह कह रहा था "मुझे अध्यापिका नजर नही आ रही है।" हम विह्वलता से माँ को पुकारते हुए घाट पर दौड़े। सहायता की पुकार मचाने के लिए माँ झटपट दौड़ पड़ी और बहुत से लोग जब नाव लेकर उस-झील के बीच में पहुँचे, तब उन्हें अध्यापिका दिखाई दी। अत्यधिक आत्म विश्वास से भरकर उसने अकेले ही तैरकर एक टापू पर पहुँचने की कोशिश की थी। जब लोगों ने उसे पानी से खींचकर नाव मे रखा तब तक उसकी शक्ति लगभग जवाब दे चुकी थी। लोग उसे नाव में वापिस लाये। हम सबको परेशान देखकर उसने गरम पेय के घूँट भरते हुए कहा, "परेशान न हों, मै ठीक हूँ। तुम तो जानती हो, हैलेन कि सायरन (यूनानी पुराण-कथाओं में वर्णित अर्ध-मानव तथा अर्ध-विहग जैसी आकृतिवाली समुद्री परियाँ, जो नाविकों को लुभाकर मौत के मुँह में डाल देती थी) लोगों को कैसे लुभाते है," अगले दिन वह फिर तैर रही थी—पिछले दिन की घटना से दुःखी होने की अपेक्षा वह अधिक समझदार ही बनी थी।

अध्यापिका घोड़ों को वश मे करने की कला में भी बहुत निपुण थी। सभी प्रकार के घोड़े उसके आकर्षण के विषय थे—गाड़ी खीचनेवाले घोड़े, जिन्हें वह भली भाँति हाँक लेती थी परन्तु जनशून्य सड़कों पर ही और लद्दू घोड़े, जिनमे उसे अपरिमेय धैर्य और शक्ति प्रतीत होती थी। यदि उसकी आँखें अधिक विश्वसनीय होती तो मेरा विश्वास है कि अतलान्ता के समान उसने भी घुड़दौड़ के घोड़े की सवारी अवश्य की होती और इस प्रकार उसने

अपनी आत्मा की स्फूर्ति की तुलना उस घोडे की स्फूर्ति से की होती। एक बार वह एक आधे सधे घोड़े (ब्रौको) की सवारी पर बैठी, इस विश्वास में कि उसकी मित्रतापूर्ण आवाज और स्नेह-भरा स्पर्श इस घोडे को वश में कर लेंगे। परन्तु, अकस्मात् इस घोड़े ने उसको एक ऊबड़-खाबड रास्ते पर पटक दिया, जिससे उसका सिर पिछली ओर से एक नुकीले पत्थर पर इतने जोर से टकराया कि उससे खून बहने लगा। वह कैसे अपनी बेहोशी पर काबू पा सकी, यह एक रहस्य ही है, और फिर वह निर्भयतापूर्वक अपने समान गलती करने वाले इस घोड़े को रैड फार्म तक खीच ही लाई; वहाँ पहुँचने पर तत्काल एक डाक्टर बुलाया गया और उसने तथा श्रीमती चैम्बरलिन ने उसकी परिचर्या की। आशा की जाती थी कि यह घाव बुरी तरह से पक जायेगा, परन्तु सभी को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि ऐसा नहीं हुआ, और कुछ दिनों बाद अध्यापिका फिर से एक समझदार, सरल घोड़े की सवारी करती दिखाई दी। उसने मुझसे हँसकर कहा, "तुम जानती हो, पिछले दिन जिस घोड़े ने मुझे पटक दिया था वह कोई पंखोंवाला पैगसस (यूनानी पुराण-कथाओं में वर्णित एक पंखोंवाला घोड़ा) नही था अपितु एक मनमौजी किस्म का घोड़ा था।" कुछ समय बाद हैवरहिल, मैसेच्युसैट के हमारे एक मित्र श्री सैण्डर्स ने, जो एक बहरे पुत्र के पिता थे जिसे डा० बेल पढ़ाया करते थे, अध्यापिका को एक ऐसा प्यारा सवारी का घोड़ा दिया जैसा उसे कभी न मिला था। हमने उसका नाम "लकी स्टार" रख दिया। यह घोड़ा जहाँ भी गया, सौभाग्य उसके साथ चला। वह डौन बिर्नी के "दि हैंगमैन्स हाउस" के दुर्भाग्यग्रस्त घोड़े के समान विश्वसनीय, स्नेहिल और वेगवान् था। उसके साथ अध्यापिका को कभी कोड़े की आवश्यकता न पड़ी। जैसा कि उसने श्रीमती लारेंस हटन को लिखा था, उसे इस घोड़े को झाड़ने-पोंछने और खिलाने में अभिमान का अनुभव होता था और यह घोड़ा हिनहिनाकर अपनी सब इच्छाएँ उसके सामने प्रकट कर देता था। जब वह उसकी पीठ पर सवार होती, तब उसके सवार होने से पहले वह उसकी गोल बाँहों को चाटा करता और तब वह उसको लेकर विभिन्न फूलों से या विशाल गोल्डरौड के झुरमुटों से सजे किनारोंवाले रास्ते पर चाल दिखाते हुए या सरपट भागते हुए चल पड़ता। उसके ऊँचे उठे सिर, उसकी चमकीली अयालवाली गर्दन और उसके सुडौल कन्धों तथा सवार के शरीर में स्वास्थ्य तथा हल्केपन का स्फुरण करनेवाली उसकी चाल से अध्यापिका बहुत आनन्दित होती थी। मेरे जाने बिना ही वह अपने साथ एक किताब ले चलती और जहाँ उसे वृक्षों की छाया में कोई ऐसा शीतल स्थान

मिल जाता, जहाँ उसकी आँखो के उपयुक्त प्रकाश होता, वह उतर पड़ती। तब वह बैठ जाती या लेट जाती, लगाम उसके पैरों मे ढीली होकर अटकी रहती और वह लम्बे अध्ययन के वर्जित फलों को चुनने में लग जाती, जब कि "लकी स्टार" घास कुतरता या आस-पास की झाड़ियों से सावधानीपूर्वक पत्तियाॅ नोचता। उस समय का इन दोनों का चित्र कैसा मनमोहक होता होगा—आलूबुखारे के-से रंग के वस्त्रो में सजी अध्यापिका और भली भॉति ब्रश से साफ किये हुए अपने हल्के भूरे रंग के परिधान तथा अपनी लहराती अयाल से सुसज्जित लकी स्टार कैम्ब्रिज जाते हुए, इस पशु के वियोग से जो मानो उसी के लिए पैदा हुआ था, उसका हृदय टूट गया, परन्तु मेरा यह कॉलेज में अन्तिम वर्ष था और हमारा व्यय-भार बढ़ता जा रहा था। हमने अपने नये खरीदे हुए घर को अगली ग्रीष्म ऋतु के लिए फिर से बनवाया था।

८

रैडक्लिफ कालेज के साथ मेरा प्रथम परिचय निराशा से आच्छन्न था। यह मैं उन लड़कियों को दृष्टि मे रखकर नही कह रही हूँ, जिनसे मै वहाँ मिली और जिनके साथ मेरे सम्बन्ध बहुत सुन्दर रहे और न अपने अध्ययन की दृष्टि से मै ऐसा कह रही हूँ, क्योकि यहाँ के अध्ययन से मुझे प्यार था, अपितु मेरी इस निराशा का कारण यह था कि यहॉ मुझे इस बात का अधिकाधिक भान होने लगा कि अध्यापिका की ऑखें कष्ट पा रही है। कालेज मे मुझे किन पुस्तको की आवश्यकता होगी, पहले से ही यह अनुमान लगा लेना मेरे लिए संभव न था। परिणामत॰ मेरे लिए आवश्यक पुस्तकों को ब्रेल अक्षरों मे लिखवाने में बहुत देर हुई। सौभाग्य से मुझे लैटिन में, "दि ईनिइद," "दि ईओलोग्स", और ल्यूक्रेतियस की दार्शनिक कविता—जो आश्चर्यजनक रूप से हमारे अणुयुग की-सी लगती है—मिल गई, परन्तु कैतुलस, प्लौतस की रचनाओं तथा सिसरो के पत्रो के ब्रेल अक्षरों में प्राप्त होने में कुछ समय लग गया। मै "ऐनेबेसिस" पढ़ चुकी थी और "इलियड" के अनेक अध्यायों की एक ब्रेल-प्रति मेरी प्रतीक्षा कर रही थी, परन्तु ब्रेल अक्षरों में कोष नहीं थे और मुझे जिन अनेक शब्दों की आवश्यकता होती, उन्हे अध्यापिका स्याही में छपे कोषों में ढूंढती। अँगरेजी-साहित्य के पाठ्य-क्रम में चौसर से प्रारम्भ कर उन सभी कालों की पुस्तकों की भरमार थी जो पैलग्रेभ की "गोल्डेन ट्रेजरी" में गृहीत है, और जो दीर्घकाल तक उभरे अक्षरों में न छपीं। एलिजबेथ युग में से केवल शेक्सपियर के नाटक और गीत तथा स्पैन्सर की "दि फेरी क्वीन" ही ब्रेल में प्राप्त थे। इसका फल यह हुआ कि अध्यापिका को मुझे मध्यकालीन लेखकों की तथा फ्रैंच एवं जर्मन की ऊँची श्रेणियों की अनेकानेक पुस्तकें पढ़कर सुनानी पड़ी। प्राय: उसकी ऑखे जवाब दे देती और तब उसे डा० मौरगन से, जो एक प्रसिद्ध नेत्र-चिकित्सक थे और जिनकी श्रीमती हटन ने सिफारिश की थी, परामर्श लेना पड़ता। जब डा० मौरगन ने सुना कि अध्यापिका मेरे लिए प्रतिदिन पॉच या अधिक घण्टों तक पढ़ती है तो वे बोल उठे, "हे भगवान्!

कुमारी सलिवाँ, यह तो सरासर पागलपन है। यदि कुमारी कैलर का पाठ्य-क्रम समाप्त कराना है तो तुम्हे अपनी आँखो को पूर्ण विश्राम देना पड़ेगा।" ओह, उस समय मुझे पुस्तको से कितनी घृणा हुई! मेरी सहायता के लिए तत्काल कोई मिल न सकता था और इसलिए उन "सुकोमल आकाश-परियों" को जो अध्यापिका की आँखें थी, कठोर श्रम में लगा रहना पड़ा, जब कि मैं उनकी यह स्थिति देखकर अकथनीय वेदना सहन करती रही। यदि कभी अध्यापिका पूछती कि क्या मैं किन्ही स्थलों को फिर से तो नहीं सुनना चाहती, तो मै झूठ बोल जाती और कह देती कि ये स्थल तो मुझे याद हैं। परन्तु वस्तुतः ये स्थल मेरे मस्तिष्क से खिसक गये होते। परन्तु, आखिर मेरे लिए पढने का काम लेनोर किनी ने, जिसने हाल ही में हारवर्ड के एक भूगर्भशास्त्र-वेत्ता फिलिप स्मिथ से विवाह कर लिया था और जो उँगलियो की वर्ण-माला से परिचित थी, अपने ऊपर ले लिया और इससे मुझे जो मानसिक शान्ति प्राप्त हुई उसके लिए मै उसकी मंगल-कामना करना कभी नही भूलती। उससे झूठ बोले बिना मैं उससे अपने विस्मृत स्थलों को खोजने का आग्रह कर लेती थी और इस प्रकार मैं इन विस्मृत स्थलो को पुनः याद कर सकी और अर्धवार्षिक परीक्षा में सफल हो सकी।

स्वभावतः उस समय अध्यापिका के लिए लिखने का काम करना असम्भव था। वह अपनी नाक से आगे न देख पाती थी और लिखने में उसे अपनी पेन्सिल तथा इसके लिखे हुए शब्द पर ध्यान केन्द्रित करना पड़ता था। यह उसके मनोभावों की कठोर परीक्षा थी। इससे उसके हृदय की समस्त प्रेरणा, उत्साह और विचार रुद्ध हो गये। जब मैं टाइप करना भली भाँति सीख गई तब मैं उसका सारा हिसाब-किताब, स्मृति-पत्र और चिट्ठियाँ टाइप करने लगी। तब उसके विचार स्वच्छन्दतापूर्वक स्फुरित होने लगे और मुझे यह अनुभव कर सान्त्वना मिली कि मै उसके कुछ तो काम आ सकी।

हमारे जितने भी मित्र हमारी कठिनाइयो से परिचित हुए, उन्होंने यथा-सम्भव हमारे मार्ग को सुखमय बनाने का प्रयत्न किया। इन मित्रो में जान मेसी भी थे। मेरी जीवन-कथा का, जिसमें मूलतः मेरे कालेज-सम्बन्धी प्रसंग थे, सम्पादन करने के अतिरिक्त, उन्होने रैडक्लिफ में मेरे दो अन्तिम वर्षों के अध्ययन के विषय मे ऐसे सुझाव दिये, जिनसे अध्यापिका की आँखें कुछ सीमा तक कष्ट से मुक्त हो सकें और जब कभी उन्हें पढ़ाने से अवकाश मिलता, वे मुझे पढ़कर सुनाते।

यहाँ पर मैं बोस्टन के डा० गोल्डवैट के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट

करना चाहती हूँ। बहुत समय तक अध्यापिका को अपने पैर फीतों से बाँधने पड़े थे, जो सम्भवतः बचपन में पैर की अपेक्षा अत्यधिक छोटे जूते पहनने का परिणाम था। मेरे अध्ययन के आगे के वर्ष में वह बुरी तरह लँगड़ाने लगी और जॉन मेसी ने उसे डा० गोल्डवेट के पास जाने के लिए तैयार कर दिया। अच्छी तरह जाँच करने के बाद इस विख्यात शल्य-चिकित्सक ने उसे सूचित किया कि शल्य-क्रिया (ऑपरेशन) करना अनिवार्यतः आवश्यक है। अध्यापिका ने उससे तत्क्षण कहा कि जब तक मै (हैलेन) ग्रेजुएट नही हो जाती, तब तक वह शल्य-क्रिया नही कराएगी। डाक्टर ने निश्चयात्मक रूप से उत्तर दिया, "कुमारी सलिवाँ, तुम्हारा स्वास्थ्य हैलेन कैलर की शिक्षा की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण है।" इस बात के लिए मै उसका आलिंगन कर सकती थी। अस्पताल का खर्च उठाने के लिए हमारे पास धन न था। इसलिए डाक्टर गोल्डवेट उस कमरे में आये, जिसमे अध्यापिका और मै रह रही थीं और वे अपने साथ एक परिचारिका तथा शल्य-क्रिया के औजार भी लेते आये। ब्रिजेट ने कमरे के चप्पे-चप्पे को मल-मलकर साफ कर दिया, कमरे मे एक अतिरिक्त मेज रख दी गई और डाक्टर तथा नर्स ने ईथर दे दिया। लम्बे, गठीले, खूबसूरत डा० गोल्डवेट का अध्यापिका को अपनी बाँहों मे उठाकर शल्य-क्रिया के लिए तैयार किये कमरे में ले जाने का दृश्य मै कभी न भूल पाऊँगी। उसने अध्यापिका को जीवन भर के लँगड़ेपन से बचा लिया और एक ही महीने में अध्यापिका मेरे साथ इतनी अच्छी तरह से चलने लगी, जैसी वह पहले कभी न चली थी। इस अनुभव के बाद अध्यापिका के मन में चिकित्सकों के प्रति जो आदर-भाव प्रतिष्ठित हो गया उसका अनुमान लगाने के लिए कार्यालय की "हीरोज ऐण्ड हीरोवर्शिप" पढ़नी चाहिए।

मेरी शिक्षा से मेरा ध्यान हटाने के लिए जो दूसरा प्रयत्न मेरे नाम पर बहरे-अंधे बच्चों के लिए एक स्कूल स्थापित करने की योजना के रूप में किया गया, उसका पूरा वर्णन मै "मिडस्ट्रीम" में कर चुकी हूँ। इस योजना के रूप में मेरी प्रकृति के स्नेहिल पक्ष पर आक्रमण किया गया था और मै चाहती भी थी कि मै बहरे-अंधे बच्चों को आत्मा और शरीर के दुहरे कारागार से, जिसमें मै स्वयं भी रह चुकी थी, मुक्त करने के लिए स्वतन्त्र होऊँ। परन्तु यह मेरा अधिकार भी था और कर्त्तव्य भी कि मै अपने कालेज के पाठ्य-क्रम को पूर्ण कर लूँ, जिससे मै यह दिखा सकूँ कि दुहरी बाधाओं से घिरे बच्चे कहाँ तक अपना विकास कर सकते हैं। अध्यापिका इस बात पर सन्नद्ध थी कि मै किसी स्कूल के प्रलोभन में न पड़ूँ। मैं इस घटना का उल्लेख केवल इसलिए

कर रही हूँ कि यह उन अनेक बाधाओं में से एक थी, जिनका हमने सामना किया और जिसके कारण अपने अध्ययन के प्रत्येक विषय में उच्चतम सम्मान प्राप्त न कर सकने के परिणामस्वरूप मैं अध्यापिका की अत्यधिक निराशा का विषय बनी। वह भावनाओं से विक्षुब्ध हो उठी और मुझमें श्रेष्ठता प्राप्त करने के प्रति उत्साह के अभाव ने उसे संत्रस्त कर दिया। उसमें विशाल बाधाओं और परेशानियों की गहरी खाइयों की एक विचित्र संवेदना थी और जब तक वह जीवन की नवीन सम्भावनाओं के परिदर्शन से पुनः उत्साहित न हो जाती तब तक उसके साथ स्निग्ध व्यवहार आवश्यक होता था। यह अध्यापिका के कठोर अनुशासन में रहने का ही सुफल है कि उसके इस धरती से बिदा ले लेने के बाद भी पौली टॉमसन और मैं उन लोगों की योजनाओं से, जो हम पर प्रभुत्व जमाना चाहते थे, अपने आपको बचा सकीं और स्वतन्त्र आत्मनिर्भर स्त्रियों के रूप में अपनी स्थिति बनाये रख सकीं।

६

जब अध्यापिका और मै रैन्थम में बस गये, उसके बाद एक वर्ष तक वह लगातार जॉन से विवाह करने के सम्बन्ध मे अपने विचार बदलती रही और तब मुझे ये पंक्तियाँ याद आई "सच्चे प्रेम का मार्ग कभी सरल नही रहा।" मुझे प्रसन्नता थी कि उसे अपने कार्यो और कठिनाइयों में हिस्सा बँटाने के लिए एक अच्छा आदमी, जैसा कि मै जॉन को समझती थी, मिल गया था और मै प्रतीक्षा करने लगी। एक शाम को जब हम बोस्टन मे एक बैठक से, जिसमें मै अन्धों के पक्ष मे बोली थी और जॉन ने मेरे दुभाषिये का काम किया था, लौटे तो अध्यापिका कहने लगी कि श्रोताओ के सामने खड़ी मैं कितनी सुन्दर और भव्य लग रही थी और इसी के साथ उसने यह भी घोषणा कर दी कि वह विवाह न करेगी। "ओह, अध्यापिका" मै चिल्ला उठी, "यदि तुम जॉन से प्रेम करती हो, और तब भी यदि तुम उसे छोड़ दोगी तो मै इसे एक भयंकर दुर्घटना समझूँगी।"

जैसे-कैसे भी, जब मै उस सुदूर भूतकाल के उतार-चढ़ावो में पैठने का प्रयत्न करती हूँ, तो मुझे यही धारणा सताती रहती है कि ऐन ने अपने विवाह के तथ्य को कभी पूर्णतः स्वीकार न किया था। उसने अधिक आत्म-निग्रह प्राप्त कर लिया था—वह अपनी विकृत मन.स्थितियों को पशुओं के शिक्षक के समान अपनी मुट्ठी में रखने लगी थी, परन्तु यदा-कदा उसे इन मनः-स्थितिरूपी पशुओं की गुर्राहट सुनाई पड़ जाती और वह कहा करती कि उसे शान्त और स्वस्थचित्त रखने के लिए मेरी आवश्यकता है। जॉन, साहित्यिक कार्यों में मुझे परामर्श देने में, अध्यापिका को आनन्दपूर्ण, बुद्धिमत्ता-पूर्ण या प्रतिभा से प्रकाशमान ग्रन्थ-राशि पढकर सुनाने मे और उसकी उदासी दूर करने में कुशल था। प्रकृति की विभूतियो को पहचानने में उसकी दृष्टि बड़ी पैनी थी, यद्यपि एक आत्म-निर्भर, सरल जीवन के अपरिष्कृत रूप की ओर, जिसकी थोरो की पहचान थी, उसने कभी ध्यान न दिया और हमारे आनन्द में हिस्सा बँटाते हुए वह अपने अनिर्वचनीय आकर्षणों से हमारे आनन्द को समृद्ध करता रहा।

'अमरीकन फाउन्डेशन फॉर ओवरसीज ब्लाइन्ड' के लिए दौरा करते हुए हैलेन केलर अफ्रीका के आदिवासियों के बीच।

परन्तु स्वयं मेरे जीवन को आनन्दमय बनानेवाले इन दोनों जीवनों के संगीत में एक अन्तर था। अध्यापिका की बहुरंगी प्रकृति, जिसे उसका विक्षुब्ध मन निरन्तर उद्विग्न करता रहता था, सीधे-सादे लोगों को परेशानी में डाल देती थी और यहाँ तक कि बुद्धिमान् लोग भी सदैव उसकी प्रकृति की तरगों को ठीक-ठीक नाप न पाते थे। केवल उसके सबसे अच्छे मित्र ही सच्चे प्रेम के द्वारा उसके चरित्र के प्रकाशमान तथा अन्धकारमय पक्षो को समझ पाते थे। वह सदैव अपनी सक्रिय प्रकृति के लिए निकास ढूँढ़ती रहती थी। वह प्राय: कही न कही आते-जाते रहने और कुछ न कुछ नई चीज देखते रहने में विश्वास करती थी। इससे मेरा यह अर्थ नही कि उसमे मनोविनोद की क्षुद्र आकांक्षा थी, अपितु मेरा मतलब यह है कि वह निरन्तर अपने आपको नया बनाये रखने की आवश्यकता का अनुभव करती थी। वह कहा करती थी, "हम आदतों के अत्यधिक आश्रित हो गये है" और अब मैं सोचती हूँ कि मैंने क्यों न उसके सुझावों पर अधिक ध्यान दिया। मैं युवको से मिल सकूँ और असाधारण अनुभव प्राप्त कर सकूँ, इसके लिए वह अपने मार्ग से दूर भी चली जाती थी और इस प्रकार वह मेरे वातावरण मे निरन्तर परिवर्तन लाती रहती थी। अब मै सोचती हूँ कि जैसे पक्षी पुराने पर छोड़कर नये धारण करते रहते हैं, हमें भी कुछ इसी प्रकार की प्रक्रिया द्वारा अपने आपको नया बनाये रखना चाहिए। ठीक ढंग का परिवर्तन हमें अपने विचारो को नवीन बनाने मे, अधिक सुदृढ़ परों द्वारा उच्चतम वातावरण मे उड़ने का साहस करने मे और हमारी रुचियो को जगाने तथा तीव्र करने मे सहायता देता है। कौन जानता है? सम्भव है, यही सामाजिक समस्याओं का एक समाधान सिद्ध हो जाये। दूसरो में औचित्य एवं समरसता उत्पन्न कर कोई भी कर्तव्य तथा आनन्द, शिव तथा सुन्दर का संयोग कर सकता है। मै कितना चाहती थी कि मै उसके साथ पृथ्वी के छोर तक चलती रहूँ। परन्तु इस समय तक मैंने स्वयं को साहित्यिक कार्य में जुटा दिया था। यद्यपि मुझमे पैठे हुए उद्दण्ड वृषभ ने लातें चलाई थी और विरोध किया था, परन्तु अन्त में उसे जुए में जुतना ही पड़ा था, और मै तब तक इस कार्य से अलग न होना चाहती थी, जब तक मै किसी न किसी परिमाण में अपना परिश्रम प्रदर्शित न कर दूँ। वह मुझसे बहुत चिढ़ जाती, परन्तु मेरे व्यक्तित्व का वह वैसा ही सम्मान करती थी जैसा वह स्वयं अपने व्यक्तित्व का करती थी और हमारा यह प्याले में तूफान शान्त हो जाता।

पुन: उसने बरमूडा की यात्रा का प्रस्ताव किया। अपना हिसाब-किताब

देखने पर मुझे ज्ञात हुआ कि हमारे पास ऐसी यात्रा के लिए धन नहीं है, यहाँ तक कि तात्कालिक व्ययों तक के लिए धन नहीं रह गया है, और मैं यह भी नही जानती थी कि मैं अपनी इस यात्रा के विषय में लेख लिखकर निश्चिन्त होकर यात्रा कर सकने के लिए पर्याप्त धन कमा भी पाऊँगी। अध्यापिका महान् देवता पैन (एक यूनानी देवता) की तरह उबल पड़ी और फिर कैल्त लोगों जैसी प्रसन्नता से उद्दीप्त हो उठी। यह सब होने पर भी, मैं नहीं भूल पाती कि मेरे कारण उसे वे निराशाएँ देखनी पड़ी।

उसके सुखकर मनमौजी प्रस्तावों का आनन्द लेने के लिए मैं धोना-माँजना, झाड़ू-बुहारू लगाना या टाइप करना, सभी कुछ छोड़ देने और उसके साथ देवदारु के वन में, जो हमारे घर के पास था, घूमने अथवा मनोविनोद करने या एक विशाल होली जलाने के लिए ईंधन इकट्ठा करने के लिए दौड़ते फिरने के लिए हमेशा तैयार रहती थी। इस विशाल होली में अग्नि की सुन्दर और विशाल लपटो को ऊँचे-ऊँचे उठते हुए और तब धीरे-धीरे जमीन मे गिरते हुए देखने मे उसे अत्यधिक आनन्द मिलता था, या शायद हम नहाने के कपड़ों में झील पर होते जब कि तूफान लहरो पर कशाघात कर उन्हें क्रुद्ध करता होता और बिजली हमारे चारों ओर नाचती होती। वर्षा की भारी बूँदे हमें भिगो देतीं, तब आसमान साफ हो जाता और हम तैरने के लिए पानी मे कूद पड़तीं। उत्तेजना उसकी आत्मा की साँस थी।

जब मैं अध्यापिका के स्वभाव के इन पूजनीय पक्षों पर सोचती हूँ, तो मेरे मन में आता है कि मेरे टाइपराइटर की अनन्त खटखट से हमारे भाग चलने के लिए उसकी उत्सुकता का अदृश्य कारण उस पर किया गया यह दुष्टतापूर्ण दोषारोपण था कि उसने बालिकाओं के कैम्ब्रिज प्रिपेरेटरी स्कूल मे मुझसे मेरी शक्ति से अधिक काम कराया था। उस घटना के बाद मै जब तक कालेज मे रही, मैने किसी डाक्टर से कभी परामर्श न लिया, क्योंकि मैं डरती थी कि कही इससे अध्यापिका के विरुद्ध कोई झूठा विवरण न खड़ा कर दिया जाये। मैं प्रतिदिन सिरदर्द से पीड़ित रहती थी, जिससे अध्ययन करना कठिन हो जाता था और निराश होकर मैंने एक या दो-दो दिन तक भूखे रहकर और प्रातःकाल का अल्पाहार भी बहुत कम कर या बिलकुल छोड़कर इस सिरदर्द से पीछा छुड़ाया। अध्यापिका इस सम्बन्ध में बहुत अच्छी थी और बिना कुछ कहे-सुने मुझको मेरे अपने किये का फल भोगने देती थी। सिरदर्द तो दूर हो गया, परन्तु भाग्य ने मेरे इस सम्बन्ध में अति करने का मुझे दण्ड दिया और मै ऐनीमिया तथा दीर्घकालिक वातशूल से पीड़ित हुई। अब मै कल्पना

कर सकती हूँ कि अध्यापिका मेरी उस उत्पीड़क आशंका को, जो मेरे अठारहवें वर्ष से मेरा पीछा कर रही थी, जानकर कितनी उद्विग्न हुई होगी।

परन्तु एक दूसरी बात ऐसी बन पड़ी कि उससे हम दोनों को बहुत सुख मिला। यह थी उसका मेरे साथ उसी प्रकार खूब खुलकर बातें करना जैसा वह दूसरों के साथ करती थी। कैम्ब्रिज स्कूल के हमारे अनुभवों से उसमे एक विशेष समझदारी यह आ गई थी कि वह सार्वजनिक मामलों पर अपने विचारों को मेरे सामने प्रकट करने लगी थी, क्योकि उसने वहाँ खुलेआम यह कहे जाते सुना था कि वह मेरे तरुण मस्तिष्क पर अपनी धाराओं को थोपती है। कनाडा के एक मित्र ने, जो सदैव साधन-हीन लोगों में सांस्कृतिक कार्यो की प्रगति के लिए सचेष्ट रहता था और प्राय· सफलतापूर्वक, मुझे एक बुद्धिमत्तापूर्ण पत्र लिखा। उसने मेरे लिए लिखा था कि मै एक ऐसी तरुणी हूँ जिसे अन्धे और बहरेपन के होते हुए भी शिक्षा मिली है और सुखमय बचपन बिताने को मिला है और शिक्षा जनतत्र का एक ऐसा सिद्धान्त है जो शिक्षित होने के योग्य प्रत्येक व्यक्ति पर लागू होता है। उसने मुझे स्मरण दिलाते हुए लिखा था कि मुझे प्रायः महान् गुणवान् और प्रभावशाली लोगों की संगति प्राप्त होती है और सुझाव दिया था कि मै उसके नाम का उल्लेख न करते हुए कुछ प्रभावशाली परोपकारी सज्जनों के सामने क्यूबा मे लड़कियो के लिए एक स्कूल खोलने की उसकी योजना रखूँ। उसने अपनी योजना की रूप-रेखा बहुत योग्यतापूर्वक तैयार की थी और उसने मुझे सब आवश्यक सूचनाएँ भेज दी और अध्यापिका को इसमे कोई हानि प्रतीत न हुई कि मै इस सम्बन्ध में श्रीमती हटन को एक पत्र भेज दूँ। श्रीमती हटन ने इस योजना में रुचि प्रदर्शित की और यह योजना अपने से सम्बन्धित कुछ धनी लोगो को दिखाई। अध्यापिका के समान उसका भी विचार था कि इस योजना का विचार निर्माणकारी है और सम्भव है, कोई इसे अपना ले। ऐसे ही आकस्मिक बीजों से विश्व-व्यापी आन्दोलन विकसित हुए है। हमें तब आश्चर्य के साथ-साथ बहुत दुख हुआ जब श्रीमती हटन ने लिख भेजा कि उसके मित्रो को विश्वास नही हो रहा है कि यह पत्र मैंने लिखा था। सुसंस्कृत एवं साधन-सम्पन्न लोगों के कल्पना और सार्वजनिक भावना से रहित इस प्रकार के व्यवहार से आहत होकर अध्यापिका इसके बाद मेरे साथ शिक्षा-सम्बन्धी, राजनीतिक, सामाजिक या धार्मिक बातों, जो उसको अत्यधिक आन्दोलित करती थी, पर मौन रहने लगी। कालेज में भी, जैसा कि वह समझती थी, समाज के अत्याचार ने उसे जकड रखा था, क्योंकि इस अत्याचारी समाज ने घोषित कर दिया था कि मैं तो उसके (अध्यापिका के) विचारों

और भावनाओं को प्रतिध्वनित करनेवाला एक यंत्र-मात्र हूँ। परन्तु उसके विवाह के बाद, उसमें एक शुभ परिवर्तन लक्षित हुआ। उसकी उँगलियाँ—उसकी जिह्वा का तो कहना ही क्या—मुक्त हो गई, और मुझे एक नये प्रकार की मैत्री आनन्दित करने लगी। हमारे अपने ही घर में, जब कभी जॉन हमे विवादास्पद प्रश्नों के विषय मे पढकर सुनाता, अध्यापिका बिना किसी छिपाव के अपनी राय मुझ पर प्रकट कर देती और तब आराम से उस प्रश्न पर लड़ना उसके और मेरे लिए मनोविनोद और आनन्द का विषय बन जाता।

वह स्त्री-मताधिकार की समर्थक नही थी और मै थी। उस समय वह बहुत रूढ़िवादी थी। इसके अतिरिक्त कि वह मनुष्य-निर्मित सभी सीमाओं को एक अपराध मानकर उनसे लड़ती थी और बुद्धि, अन्तःकरण एवं जिज्ञासा की स्वतन्त्रता को पवित्र मानती थी, वह कभी भी झंडा उठानेवाली नही रही। जितनी ही अधिक हम परस्पर बात करते, उतनी ही हमारे विचारो की समानता कम होती जाती, सिवाय इसके कि हम दोनों ही समान रूप से भलाई करना चाहती थी और हममे समान रूप से यह तीव्र इच्छा थी कि बुद्धि मनुष्य-मात्र का एक सर्वसामान्य गुण बन जाये। मार्कट्वेन के समान वह भी प्रगति के सम्बन्ध मे बहुत निराशावादी थी। यहाँ तक कि अन्धो का कल्याण-कार्य भी इसका अपवाद न था। उसने किन्ही अपवादस्वरूप अन्धो को, जिन्होने अपने दुर्भाग्य की कारा को एक सेवा के राज्य मे परिणत कर दिया था, अपने दुर्भाग्य का बहुमूल्य बदला प्राप्त करते हुए देखा था, परन्तु औसत दर्जे के अन्धे पूर्ण जीवन प्राप्त कर सकते है, इसमे उसे संदेह था। यह मेरे आनन्द का विषय है कि मै यह सिद्ध करने में सफल हो सकी कि इस देश में और ग्रेट ब्रिटेन में पिछले तीस वर्षो में "औसत" अन्धों के कल्याण-कार्य ने ऐसी प्रगति कर ली है कि निरन्तर अधिकाधिक संख्या मे अन्धे और कुछ बहरे-अन्धे भी आत्म-निर्भरता तथा वास्तविक सुख प्राप्त कर रहे हैं। जब भी मेरे विचार अध्यापिका की ओर जाते हैं, मै प्रार्थना करती हूँ कि वह इनमे उन कोषो के दर्शन करे, जिन्हे इनके अन्धकारमय जीवन मे उद्घाटित करने की उसे आशा न थी। सचमुच, जैसे-जैसे उसका पूरा व्यक्तित्व मेरे सामने स्पष्ट होने लगा, मैंने देखा कि यह एक बुनी हुई अग्नि-शिखा का जाल था, और मै स्वयं को एक ऐसा कृपा-पात्र अनुभव करने लगी, जिसे उसकी वेगवान अन्तःस्फुरणाओं की अदाहक अग्नि और अग्रगामी विचारों मे विचरण करने का सौभाग्य प्राप्त था। वे कुछ वर्ष, जिनमे विवाह ने उसे सन्तोष प्रदान किया, किन्ही बातो में हमारे सह-जीवन के सर्वाधिक फलप्रद वर्ष थे।

परन्तु अपने स्वभाव के अनुसार अध्यापिका अपनी व्यग्रता को एक गॉव मे, जहॉ कोई नवीन घटना न होती थी, बाँधकर न रख सकी और न घर के काम-धन्धे के अनुशासन मे अपने आपको बाँध सकी—थोरो ने उसके दृष्टिकोण को समझ लिया होता। जब कभी उसे अवसर मिलता, वह घुड़सवारी द्वारा अपनी साहसिक प्रकृति को तृप्त करती। दुर्भाग्यवश उसका चुना हुआ एक घोड़ा बड़ा दुष्ट था, फिर भी क्योंकि वह सुन्दर और होशियार था, वह उसे अपनाये रही और मुझे आशा थी कि उसका कृपापूर्ण व्यवहार और उसका मधुर स्वर इसे वश मे कर लेगे। एक दिन सबेरे मै मैदान मे घूम रही थी और जब मैने मकान मे प्रवेश किया, किसी ने मुझसे कहा, "उस दुष्ट घोड़े ने अध्यापिका को मारने की चेष्टा की है। उसने उसे घास पर पटक दिया और अब वह पड़ी हुई है।" मैने पूछा कि क्या उसे गहरी चोट आई है ? उसने कहा, "नहीं, पर वह बुरी तरह हिल गई है।" अकस्मात् मैं क्रुद्ध हो उठी। सोलह वर्षो तक उसने किसी प्रकार की चेतावनी की परवाह न कर जो भी घोड़ा मिल जाता उस पर सवारी करने के अवसर को हाथ से न जाने दिया था। इस प्रकार पागलों की तरह जिस किसी घोड़े की पीठ पर चुपके से उसके खिसक जाने से मेरे तो छक्के छूट जाते थे और अब मेरी समझ में न आ रहा था कि मै क्या करूँ। मैं उससे कटु शब्दो मे बोली और उसने तीखी हँसी हँसते हुए कहा, "क्या यही सहानुभूति है जो मुझे कष्ट मे आ पडने पर मिलती है ?" कुछ घटे बीत गये, और ओह! इस बीच वह नत-मस्तक हो चुकी थी। वह मुझसे आकर बोली, "हैलेन, मुझे खेद है कि मैं रसोईघर से और उन सभी वस्तुओ से जो मनुष्य को बूढ़ा बनाती हैं, भागने की कोशिश कर रही थी। मुझे चूम लो, मैं अब एक नया पृष्ठ खोलूँगी।" इसके बाद मैंने उससे कभी घरेलू काम-धन्धो के सम्बन्ध मे कोई शिकायत न सुनी और बहुत वर्षो बाद मै अध्यापिका के इस असाधारण व्यवहार का वास्तविक कारण समझ सकी। परन्तु वह एक ऐसा दुखमय रहस्य है जो जीवन के रहस्यों की गहराई मे झॉकनेवाले स्त्री-पुरुषों के हृदय में बन्द रहता है।

१०

दुख के साथ मैने लक्ष्य किया कि अध्यापिका का ऊर्जस्वित स्वास्थ्य निर्बल होने लगा था। इसके बहुत कुछ कारण उसके स्नायविक उपद्रवों के दौरे, उसकी आँखों का सतत कष्ट और संतान न होने से उसकी निराशा थे। इनके ऊपर अन्य अनेक शारीरिक कष्ट आ इकट्ठे हुए—जब हम अपने भाषण के दौरे पर रवाना हुए उससे पहले उसे एक बड़ी शल्य-चिकित्सा (ऑपरेशन) करानी पडी थी। मार्ग मे उसे प्राय: तेज जुकाम हो जाता था और एक बार सीढ़ियों से गिरने से उसकी बॉह टूट गई थी और गले की हड्डी उखड़ गई थी। इन क्षतियों का उचित उपचार तब तक न हो सका, जब तक वह डा० गोल्डवेट की देख-रेख मे अस्पताल मे न गई।

फिर भी, उसकी परेशानियों के बादलों के बीच आकाश का एक प्रकाशमान टुकड़ा भी था। जॉन उसको और मुझको वुल्फबौरो, न्यू हैम्पशायर ले गया, जहाँ डा० ब्रैडफोर्ड गठिया (रूमैटिज्म) के भीषण आघातों के कारण कार्य से अवकाश ग्रहण कर रहते थे। इन्होंने बहुत वर्ष पहले अध्यापिका की आँखों की शल्य-चिकित्सा की थी, जिसके परिणामस्वरूप उसकी नजर कुछ-कुछ वापिस आ गई थी। डा० ब्रैडफोर्ड ने हमारा अत्यधिक प्रसन्नता से स्वागत किया। उन्हें पिछली शल्य-चिकित्सा का प्रत्येक ब्यौरा याद था। उन्होने आश्चर्य प्रकट किया कि इतनी निर्दयता से प्रयोग किये जाने पर भी ऐन की ऑखें इतना अच्छा काम देती रही हैं। उन्होंने अध्यापिका की ऑखो पर घिरते हुए कणों (ग्रैन्यूल्स) को हटाने के लिए ऐसम की बूंदों के प्रयोग की व्यवस्था दी और अब हमने कुछ समय के लिए निश्चिन्तता की सॉस ली।

तरुणाई के उन दिनों मे जो मेरे आध्यात्मिक विकास का पोषण करने के लिए इतनी उत्साहवर्द्धक खोजों और मानसिक व्यायाम से पूर्ण थे, मैं कभी-कभी अध्यापिका के साथ धार्मिक बातों की चर्चा कर लेती थी। दूसरों के साथ वह जितनी खुलकर बातें कर लेती थी, वैसे ही मेरे साथ भी खुलकर बातें करने के लिए उसने समय और मेरे व्यक्तित्व के विकास की प्रतीक्षा की

थी। रॉबर्ट इन्गर्सोल के समान उसके लिए भी उन विभिन्न मतों और सम्प्रदायों का कोई उपयोग न था, जिनका कर्णकटु कोलाहल विश्व भर की भाषण वेदियों पर से गूँजता रहता है। वह कहा करती थी, "धर्म केवल विश्वास करने मात्र की ही नही, अपितु जीवन की प्रणाली है। शब्दो की अपेक्षा कार्यों मे जो तुम्हें सत्य प्रतीत हो, उसके तुम साक्षी बनो। युग-युग से लोग धार्मिक विश्वासों को लेकर एक दूसरे के टुकडे-टुकडे करते आये है, परन्तु इससे उनका क्या कल्याण हुआ ? इससे कही अच्छा है, दूसरो को जीवन-यापन करने में और वह भी अधिक अच्छी तरह से सहायता देना। बुद्धिमत्तापूर्वक विचार करने और गौरवशाली कार्य करने के प्रयत्न मे लगे हुए किसी हृदय को दुखी बनाने और किसी आत्मा को विचलित करने की चेप्टा मत करो।" मैंने उसे बताया कि ऐमैनुएल स्वेडेनबर्ग ने बाइबिल की एक जीवन-प्रणाली के रूप में व्याख्या कर मेरी कितनी सहायता की थी। इससे वह बहुत दुखी जान पडी कि मैंने स्वयं अपने मन को टटोलने की अपेक्षा स्वेडेनबर्ग या अन्य किसी धर्माचार्य के अठारहवी शताब्दी के सिद्धान्तों को पसन्द किया। लम्बी-चौड़ी व्याख्याओं से उसे चिढ़ थी, और इसलिए मैंने उसे यह न बताया कि स्वेडेनबर्ग कोई धर्माचार्य न थे, वरन् वे एक रचनात्मक विद्वान् थे जो प्रेम या सद्भावना और तर्क अथवा स्पष्ट विचार-प्रणाली का, जिसका अनेक चर्चों ने केवल विश्वास को ही प्रामाणिक मानने के कारण तिरस्कार कर दिया था, संयोग करने में संलग्न थे—न मैंने उसको उस तथ्य का स्मरण दिलाया जिसे वह अच्छी तरह जानती थी, कि हममें से अधिकतर लोग अपने विचार सर्वप्रथम दूसरों से प्राप्त करते हैं, और हमारी मौलिकता केवल इन विचारों को व्यक्त करने के ढंग में रहती है। इसके बदले मैंने उसे बताया कि मै कितनी प्रसन्न थी कि स्वेडेनबर्ग ने मेरी कल्पना को व्यक्तिगत अमरत्व तथा साथ ही भौतिक पदार्थों के अमरत्व के शिखरों एवं घाटियों में विचरण करने के लिए मुक्त कर दिया था।

"मैं अमरत्व में विश्वास नहीं करती।" उसने कहा, "जब मै इस शब्द को सुनती हूँ तो मेरे मन मे चुभन होती है। इसके अतिरिक्त इस धरती मे इतना सौन्दर्य और विनोद तो है ही कि यह यहाँ मेरे लघु जीवन को इनसे भर सके।"

"मैं भी सुन्दर विचारों से प्रेम करती हूँ," मैंने कहा, "और मेरे लिए उस मानव-प्राणी से बढ़कर पूर्ण और कोई नहीं है जो सुन्दर विचारों और कल्याणमय कार्यों में से पुष्पित एवं फलित सुखकर अमरत्व से युक्त हो।"

"यह मेरे लिए सन्तोष का विषय है कि तुम इसकी अपेक्षा अधिक रमणीक संसार की आनन्द के साथ आशा कर सकती हो। यह अवश्य है कि मै समय-समय पर अनेक बाते कहती रहती हूँ और तुम्हे भिन्न प्रकार से विचार करते देखने की इच्छुक प्रतीत होती हूँ, परन्तु मेरी इच्छाओं के इससे अधिक प्रतिकूल और कोई बात नही है। मेरी धर्म में रुचि नही है, और तुम्हारी है। हम असहमत होने के लिए सहमत हो जायँ और यथाशक्ति अपने-अपने आदर्शों के अनुकूल रहने की चेष्टा करे।"

"हॉ प्रिय, हृदय और बुद्धि मे मै तुम्हारी मॉ हूँ, परन्तु तुम पर मेरा अधिकार नही है। मै चाहती हूँ कि तुम अपने मत स्वतन्त्र रूप से बनाओ। केवल, स्वयं को प्रतियोगी सम्प्रदायों और मतों से अलग रखो, और किसी धर्मान्धता मे न उलझो। जिनके साथ तुम्हारा मतभेद हो, उनके प्रति सदैव न्यायपूर्ण एवं उदार बनो।"

अध्यापिका और मैंने साथ-साथ जीवन के भले-बुरे विविध पक्ष देखे, जिनसे मेरे पुस्तको मे पढे हुए पात्र सजीव और विश्वसनीय हो गये। अध्यापिका की आलोचनाएँ संक्षिप्त, महत्त्वपूर्ण और सुधारक होती थी। जीवन मे जिन दुष्टतम व्यक्तियो से उसका पाला पडा था, क्रोध शान्त हो जाने पर और उनकी उपस्थिति से दूर चले जाने पर वह उनके उपयोगी गुणो का भी विचार करती थी। उसके स्वभाव मे एक ऐसी महान् निष्कलुषता थी कि वह कभी यह विश्वास न कर पाती थी कि कोई वस्तुतः बुराई से प्रेम करता है। वह कहा करती, "मै भावी जीवन में विश्वास नही करती, इसका एक कारण यह है कि मै ऐसे बुद्धिमान्, न्यायी ईश्वर की कल्पना नही कर पाती जो अपनी इच्छा का पालन न करने के कारण अपने प्राणियों को शाश्वत अग्नि मे जलाता रहता है। इसके अतिरिक्त, यदि उन्हे अपनी दुष्टता की चेतना हो, तो वे इतने पश्चात्ताप का अनुभव करने लगें कि जीवन असह्य हो जाये और ईश्वर को उन्हें मारने और इस प्रकार उनसे ईश्वरत्व (गाड-हेड) छीन लेने के लिए बाध्य होना पड़े।" मैंने उसे बताया कि वस्तुतः बुराई तो इस जन्म में और अगले जन्म में स्वयं ही अपना दंड पा लेती है (मैंने इमर्सन का सुन्दर लेख "कम्पैन्सेशन" (क्षति-पूर्ति) नही पढ़ा था, जिसमे इस विचार पर जोर दिया गया है) और ईश्वर ऐसे दुष्टों की आँखों पर, जिनका उपचार नही हो सकता, पर्दा डाल देता है और उन्हें उनकी विकृत रुचियों के अनुकूल एक पृथक् लोक में रख देता है, जहाँ उनकी गर्हित आकांक्षाएँ और सुखभोग दूसरों को आक्रान्त या नष्ट नहीं कर पाते। मैंने आगे कहा कि इस पृथक् लोक में वे और अधिक

बुरे नही बन पाते, और हमारे लिए अकल्पनीय आश्चर्यजनक विधियो से उनका उपयोग उन लोगो को सबल बनाने मे किया जाता है जो औचित्य के इच्छुक होते है ।

हाथ मे कुछ संकेत करते हुए वह बोल उठी, " प्रभु को धन्यवाद कि तुमने धर्म का उपदेश प्रसन्नता के क्षणो मे और इस धरती को एक अकाल पुनर्जन्म की आवश्यकताओं का दास बनाने की अपेक्षा इसको मानवता का कम से कम एक अस्थायी ही सही, निवासस्थान बनाने के लिए प्राप्त किया है। मैं तुम्हारे विश्वासों का आदर कर सकती हूँ, क्योकि तुम उनका उपयोग एक निर्बल प्राणी के समान अपने आपको अपने अन्धे और बहरेपन के प्रति सान्त्वना देने के लिए नही करती, वरन् तुम इनका उपयोग उस सुख के अंग के रूप में करती हो जिसका ईश्वर हम सबके लिए सृजन करना चाहता है।"

उसे उन सम्प्रदायो से घृणा थी जो मनुष्यों पर यह धारणा लाद देते हैं कि ईश्वर उन्हे सुखी देखना नहीं चाहता। उसका यह भी कहना था कि संसार मे लगभग एक दर्जन विभिन्न धर्म हैं और आचार-शास्त्र है और सहस्रों छोटे-मोटे सम्प्रदाय और मत हैं और यद्यपि मतमतान्तर अनेक है, परन्तु मानव-प्रकृति के दोष सर्वत्र समान हैं। उसे एक दुष्ट मुसलमान, एक दुष्ट ईसाई और एक दुष्ट बौद्ध में कोई अन्तर न दिखाई देता था। इनमे से प्रत्येक ही उन मान्यताओं के अनुसार जीवन-यापन करता है जिनके लिए वह अपने प्राणों का भी स्वेच्छा से त्याग कर सकता है, और साथ ही वह मूलभूत सदाचारों का अभ्यास न कर अपनी उन्नति रोके हुए है। यदि किसी अधिक व्यापक या प्रचलित धर्म-मत का पंडित या धर्माचार्य उसे अपने धर्म का अनुयायी बना लेता है, तो इससे अन्तर केवल इतना पड़ता है कि वह उन गुणो के विषय मे जिनका वह स्वयं अभ्यास नही करता, बात करने का एक नया ढंग प्राप्त कर लेता है।

मैं समझती हूँ, अध्यापिका की बुद्धि, महात्मा गाधी की व्यक्तित्व के विकास की योजना को सम्यक् आचरण के सिद्धान्त की अवहेलना करनेवाले रीति-रिवाजों और संस्थाओं का निष्क्रिय असहयोग—सम्भवतः एक या दो बातों को छोड़, स्वीकार कर लेती। व्यक्तिगत प्रगति के लिए दूसरे के कार्यो को अस्त-व्यस्त करना आवश्यक नही है। हम केवल बुरी प्रणालियों या संस्थाओं में भाग लेने से अपने आपको अलग ही रख सकते हैं, परन्तु हमें स्मरण रखना चाहिए कि व्यक्ति अपने विकास की आध्यात्मिक प्रगति के अनुपात में ही शक्तिशाली बनता है। हम दोनो का विश्वास था कि आत्म-सुधार अत्यधिक

कठिन नहीं रह जाता यदि कोई इसकी आवश्यकता को अपनी बुद्धि की आँखों से देख ले और इसको चेतना एवं इच्छा-शक्ति के आन्तरिक अनुभव के रूप में समझ ले। मेरे प्रिय अभिभावक पिता (फोस्टर फादर) श्री जॉन हित्ज ने मुझे इस समस्या को इस दृष्टि से देखने के लिए प्रोत्साहित किया था और उन्होंने अध्यापिका से कहा था, जैसा कि वह स्वयं भी अपनी सहज बुद्धि से समझ चुकी थी, कि किसी व्यक्ति पर बाहर से जो सदाचार के नियम बलपूर्वक लाद दिये जाते हैं, वे उसके आन्तरिक विकास में बाधक बन जाते हैं और उसकी सुन्दरतम अन्तःप्रेरणाओं तक की सहज अभिव्यक्ति को रोककर उस पर एक अतिरिक्त भार बन जाते है।

"तो तुम देखती हो, हैलेन," अध्यापिका बोली, "कि तुम्हें युग-युग के निष्ठुर धर्म-शास्त्रो से क्यों अभिभूत न होना चाहिए या क्यों मनमाने ढंग से धर्मात्मा न बन जाना चाहिए। प्रत्येक मानव एक रहस्य है और न तो तुम और न कोई भी मरणधर्मा प्राणी, उसकी बुद्धि के अनन्त घुमावों को समझ सकता है। केवल ईश्वर में ही यह ज्ञान है और यदि कोई परलोक है, तो वह अपने उत्पन्न किये हुए खराब से खराब प्राणी में भी शुद्ध आत्मा की एक चमक देख सकता है, जो उसे नरक से बाहर खीच ले।"

मैं सोचती थी कि मेरे भाग्य-परिचालक विश्वासों के विषय मे मेरे साथ कुछ मिनटों तक भी खुलकर बात करने की अनिच्छा के कारण ही अध्यापिका कभी-कभी युक्ति-हीन बन जाती थी। वह कह देती "केवल सरल, मधुर, परि-स्थितियों के अनुकूल......बनो"—मैं उसके शेष उपदेशों को नही गिना सकती। वह असंगत बातें कहने लगती या शायद मुझे ही उसकी बातें ऐसी लगती—इसके अतिरिक्त उसे मेरे भाषण-स्वातन्त्र्य और आत्माभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के अधिकार की चर्चा करने की आदत हो गई थी और उसकी उत्तेजना से मुझे ऐसा लगता जैसे वह बहुत से रहस्यों को छिपाये हुए है।

पच्चीस वर्ष बाद, जब मेरी अधिकांश पुस्तकें लिखी जा चुकी और मेरा "अमरीकन फाउन्डेशन फार दि ब्लाइण्ड" (अन्धों के लिए अमरीकी संस्था) का काम सुस्थापित हो चुका, मैं अध्यापिका के ट्यूक्सबरी के अनाथालय में बिताये जीवन के विषय में जान सकी। नेला उसके विषय में एक पुस्तक लिख रही थी और मैं बहुत कृतज्ञ थी कि यह काम एक सच्चे, समझदार मित्र ने अपनाया था। पौली छुट्टी में बाहर गई हुई थी। अध्यापिका और मैं अपने फारेस्ट हिल, लौंग आइलैण्डवाले मकान में अकेली थी। मुझे अपनी कहानी सुनाने से पहले अध्यापिका ने नौकरानी को भी शाम के लिए बाहर भेज

दिया और अपने शैटलैण्ड कौली (कुत्तों की एक जाति) कुत्ते डिलीस तक को एक दूर के कोने मे बाँध दिया। तब हम अगल-बगल बैठ गये और उसके प्रारम्भिक वर्षों का रोमांचकारी नाटक मेरी हथेली में प्रकट होने लगा। वहाँ वह बैठी थी—रूपवती, प्रतिष्ठित, भावुक—एक अध्यापिका जिसे सारा विश्व जानता था, एक व्यक्तित्व जिसके प्रति महान् एवं गुणवान् व्यक्तियों ने मेरे सामने उच्च कोटि का सम्मान प्रदान किया था, और वह दैन्य, पतन एवं रोगों में पड़े लोगों के बीच बिताये हुए अपने बचपन की करुण कथा मेरी हथेली मे उँडेल रही थी।

दीर्घकाल तक मैंने प्राथमिक दरिद्रता की समस्याओं का अध्ययन किया था, और उसे मुझ पर यह विश्वास हो गया था कि मै इन समस्याओ को समझती हूँ। मैंने कल्पना में अपने आपको उस कुत्सित वातावरण में दिन बितानेवाले उस आधे अन्धे, एकाकी बच्चे की स्थिति में रखा और मैं तो उसकी उन हिचकियों से, जिनके साथ उसने एक आधी शताब्दी के मौन के बाद अपने भाई जिम्मी की अनाथालय में मृत्यु का वर्णन किया, विचलित हो उठी। मेरी आत्मा में इतनी तीव्र वेदना हो रही थी कि मै उस रात सो न सकी। मैं अध्यापिका के अपने भाई के प्रति प्रेम पर विचार करती रही और मैं अनुभव करने लगी जैसे वह मेरा अपना भाई रहा हो। उसे यह जानकर सान्त्वना मिलती प्रतीत हुई कि हम दोनों के हृदय में उसकी मूर्ति समान स्नेह के साथ बसी हुई थी। तब मै उन उदास बनानेवाली स्मृतियों को समझ सकी, जिन्होंने उसके लिए किसी के साथ मृत्यु या अमरत्व के विषय मे चर्चा करना बहुत कष्टकर बना दिया था। फिर भी, यह कथा सुना देने के बाद उसकी मनःस्थिति बहुत कुछ शान्त हो गई, और कभी-कभी तो वह मेरी तरह इस भौतिक जीवन के चारों ओर "मधुरता के अन्दर मधुरता के समान" व्याप्त आध्यात्मिक जीवन का आभास भी पाने लगी और आखिर, यही तो मेरी शिक्षा का सर्वाधिक नवजीवन प्रदान करनेवाला अंग था—यह शिक्षा मेरे मस्तिष्करूपी आकाश में नवीन नक्षत्रों को प्रतिष्ठित करनेवाली थी, यह—

प्रभु मुख से उच्चरित सप्राण शब्द,
दृश्य ध्वनि, वाच्य आलोक,

थी, एक ऐसा शब्द थी जिसने मेरे लिए काल अन्तरिक्ष और शाश्वत सत्य को प्रकाशित कर दिया।

अध्यापिका के इस रहस्योद्घाटन का एक दूसरा परिणाम यह हुआ कि इससे मुझमे सन्तुलन की भावना आ गई। इससे पहले, उसके जीवन के इस

भाग से परिचित न होने के कारण, मैं कभी-कभी उसके स्वभाव की कुछ विचित्रताओं को देखकर स्वयं को एकाकी और भ्रान्त अनुभव करने लगती थी। मैंने विश्व के समक्ष प्रकाशित करने के लिए इस रहस्य का, जो उसके जीवन को ढके हुए था, कभी उद्घाटन करने की चेष्टा न की होती। फिर भी, उसके स्वभाव की विचित्रता तो रहस्यमय बनी हुई थी। हमारे पारस्परिक सम्बन्धों मे किसी ऐसे सूक्ष्म तत्त्व का अभाव लगता था, जो शब्दों मे व्यक्त नही किया जा सकता, परन्तु जब उसका वीर, भाराक्रान्त हृदय मेरी आन्तरिक दृष्टि के सामने अनावृत हो गया, तो मुझे इस बात से अपने मे एक नये प्रकार का साहस उमड़ता हुआ जान पड़ा कि अध्यापिका उपेक्षा की उस मरुभूमि को पारकर शिक्षा के शाद्वल में पहुँची थी और तब उसे अपना जीवन मेरे कल्याण मे उसी प्रकार लगा देने का सुयोग मिला था, जैसे कि उसने उन कुछ महीनों तक, जब तक कि ट्यूक्सबरी मे जिम्मी उसके साथ रहा, अपने आपको जिम्मी पर न्योछावर कर दिया था।

हम फिर रैन्थम में प्रारम्भिक दिनो की ओर लौट चलें। अध्यापिका के स्वभाव का एक और भी पक्ष था जिसने मुझे आश्चर्य मे डाल दिया था। हम थोड़ा सा ग्रीष्मावकाश बिताने के लिए केप-कौड गये हुए थे। यहाँ हम एक कुटीर मे ठहरे थे जिसके समीप एक भोजनालय था, जहाँ से हम भोजन प्राप्त कर सकते थे और अध्यापिका यहाँ विशेष रूप से प्रसन्न थी क्योकि वह एकान्त चाहती थी। हम तैरते रहे थे और उसने अँगीठी पर आग जला ली थी, क्योंकि अकस्मात् मौसम बहुत ठंडी हो गई थी। अकस्मात् मै जलते हुए कागज की तेज भभक से चौक पडी और बोल उठी, "अध्यापिका, तुम क्या कर रही हो?"

"मैंने अपनी दैनन्दिनी (डायरी) जला दी है" उसने शान्त स्वर में बताया, "और मै निश्चिन्त हो गई हूँ।"

जब मै नौ वर्ष की थी, मैंने कागज को चेहरे के बिलकुल समीप रखकर उस पर कुछ घसीटती हुई अध्यापिका को स्पर्श कर उससे पूछा था, "तुम क्या लिख रही हो?"

"ओह, बहुत जिज्ञासु मत बनो," उसने हँसकर कहा था, "तुम मुझे कभी एकान्त मे नही रहने देतीं। मै भी तो अँगरेजी सीख रही हूँ, और मै दैनन्दिनी लिख रही हूँ। जाओ, मुझे तंग न करो।"

मैंने यह दैनन्दिनी कभी न देखी थी। जब यह जला दी गई, मैंने उससे झगडते हुए कहा, "तुमने इसे क्यों जला दिया? निश्चित ही इसमें

मौलिक विचार रहे होंगे और शिक्षा के विषय में तुम्हारी अपनी धारणाएँ रहा होंगी।"

"यह तो मुझे नही मालूम और मुझे इसकी परवाह भी नहीं है," उसने शान्त भाव से कहा, "यह मुझे बहुत भद्दी, प्रतिशोधात्मक और एकपक्षीय जान पड़ी। मैंने यह देखने के लिए कि शायद इसमें कोई ऐसी बातें हों जिनसे तुम्हें मेरी जीवनी लिखते हुए कुछ सहायता मिल सके, मैंने इसे फिर से पढ़ने का प्रयत्न किया था, परन्तु मेरे लिए इस पर नजर डालना तक अपनी आँखों का दुरुपयोग करना सिद्ध हुआ। मैंने इसमें पृष्ठ पर पृष्ठ झिड़कियों से भरे देखे और मैंने इसको आग में झोंक दिया। यदि तुम या जॉन इसे पढ़ लेते तो मुझे क्षण भर के लिए भी शान्ति न मिल पाती।" उसने यह न बताया कि उसने इसे कब प्रारम्भ किया था और कितने समय तक वह इसे लिखती रही थी। इन प्रश्नों को टालते हुए उसने कह दिया कि यदि इसमे कोई उपयोगिता रही हो, तो वह इस उपयोगिता को खो चुकी थी।

अध्यापिका के संभवतः अत्यधिक कठोर आत्म-निर्णय के फलस्वरूप बेचारी दैनन्दिनी के भस्म हो जाने पर मैं केवल यही सोच पाई कि सैमुएल जॉनसन ने भी तो मृत्यु से पहले अपने कुछ कागज-पत्र जला डाले थे। मै हृदय की उस महत्ता का आदर करने लगी, जिसने जॉनसन और अध्यापिका को अपने समसामयिकों को घृणा या प्रतिशोध की भावना से भरे व्यक्तिगत उद्‌गारों से परेशान करने से रोक दिया था। अध्यापिका के स्वभाव में एक प्यारी बात यह थी कि जब कभी उसे किसी निरन्तर परेशान करनेवाले की गरदन मरोड़ने की घृणापूर्ण मनःस्थिति या उग्र भावना का स्मरण हो आता तो उस समय वह किसी भी आत्मनिन्दक विशेषण से जो उस समय उसके दिमाग में आ जाता, अपनी भर्त्सना करने लगती। इसलिए मैं कल्पना करने लगी कि हैनरी फ्रैडरिक ऐमील के समान उसने भी दैनन्दिनी का उपयोग एक प्रकार के मध्यकालीन आत्म-पीड़न के रूप मे किया होगा और तब (इस प्रकार दैनन्दिनी में अपने हृदय की कटु भावनाओं को उगल देने के बाद) उसके हृदय में संसार के प्रति पुनः मैत्री एव करुणा भर आती होगी। निस्सन्देह उसने इस दैनन्दिनी में अपने बचपन की दुखद स्मृतियों को छिपाकर रखा होगा, उन बातों को लिखा होगा जो उसने ट्यूक्सबरी में गर्भवती स्त्रियों से "उन भयंकर पुरुषों" के बारे में सुनी थीं और तरुण अवस्था मे वह अनाथालय के उस नरक के बारे में, जिससे वह बच निकली थी, जो कुछ समझ पाई होगी, वह सब उसने इस दैनन्दिनी में लिखा होगा। कदाचित् उसने इसमें पर्किन्स में अपने भाग आने

की बात का, वहाँ की उन अध्यापिकाओं की आलोचनाओं का जिन्होंने उसके अहम् को बुरी तरह झिंझोड़ दिया था और वहाँ के छात्रों की उस अविचारपूर्ण हँसी का जिसने उसे पागल बना दिया था, उल्लेख किया हो। संभवतः इसलिए उसने जल्दी-जल्दी में अपनी रुचियों और अरुचियों तथा सुविधाहीन लोगों के प्रति अपने उग्र स्नेह का उल्लेख किया हो और अपनी मानसिक यात्रा का वर्णन करने का प्रयत्न किया हो जो इस रूप में उसके कठोर बौद्धिक विश्लेषण से मुक्त उसके मानसिक विकास का एक वास्तविक चित्र होता एवं उन गलतफहमियों का भी उल्लेख किया हो जो उसे निरन्तर छेड़ती रहती थी। मै जानती हूँ कि यदि अन्य किसी के लिए नही तो कम से कम अध्यापिका के लिए तो इस दैनन्दिनी का निश्चय ही बहुत महत्त्वपूर्ण मूल्य रहा होगा। मुझे विश्वास है कि इसके लिखने से उसकी प्रारम्भिक स्मृतियों की—उन स्मृतियों की जिनकी उसे याद दिलाने में कोई मानव-प्राणी समर्थ न था—सजीवता एवं यथार्थता समय के तीव्र गति से बहते हुए प्रवाह में सुरक्षित रह सकी होगी। सचमुच उसने अपने आपको कभी एकान्त में मग्न न होने दिया, जिसमें वह जानती थी कि उसे मानव के प्रति घृणा के लोभ का सामना करना पड़ेगा। वह मेरे सामने हमेशा इस बात को अस्वीकार करती रही कि वह "भली" है और इसके प्रमाण में वह अपनी इस दैनन्दिनी तथा अपने प्रायः अविवेकपूर्ण व्यवहार की ओर संकेत कर देती थी। जितना ही वह इस बात पर जोर देती, उतना ही अधिक मैं उसमें धीरे-धीरे बनती हुई एक विशिष्ट विचार-पद्धति के—यथार्थ आत्म-निग्रह के जिससे दूसरों की निःस्वार्थ भलाई में आनन्द का अनुभव होता है, दर्शन करती। उसकी दृष्टि में कोरी नैतिकता या दिखावटी भलाई की, मलिन मुखवाले पापी की या भव्य आकृतिवाले दुराचारी की कोई उपयोगिता न थी, भले ही इनसे साधारण चरित्रों की विरसता दूर हो जाती हो। दुर्भाग्यवश, अपने उच्चकोटि के उत्साह मे वह यह भूल गई कि किसी को बुरे लोगों के द्वारा अच्छे काम सम्पन्न नहीं कराने चाहिए या विवेकशील विचारों को सीधे-सीधे बुरे लोगों द्वारा प्रचारित न कराना चाहिए, क्योंकि ये लोग देर-सबेर कभी न कभी इन कार्यो या विचारों को दूषित कर देते हैं। परन्तु जब उसका मन किसी उच्च उद्देश्य से अनुप्राणित हो जाता था तो संसार की कोई भी शक्ति उसको इस उद्देश्य से हटा न सकती थी।

कालेज में एक अवसर पर जब मैं होरेस के एक गीत का अँगरेजी अनुवाद सुना रही थी, अध्यापिका को अवश्य अपनी दैनन्दिनी का स्मरण हो आया होगा

और वह बोली, "हैलेन, होरेस ने ठीक कहा है। ऐसी वस्तुएँ नगण्य ही हैं जिन्हें तुम पूर्णतः काली या सफेद कह सको। स्थिर-बुद्धिवादी दार्शनिकों (स्टोइक्स) का कहना है कि दोषों का औचित्य यद्यपि सिद्ध नहीं किया जा सकता, परन्तु अनेक व्यक्तियो में ऐसे दोष भी होते हैं, जिनका एक अच्छा पक्ष भी होता है। उदाहरण के लिए, हो सकता है जिस आदमी को तुम "कंजूस" कहना चाहो, परन्तु सम्भव है कि वह दूसरों की वास्तविक सेवा करने के लिए धन का संचय करता हो, न कि अपने लिए, या संभव है, कोई ऐसा आदमी हो जो बुरे स्वभाव का बताया जाता हो, परन्तु उसके रोष का कारण उसका अपना भाग्य न होकर उसके चारों ओर घिरा हुआ कमीनापन और स्वार्थ हो। फिर, ऐसे भी लोग हैं जो महत्त्वाकांक्षी जान पड़ते है और जो वस्तुतः दूसरों की, जिनसे उन्हे बदले में कुछ नही मिलता, सेवा करने के अवसर खोजते रहते हैं। मैं स्वच्छ हृदय से तुमसे पूछती हूँ कि क्या तुम सोचती हो कि कभी-कभी मानव-स्वभाव पर आरोपित किसी दोष से कोई सुन्दर गुण प्रकट हो जाता है?"

मैने कहा कि मुझे तो यह प्रतीत होता है कि दैनिक समागम में और साहित्य में दोषों का निरूपण करनेवाले शब्दों की संख्या गुणवाची शब्दों से कहीं अधिक रहती है। वह बोली, "यह तो भाषा दलदल की ओर दौड़ी जा रही है। हम नई-नई अच्छाइयों को व्यक्त करनेवाले शब्दों के रूप मे स्वरों को क्यों नहीं उत्पन्न कर पाते और इनका उपयोग मानव-स्वभाव की अलसता की भद्दी पुनरावृत्ति को समाप्त करने में क्यों नहीं करते?" हमें यह जानकर प्रसन्नता हुई कि बोस्टन में यूनिटेरियन चर्च के डा० ऐडवर्ड ईवरैट हेल ने "ऐल्ट्रूइज्म" (परोपकारवाद), "सौलिडेरिटी" (सौमनस्य) जैसे शब्दों की, जो केवल पच्चीस या पचास वर्षों से ही अस्तित्व में आये हैं, और इन शब्दों से व्यक्त होनेवाले अभिनव अर्थों की एक सूची बनाई है और उनकी भविष्य-वाणी है कि अभी तक प्रेम की जिन गहराइयों या बुद्धि की जिन शक्तियों का वाचक कोई शब्द नहीं है, उनको व्यक्त करने के लिए अनेक नये शब्द गढ़े जायँगे।

अध्यापिका की दृष्टि में अच्छा बनने के लिए "प्रयत्नशील होना", अच्छाई के प्रति सहज प्रवृत्ति और हार्दिकता का अभाव था और मैंने इस दिशा में कोई प्रयत्न न किया। मैंने अधैर्य या अन्य दोषों को अपनी जीवन-प्रणाली से चुपचाप "धक्के देकर" बाहर कर दिया या उसे तब तक टिका रहने दिया, जब तक कि बार-बार ठोकरें खाने पर मैं इस शत्रु को इस प्रकार न पछाड़ देती जैसे कोई भेड़िया मूस (एक अमरीकी वन्य पशु) को पटक देता है, और

तब प्रभु को और अध्यापिका को मुझे उत्साहित करने के लिए धन्यवाद देने के सिवाय मै इसके बारे में कुछ भी न सोचती। टॉमस हुड के समान मैं भी अनुभव करती हूँ कि मै बचपन की अपेक्षा अब स्वर्ग से बहुत दूर जा पड़ी हूँ, परन्तु ईश्वर की प्रेरणा से, जिसने अध्यापिका का घोर कठिनाइयो के बीच मार्ग-प्रदर्शन किया, मै अपने भौतिक-जीवन को आध्यात्मिक बनाने के संघर्ष में जूटे रहने मे समर्थ हो गई हूँ।

अध्यापिका वस्तुतः लोगों से प्यार करती थी और उन्हें उनके साधारण जीवन से खींचकर अपने साथ आगे ले चलने की इच्छुक रहती थी, फिर भी इनसे वह बहुत उद्विग्न होती थी। बुद्धिहीन लोगों के प्रति सदय बनने लिए वह जीवन भर प्रयत्न करती रही। उनकी लगातार चपर-चपर बातों से वह ऐसी खीझ उठती थी जैसे कोई जंगली जानवरों के बाड़े से घबड़ा उठता है और उसके मन मे इनसे दूर भाग जाने की तीव्र इच्छा उठती। परन्तु उसकी सहृदयता इनके बुद्धिशून्य प्रलापो पर मौन का आवरण डाल देती और उनके मुँह से निकलनेवाले किसी रोचक वृत्तान्त को या किसी असाधारण वाक्य को या उनके मुख पर झलकनेवाले किसी भाव को या अपने परिवार अथवा नागरिक के रूप मे अपने कर्त्तव्यों के विषय में यदि वे कोई घटना सुनाते तो उसको लेकर वह अपने मन मे उनके बारे में किसी सुन्दर कल्पना का निर्माण कर लेती। उसकी बुद्धि अनेक स्वरोवाली वीणा के समान थी, परन्तु हम जिन लोगों से मिलते थे उनमे से अधिकतर लोगों मे इस बात को लक्ष्य करने की समझ न थी। इन लोगों की एक लीक पर चलनेवाली बुद्धि से वह ऊब उठती थी, परन्तु उनके प्रति अपने आचरण में वह न तो देवतुल्य बनने की चेष्टा करती थी और न बहुत सूक्ष्म ही। इन लोगों के सम्बन्ध मे उसके काल्पनिक चित्र भले ही उचित न कहे जायँ, परन्तु इन चित्रों के प्रभाव से ये लोग उसके लिये सह्य, रोचक और यहाँ तक कि प्रभावकारी भी बन जाते थे। कभी-कभी ऐसा होता कि अध्यापिका की बुद्धि के संसर्ग से या राजनीति के सम्बन्ध में उसके उत्तेजनापूर्ण शब्दों से इन लोगो की बुद्धि-शून्य गपशप भी इतने ऊँचे स्तर पर उठ जाती कि ये सप्राण विचार प्रकट करने लगते और इनकी तर्क-प्रणाली इतनी सुथरी हुई हो उठती कि मेरी जान-पहचान के अच्छे पढ़े-लिखे लोगों ने भी इस तर्क-वितर्क मे भाग लेने में अपना सम्मान समझा होता। इस प्रकार अध्यापिका हमारे घर पर मिलने के लिए आनेवालों की लम्बी गपशप में समय बिताती।

उस समय की दूसरी मधुर-स्मृति हैं वे उत्तेजनापूर्ण वाद-विवाद जो मेरे

और अध्यापिका तथा जॉन के बीच मनोविज्ञान के विषय में होते थे और उनकी वह उत्साहपूर्ण विशालहृदयता जिसके साथ उन्होंने मेरे "दि वर्ल्ड आइ लिव इन" (वह संसार जिसमें मै रहती हूँ) ग्रन्थ के प्रकट होने से पूर्व मेरे अस्तित्व के विविध पक्षों का अध्ययन किया। कालेज में मैने दर्शन-शास्त्र के अध्ययन से अनुभव किया कि मैं "दि स्टोरी आव माइ लाइफ" लिखते हुए अपनी स्थिति का ठीक वर्णन नही कर पाई हूँ। जब मैने रैडक्लिफ में प्रवेश किया उस समय तक मै इस अर्थ में तो काफी बड़ी हो चुकी थी कि मेरी जीवन-कथा का अनेक बार वर्णन हो चुका था, परन्तु एक व्यक्ति के रूप में मै तब तक बहुत छोटी और अपरिपक्व ही थी। बालिका हैलेन अन्य तरुणों जैसी दिखने के लिए इतनी उत्सुक थी कि उसने अपनी समस्त मानसिक प्रक्रियाओं को उनकी जैसी ही समझ लिया। अपने विषय मे वह केवल शब्दों का प्रयोग कर सकने का आनन्द लेने के लिए लिखती थी, न कि इसलिए कि उसने शिक्षा प्रारम्भ करने से पहले के वर्षो मे किसी विषय पर ध्यानपूर्वक विचार किया था। बाद में जब मैने "दि स्टोरी आव माइ लाइफ" को फिर से देखा तो मुझे इसमें घटनाओं के ठीक-ठीक वर्णन का अभाव खटका। मैने देखा कि इस पुस्तक में मैने अपनी सुसम्बद्ध विचार-क्रिया का वर्णन रूढ़ि का अनुसरण करते हुए कर दिया था, जब कि ऐसी विचार-क्रिया "छाया" के शून्यप्राय संसार में सम्भव न थी—वह व्यक्ति-शून्यता का अचेतन होते हुए भी चेतन विराम-काल था। जब मै "दि वर्ल्ड आइ लिव इन" लिखने मे लगी थी, मैने "बिफोर दि सोल डौन" (आत्मा के जागरण से पूर्व) शीर्षक ग्यारहवें अध्याय में अपने कथन को बदल देने का निश्चय कर लिया। नीचे मै जो अंश उद्धृत कर रही हूँ, उससे मेरे परिवार में हलचल सी मच गई।

"मै नहीं जानती थी कि मै रंच-मात्र जानती हूँ या जीवित हूँ या काम करती हूँ या इच्छा करती हूँ। मुझ मे न इच्छा थी और न बुद्धि। मै एक प्रकार की अन्धी पाशविक अन्तःप्रेरणा से वस्तुओं तथा कार्यो की ओर प्रेरित होती थी। मुझमे एक मस्तिष्क था जो मुझे क्रोध, तृप्ति या इच्छा का अनुभव कराता था। इन दो तथ्यों से मेरे आस-पास के लोग सोचते थे कि मुझमें इच्छा और विचारशक्ति है। मुझे इन सब बातों का स्मरण इसलिए नहीं है कि मै जानती थी कि अमुक वस्तु ऐसी है अपितु यह स्मरण स्पर्श-जन्य स्मृति के कारण बना हुआ है। इससे (स्पर्श-जन्य स्मृति से) मै यह स्मरण कर पाती हूँ कि तब मैने अपना माथा कभी विचार-क्रिया मे नही सिकोड़ा था। मैने कभी पहले से ही किसी बात पर विचार नही किया और न किसी वस्तु को चुना ही।"

इस अंश को पढ़कर मेरी माँ बहुत परेशान हुई और उन्होंने चाहा कि मैं इसे हटा दूँ। अध्यापिका के टस्काम्बिया में आने से पहले एक दो लोगों ने मेरी माँ से कहा था या इस बात का संकेत किया था कि मै निर्बुद्धि हूँ और माॅ को आशंका थी कि मेरे लिखे हुए ये शब्द यह प्रकट कर देंगे कि मेरी मानसिक स्थिति सामान्य स्तर की नहीं है। माँ को यह विश्वास दिलाने में कि क्योंकि ऊपर उद्धृत अश उसकी बच्ची के एक समय प्राकृतिक बाधाओं से आक्रान्त होने के कारण अविकसित अवस्था में होने की ओर संकेत करता है, इसलिए इससे किसी प्रकार की हानि की आशंका नहीं है, अध्यापिका को अपनी सारी चतुरता और अपने देखे हुए कमजोर दिमाग के लोगों के सब प्रमाण लगा देने पड़े। इस अवसर पर अध्यापिका का अभिमान गुप्त न रह पाया। उसे केवल इसी बात की प्रसन्नता नही थी कि मै स्वयं अपने लिए विचार कर और मेरी तीनों ज्ञानेन्द्रियों को संसार जैसा लगता था तथा मेरी आन्तरिक दृष्टि में संसार की सुषमाएँ जिस रूप मे प्रकट होती थी उन्हें पठनीय रूप मे प्रस्तुत कर मै अपनी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का परिचय देने लगी हूँ, वरन् वह कहने लगी कि इस घटना का यह भी अर्थ है कि अब से हम दोनों साहित्य में सच्चे साथी हो जायँगे। अन्त में उसे यह अनुभव करने का सन्तोष तो मिला कि मैं स्वतन्त्र साहित्यिक आत्माभिव्यक्ति के तट पर पहुँच गई हूँ। अब वह मुझे अपने साथ बातचीत करने देकर और इस प्रकार मेरे विचारों को स्वच्छ कर, लेखकत्व के देवों तथा दैत्यों के साथ मेरी टक्करो को शान्त कर सकती थी।

मेरे लिए यह एक सौभाग्य की बात थी कि मुझे अपनी पुस्तकों का एक नहीं अपितु दो आलोचकों—अध्यापिका और जॉन—प्राप्त थे। मेरे ग्रेजुएट होने के शीघ्र बाद ही अध्यापिका अस्वस्थ हो गई और मेरा स्वास्थ्य भी कुछ अच्छा न था। बहुत लम्बे समय तक स्नायविक विकारों की चुड़ैल मेरे पीछे पड़ी रही। परन्तु मुझसे अन्धों तथा अन्धेपन के निवारण पर लेख लिखने के लिए अनेकानेक आग्रह किये जाने लगे। इन दोनों विषयों की जानकारी की जनता को अत्यधिक आवश्यकता थी और मुझे यह बताया गया कि मेरा इन विषयों पर लिखना एक सेवा-कार्य होगा, इसलिए मैं इन आग्रहों को पूरा करने की इच्छा का दमन न कर पाई। मैंने अपने लेख पहले ब्रेल अक्षरों में लिखे और तब उनकी टाइपराइटर पर नकल की, इसके अतिरिक्त मुझे प्रतिदिन चिट्ठियों के एक बण्डल से निपटना और उनका उत्तर देना पड़ता था, यहाँ तक कि मेरे हाथ काम करने से जवाब दे बैठते थे। अध्यापिका की नजर की दयनीय दशा को देखते हुए यह प्रश्न ही न उठता था कि वह मेरी पुस्तकों को मुझे पढ़कर सुनाये।

इसलिए जब जान मेरी पांडुलिपियों को जोर से पढ़कर सुनाता तब वह अपने सुझाव देती और उसे इन्हें मेरे संशोधनो के साथ बार-बार पढ़ना पड़ता।

एक दूसरी पुस्तक, जिसके सृजन में मैंने आनन्द का अनुभव किया, "दि सौग ऑव दि स्टोन वाल" (पत्थर की दीवार का गीत) थी। एक बार, मई मास के प्रभात की सुषमा से मंत्रमुग्ध अध्यापिका और मै एक पुरानी पत्थर की दीवार को ऊँची कर रहे थे, जिससे हमारे हरे-भरे खेत में मेरे घूमने की सीमा विस्तृत हो सके। एक के ऊपर एक पत्थर रखते हुए, मैं पत्थरों की विभिन्न आकृतियों, बनावटों और आकारों को उँगलियों से अनुभव करती रही और इनमें मुझे एक ऐसे सौन्दर्य का आभास हुआ, जिसका मैंने पहले अनुभव न किया था। इससे पहले मै भूगर्भशास्त्र पर एक पुस्तक पढ़ चुकी थी, इसलिए कभी-कभी मै जिन पत्थरों से टकरा जाती थी उनमें मेरी रुचि अभी ताजी-ताजी थी—इनमें से कोई पत्थर चपटे या लम्बोतरे होते, कोई बड़े या छोटे, कोई तरेड़ों से भरे और कटे-फटे किनारोंवाले होते, कोई शीत द्वारा चिकने बनाये हुए होते, तो कोई गर्मी से भुरभुरे बने होते और कोई पैने और मुड़े कोनों-वाले होते। खुरदरे और बेडौल होने पर भी उनमें एक ऐसा विशेष गुण था कि वह मेरी कल्पना में जमकर बस गया। दीवार की दरारों मे मुझे सिसकती हुई शीतल पवन और उनके आस-पास के पौदों में करवट बदलती तथा उन पौदों से विभिन्न प्रकार की गंध निकालती हुई सूर्य किरणों का अनुभव होने लगा। मैं बोल उठी, "ओह, अध्यापिका, इन पत्थर की दीवारों पर तो कविता लिखी जा सकती है, यदि मुझमें इसके योग्य कवित्व-शक्ति हो।"

"क्यों नही" अध्यापिका ने उत्सुकता से उत्तर दिया। वह उस शब्द-विन्यास से सबसे अधिक प्रसन्न होती थी, जिसमे प्रकृति का चमत्कार गाया गया हो और यह बताते हुए कि मेरी उँगलियों की सीमा में आनन्द के कोष किस प्रकार बढ़ते जा रहे थे, उसने हार्दिक इच्छा प्रकट की कि मै इन्हे कविता में, जो सत्य का उच्चतर रूप है, निबद्ध कर दूँ। वह तत्काल वहीं पर बैठ गई, उसने दीवार का समीप से निरीक्षण किया और (दीवार पर) धूप-छाँह के प्रभाव तथा दीवार की सतह के कुछ भाग को ढके हुए फूलों और झाड़ियों की सजावट का उसने वर्णन प्रस्तुत कर दिया। उसके कुछ शब्दों में, जिन्हें मैंने बाद में अपने शब्दों के साथ गूथ दिया, कैल्तों की सी ध्वनि थी।

दीवारें उत्तेजित हैं.......
झाड़ियों और फूलों का मृदु मर्मर
मिश्रित है दीवारो के वसन्त-गीत में....

दीवारें गाती है गीत वन्य पक्षियों के, हरिणों की
खुर-ध्वनि के,
देवदारु और चन्दन के मर्मर कम्पन के, नानास्रोतस्विनियो की
तरंगावलियों के. . . .

बहुत देर तक काम और अन्य सब बातों को भूलकर मै उससे यही बात-चीत करती रही कि मै कितना चाहती हूँ कि पद्यों में पत्थर की दीवार का सम्बन्ध प्यूरिटनों, उनके वीरतापूर्ण जीवनो और उनके साहसपूर्ण आदर्शवाद के साथ जोड़ दूँ। दूसरे दिन जॉन हमे पुराने कबरिस्तान में ले गया, जिससे मै काई से ढकी हुई कबरों और उन पर खुदे हुए "मृत्यु जैसे भीषण" परन्तु अडिग विश्वास के भरे लेखों का स्पर्श कर सकूँ। हफ्तों तक मैं न्यू इँगलैण्ड क्रानिकल्स तथा लोकगीत पढ़ने में और ऐसे शब्दों को खोजने में जो जंगलों को इंच-इंच साफ कर उनके स्थान पर घर, प्रार्थना-गृह और स्कूल बनानेवाले प्यूरिटन उपनिवेशकों के प्रति मेरे विचारों को कविता के रूप में व्यक्त कर सकें, मैं घंटों लगी रही। जब कभी अध्यापिका को थोड़ा-सा अवकाश मिलता, मै अपने लिखे हुए को उसे पढ़कर सुनाती और उससे आग्रह करती कि वह मेरी पंक्तियों को पढ़कर दुहराये और मुझे अपने ओंठ पढ़ने दे, जिससे मै निश्चय कर सकूँ कि मेरे ऊबड़-खाबड़ पद्यों मे कुछ सार है भी या नही। प्रायः उसकी प्रसन्न मुस्कान मुझे आश्वस्त कर देती और कभी वह मेरी गलतियो की बिना किसी रियायत के तब तक आलोचना करती रहती जब तक कि मुझे कोई ऐसी धुन न सूझ जाती जो उसे प्रसन्न कर दे। उसकी प्रसन्नता का तब कोई ठिकाना न रहा जब सैन्च्युअरी मैगजीन ने मेरी कविता स्वीकार कर ली। वह बोल उठी, "उस महान् काव्य में, जिसका शैली के शब्दो मे, संसार के आदि काल से सभी कवियो ने एक विशाल मस्तिष्क के सहयोगी विचारों के समान निर्माण किया है, तुम्हें योगदान करते हुए देखकर, भले ही यह योगदान कितना ही अपूर्ण हो, मुझे जितने अभिमान का अनुभव होता है उतना अन्य किसी बात से न हुआ होता।"

इस प्रकार अध्यापिका ने मेरी उन शक्तियो के निकास के अकल्पनीय मार्ग खोल दिये, जो प्रभु ने मुझे प्रदान की थीं—प्रेम, विचार, क्रिया एवं वाणी, जिससे मेरा मतलब अभिव्यक्ति के सभी प्रकारों से है। ये जीवन की चार विधाएँ (उसने मेरे लिए उन्मुक्त कर दी) मेरे अतिरिक्त अन्य लोगों के लिए भी वह उनके सुन्दरतर गुणों को प्रकट करने में प्रेरणा का स्रोत थी। प्रसन्न मनःस्थिति मे वह सभी को अपनी सहानुभूति में लपेट लेती थी। वह जिस किसी

से मिलती उसे सुखों, दुखो, स्नेहो और रचनात्मक शक्तियों का अकल्पिक भंडार समझती और प्रायः वे उसकी इस कल्पना के अनुरूप सिद्ध होते। सचमुच वह रैन्थम में हमारे घर में होनेवाली संगतियों की प्रेरक आत्मा थी। अपने अभ्यागतों को सुखी करने के लिए वह सदैव कोई न कोई असाधारण योजना कार्यान्वित करती रहती और सभी के प्रति प्रेमपूर्ण बनने का प्रयत्न करती। हमारे घर के सुधार और विस्तार मे वह अत्यधिक खर्च कर देती थी, परन्तु यह उसका एक ऐसा दोष था जिसका एक अच्छा पक्ष भी था—यह अपव्ययिता उसकी 'रचनात्मक उत्साह' की अभिव्यक्ति थी और एक ऐसे कार्य को आगे बढ़ाने का निश्चय था, जिससे हम पर बरसाई गई कृपाओं का औचित्य सिद्ध हो जाय।

अन्धों के विषय मे अपने टाइपराइटर पर लेख टाइप करना और उनको, आंशिक रूप से ही सही, आत्म-निर्भर तथा स्वतन्त्र बनाने के सही तरीकों से जनता को परिचित कराना मेरे लिए बहुत सुखकर कार्य था। हमे अपने घर पर दृष्टि-विहीन स्त्री-पुरुषो का आतिथ्य करने और उनकी सब प्रकार से सहायता करने में प्रसन्नता होती थी, परन्तु इससे हमारी कोई व्यक्तिगत प्रगति न होती थी। अध्यापिका की विशाल क्षमताओं को देखते हुए मैं उसको किसी छोटे या संकुचित कार्य में न घसीटना चाहती थी। एक ओर मैं इस बात से दुखी थी कि उसका जीवन घर सँभालने के काम में, जिससे उसे घृणा थी, व्यर्थ जा रहा था। दूसरी ओर मैं उसकी सुख-सुविधा की व्यवस्था करने के लिए व्यग्र थी, जैसा कि मैंने सोलह वर्ष की अवस्था में, जब कि हमारी भलाई चाहनेवाले परन्तु हमारे कामो में हस्तक्षेप करनेवाले मित्रो ने उसे मुझसे यह कहने के लिए बाध्य कर दिया था कि वह एक गुलाम की तरह काम करती है, निश्चय कर लिया था। इस इच्छा को पूर्ण करने में मुझे कष्टमय धैर्य के अनेक वर्ष लग गये।

११

१९१४ के अन्तिम दिनों में अध्यापिका अपने जीवन के महान्तम दुःख का सामना कर रही थी। वह मेरे स्नेह की ऐसी कड़ी परीक्षा ले रही थी कि इससे मेरा हृदय टूटा जा रहा था। दिनों तक वह जड़वत् बनी हुई अपने आपको कमरे में बन्द कर लेती और कोई ऐसी योजना सोचती रहती जिससे जॉन लौट आये या फिर वह इस प्रकार रोती रहती, जैसे परित्यक्ता नारियाँ रोती हैं। उन दिनों माँ भी हमारे साथ थी। वह कहने लगी कि अध्यापिका के दुःख को देखकर उसके हृदय में वेदना हो रही है। "मुझे विश्वास नहीं है हैलेन कि भाग्य किसी सुन्दरी, बुद्धिमती स्त्री के साथ, जो विवाह बन्धन मे बँध गई हो, अन्य स्त्रियों की अपेक्षा अधिक कृपापूर्ण बर्ताव करता है। सचमुच अध्यापिका ऐसी योजनाओं से प्रफुल्लित हो रही थी, जिनके विकास मे जॉन जैसा विविध विषयो में निपुण व्यक्ति साधन बनता, और अब जीवन की वह कल्पना, जिसे उसने सँजोया था, उसके चारों ओर भग्न होकर बिखरी पड़ी है।"

अध्यापिका के मुख पर प्रसन्नता की आभा धुँधली पड़ गई, परन्तु वह इतनी गम्भीर थी कि अपने दुख को प्रकट न होने देती थी। वह नहीं चाहती थी कि कोई उसे आकर सान्त्वना दे। उसने अपनी वेदना या वे भयंकर स्वप्न, जो उसे परेशान करते रहते थे, मेरे अतिरिक्त और किसी को न सुनाये और वह भी रात की निस्तब्धता में। उसका स्वास्थ्य ठीक न था। एक समय वह बहुत व्यायाम करती थी, परन्तु शरीर का भारीपन, जो उसकी एक प्रधान कठिनाई थी, उसे अत्यधिक पीड़ित कर रहा था। उसकी आँखों की दशा और भी खराब हो गई थी। अब वह थोड़ी देर भी स्वतन्त्रतापूर्वक न पढ़ पाती थी जिससे इस प्रकार भी आत्म-संतोष प्राप्त न कर पाती थी। परन्तु वह अपने इस निश्चय में अटल थी कि स्वयं उस पर चाहे जो भी अभाव और असुविधाएँ आ पड़ें, इनके कारण मेरी जीवन-नौका, जिसे वह स्वस्थ-विकास के पथ पर खे रही थी, भग्न न होने पाये।

सन् १९१४ के प्रारम्भिक दिनों में सुदूर पूर्व मे हमारा जो भाषणों के लिए पहला दौरा हुआ, उसमें माँ हमारे साथ थी। अब इस वर्ष के बाद के दिनों में अध्यापिका हमारी एक नई साथिन पौली टामसन को, जो एक उत्साही स्काट लड़की थी, बढ़ावा दे रही थी। इस लड़की को संसार का ज्ञान कुछ भी न था परन्तु यह संयुक्तराज्य अमरीका के समस्त वैभव और प्राकृतिक सौन्दर्य को देखने के लिए उत्सुक थी। इसका उदार हृदय यदि कोई वरदान चाहता था तो यही कि यह हमारी सेवा में लगी रहे। केवल कुछ ही महीनों के प्रशिक्षण के बाद यह हमारे साथ हमारे भाषण के दूसरे दौरे में यूरोप गई। सुसंस्कृत बनने तथा अध्यापिका के स्वभाव की विचित्रताओं को समझने के प्रयत्नों में पौली ने दुर्दम्य शक्ति के साथ आपत्तियों तथा कठिनाइयो का जैसा सामना किया वैसा तो उत्तरी ध्रुव या दक्षिणी ध्रुव अथवा अफ्रीका के भयंकरतम भागों के किसी खोजी ने भी न किया होगा—यह दृढ़ता सुन्दर-तम परिणाम प्राप्त करने के लिए नितान्त आवश्यक भी है।

अध्यापिका पर कभी-कभी जो उदासी छा जाया करती थी, इस समय तो वह बहुत ही गहरी हो उठी थी और इससे वह इतनी निराशा में डूब गई कि उसके लिए जीना दूभर हो गया। सचमुच कुछ समय तो वह डरती रही की कही पागल न हो जाये। परन्तु उसकी विवेक शक्ति को कोई क्षति न पहुँची और उसकी बुद्धि या हाथो ने कभी काम करना बन्द न किया। वस्तुतः इस उदासी से उसकी विचार-शक्ति को आघात न लगा वरन् उसकी कल्पना-शक्ति अस्त-व्यस्त हो गई। परन्तु कल्पना की इस अस्त-व्यस्त अवस्था से उसमें नियमित आचरणों के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई और वह अपने कार्यो तथा मनोविनोदों की योजना इस प्रकार बनाने लगी जिससे यह दुराग्रह मिट जाये। उसे जितना आराम करना चाहिए था उतना वह न कर पाती थी, परन्तु सबेरे के समय उसकी आँखों की वेदना कुछ कम हो जाती थी। जब भी उसे अवसर मिलता, वह देर तक सोती रहती, इस प्रकार वह स्वयं को उस कठोर श्रम के लिए तैयार करती जिसमें उसे घण्टों तक अपने थके शरीर को लगाना पड़ता। कभी-कभी वह अपने सिर को मेरे कन्धे पर टिकाकर कहती, "मैं इस दिन से कितना झिझकती हूँ!" परन्तु तभी वह सीधी तनकर कह उठती, "हमारे श्रोताओं को इससे कुछ भी प्रयोजन नहीं है कि मुझ पर क्या बीत रही है। मेरे पास कम से कम तुम्हारी कहानी तो सुनाने को है ही और सम्भव है, तुमसे कुछ लोगों को उस भार को उठाने की प्रेरणा मिल जाये जिससे वे पिसे जा रहे हैं। हमारे लिए लोगों ने जो कुछ

किया है उसका विचार करो और सेवा के द्वारा इस सद्भावना का प्रतिदान करने में मेरी सहायता करो।" हैलेन, शैली की ये पक्तियाँ याद करो—

"साहस की एक किरण पीड़ितों और निर्धनो के लिए,
एक स्फुलिग, यद्यपि झोपड़ी की अँगीठी मे चमकता हुआ,
जो अत्याचारी के स्वर्णखचित गुम्बदों के बीच भड़केगा,
एक ज्योति पृथ्वी के अन्धकार में,
एक सूर्य जो परिष्कृत दृश्य के ऊपर,
जहाँ अब तक असत्य फैला था, सत्य के समान फूट पड़ेगा।"

इस प्रकार हमारा भ्रमण और भाषण का कार्यक्रम चलता रहा, परन्तु अभी तक अध्यापिका की व्यवस्था करने की मेरी इच्छा पूर्ण न हो सकी।

अर्थशास्त्र तथा समाज में धन-वितरण सम्बन्धी अपने विचारों के अनुसार हमने निश्चय कर लिया था कि हम अपने भाषणो द्वारा अपना खर्चा उठायेंगे और जहाँ कही संभव होता, मै लेख लिखकर धनोपार्जन कर लेती। हमारे अद्भुत मित्र ऐण्ड्रयू कारनेगी ने मेरी दृष्टि एवं श्रवणशक्ति के अभाव की क्षतिपूर्ति के रूप मे मुझे एक वृत्ति (पेशन) देकर मेरी सहायता की। इस प्रकार मेरे लिए आत्म-निर्भरता एवं परम सुख की प्राप्ति की दुरूह पहाड़ियों पर चढ़ना सरल कर दिया। उसकी इस बचपन के कष्टमय जीवन से प्राप्त सहानुभूति के बिना हम दो वाधित स्त्रियाँ रैन्थम मे या लौग आइलैण्ड में अपना मकान रखने मे समर्थ न हुई होती और न मैं कुछ समय के लिए अध्यापिका के स्वास्थ्य-लाभ के लिए उसकी पोर्टोरीको की यात्रा का प्रबन्ध कर पाती।

पहले तो—यह बात सन् १९१६ के जाडों के प्रारम्भिक दिनों की है—अध्यापिका अपनी उस दीर्घकालीन खाँसी का, जो उसके शरीर की दुर्बलता के कारण पैदा हो गई थी, इलाज कराने के लिए लेक प्लेसिड चली गई थी। पौली उसके साथ थी और मै माँ के साथ ऐल्बामा चली गई थी। पौली ने पत्र लिखा कि उदास मौसम, अकेलेपन और अपने ऊपर भार सी लदी हुई थकान की भावना तथा अपने चारों ओर "प्रौढ़ और गम्भीर" लोगों से घिरे होने के कारण अध्यापिका दुखी, उकताई हुई और चिड़चिड़ी हो उठी है। मैंने उसे कभी अरुचिकर परिस्थितियों और यहाँ तक कि चिकित्सकों तक के आदेशों को चुपचाप शिरोधार्य करते न देखा था और जब उसने मुझे सूचना भेजी कि वह जलयान से पोर्टोरीको जा रही है तो मुझे आश्चर्य न हुआ। जब मुझे उसका स्वयं अपने हाथ से स्टिलेटो (छेद करने का एक पैना यंत्र) द्वारा ब्रेल अक्षरों

में लिखा हुआ पत्र, जो उसके उस द्वीप में, जिसे वह "आनन्द का द्वीप" कहती थी, पहुँचने के आनन्द से भरा था, मिला तब मेरा हृदय श्री कार्नेगी के प्रति जितनी कृतज्ञता से स्पन्दित होने लगा इतना तो शायद ही किसी के प्रति हुआ हो। उसके पहले पत्र से तो मेरी मानो साँस ही रुक गई। उसने इस पत्र में मुझे बताया था कि वह और पौली जलयान द्वारा ग्यारह दिन बाद बर्फ, तीखी सर्द हवाओं और ऐडीरौण्डैक्स के सुर्मई आसमान के बाहर आ पाई थी। "यह अविश्वसनीय प्रतीत होता था हैलेन। मुझे यह जानने के लिये कि मैं जाग रही हूँ या स्वप्न देख रही हूँ, अपने आप पर चिकोटियाँ भरनी पडती थी। वहाँ उस तरंगित, धूप से तपे, सँकरे समुद्र के पार पोर्टोरीको था जो उग्र जलराशि मे तैरते हुए एक विशाल जलयान के समान प्रतीत हो रहा था।"

उसकी वाणी उस द्वीप के स्वर्गीय सौन्दर्य मे विभोर हो उठी—(उसके शब्दो मे यह द्वीप) "रगो, पल्लवित वृक्षों, झाड़ियों, गुलाबों, क्लेमतीस पुष्पों, वृक्ष जैसे लिली फूलों, प्वाइन्सैतिआ फूलो और जो मैंने पहले न देखे थे ऐसे अनेक प्रकार के सुन्दर फूलो का जमघट है, तार के खम्भे तक भड़कीले फूलों की लताओ से आवेष्टित हैं। परन्तु सबसे सुन्दर बात तो यह है कि यहाँ की जलवायु स्निग्ध, किंचित् उष्ण है, अति उष्ण नही। मेरा मतलब है कि यह प्रचंड उष्ण नही है। समुद्र से निरन्तर आनन्दमय शीतल पवन प्रवाहित होती रहती है। मकानों में खिड़कियाँ नही है और यहाँ के निवासी न होने के बराबर कपड़े पहनते है। वस्तुतः छोटे बच्चे तो नंगे ही फिरते हैं। मकान इन्द्रधनुष के सभी रंगों से रँगे गये हैं, जिससे सडकों का दृश्य चित्रमय बन गया है।"

इन पत्रो को पाकर मैंने अपने को धन्य समझा। इन पत्रों में पुराने ढंग के अमरीकी ब्रेल में लिखे अक्षरों को पढ़ते हुए मैंने अनुभव किया कि उस समय को बीते कितने वर्ष हो गये हैं जब अध्यापिका ने मेरी शिक्षा के लिए इस प्रकार के ब्रेल का उपयोग किया था। वह धीमी कठिन प्रक्रिया जिसके द्वारा ये पत्र लिखे गये थे, इन्हे मेरे लिए प्रिय बनाने के लिए पर्याप्त थी, परन्तु (इन्हे मेरे लिए प्रिय बनाने के लिए) इससे कही अधिक बातें थी—जीवन के प्रति उसका अभिनव आनन्द, वह तन्मयता जिसके साथ वह पोर्टोरीको के शान्त और कवित्वमय वातावरण को आत्मसात् कर रही थी। जो सुषमाएँ वह देखती थी उनमें उसका विभोर हो उठना, और उसके संभाषण का वह स्वच्छन्द प्रवाह, जो मेरे बचपन की प्रेरक शक्ति था, उसकी प्रसन्नता का मेरे लिए स्वयं मेरी अपनी प्रसन्नता से कहीं अधिक अर्थ था और मुझे उसके बारे में फिर से बीते दिनों की ऐन सलिवाँ के रूप में सोचने मे संतोष मिलने

लगा, उस ऐन सलिवाँ के रूप में जो प्रसन्नता थी, साहसिक कार्यो तथा विनोदों की भूखी थी, जीवन की पूर्णता में उभरनेवाली सिकुड़नों को ठेलकर अलग करनेवाली थी, पढ़ती रहती थी—यद्यपि यह सत्य है कि कठिनाई से ही वह पढ़ पाती थी—और स्वयं को आनन्द के कोषों से पूर्ण करती रहती थी। पोर्टोरीको के निवासियों को अपनी बात संकेतों की भाषा द्वारा समझाने में उसका मनोरंजन, उनका "सी-सी सेनोरा" का गान और उसके सिर हिलाने पर उनकी परेशानी, ये सब बाते बड़ी आनन्दप्रद थीं और मुझे स्मरण हो आता है कि एक बार मुझे इस बात पर आश्चर्य हुआ था कि अध्यापिका भाषाएँ सीखने में क्यों रुचि प्रदर्शित नहीं करती। सचमुच यदि उसमें भाषाएँ सीखने की तीव्र इच्छा होती तो वह अवश्य ही इस दिशा में अग्रसर होकर अपने भाषाओं के क्षीण भण्डार में इस सम्पति को भर लेती, परन्तु बाद मे मैंने ध्यान दिया कि उसकी आँखें इस काम से जवाब दे देती थीं। जैसे, मेरे लिए यूनानी भाषा के विचित्र अक्षरोंवाले शब्दों को ढूँढ़ने में, गेटे के "हरमन ऐण्ड डौरोथिया" को, जिसकी छपाई बड़ी ऊबड़-खाबड़ थी और जिसकी मुझे कोई ब्रेल प्रति न मिल सकी थी, पढ़ने मे तथा मोलियरी, कार्नेली और रेसिने के नाटकों में कठिन टाइप और स्वराघातों को पढ़ने में उसकी आँखों पर अत्यधिक जोर पड़ता था।

अध्यापिका की स्वच्छन्दता उसके इस पत्र में, जिससे मैंने उद्धरण दिया है, पहिचानी जा सकती है। "मै पहाड़ों में एक छोटी सी झोपड़ी ले रही हूँ और वहाँ घर बसानेवाली हूँ। इस कैम्प में, जैसा कि हम इसे कहते है, चार कमरे है और कुछ नहीं..... मै सिर्फ आवश्यक वस्तुएँ खरीद लूँगी और जितना सुन्दर हमसे बन पड़ेगा, वैसा प्रबन्ध करूँगी। तुम जानती ही हो कि और अधिक के लायक बनने में मुझे कुछ समय लगेगा और मेरा विश्वास है कि मै किसी अन्य स्थान की अपेक्षा, जहाँ जा सकने का व्यय मै उठा सकती हूँ, मैं यहाँ अधिक सुखी हो सकती हूँ। यह झोंपड़ी ऊँची है और एक संतरे तथा अंगूर के कुंज के ठीक बीच में है तथा एक पाइनऐप्ल का झुरमुट इसके सामने है।"

अध्यापिका के इस निश्चय से हम सब व्यग्र हो उठे और जल्दी-जल्दी उसके पास हमारे प्रार्थनाओं और आग्रहों से पूर्ण पत्र पहुँचने लगे। परन्तु वह इतनी अधिक बार अपने मन की कर चुकी थी और साथ ही अपने अपनाये मार्ग की बुद्धिमता सिद्ध कर चुकी थी कि मैंने उसके इस निश्चय के विरुद्ध अधिक न कहा। जैसे-तैसे उसके अगले पत्र ने, जो उसके अशोध्य

आकर्षण और उसके हद दर्जे के खिलाड़ीपन से भरा था, मेरे हृदय को शान्त किया।

"अब मैं पोर्टोरीको के प्रति माँ के पूर्वग्रह के विषय में अन्तिम बात कह दूँ। मुझे आश्चर्य है कि जिस स्थान को वह वस्तुतः जानती नहीं उसके बारे में उसकी ऐसी कड़ी राय है। मैं चाहती हूँ कि तुम उसे किसी अच्छे ढंग से यह समझा सको कि मै यहाँ अप्रैल तक ठहरना चाहती हूँ। मै प्लैसिड लौटने की अपेक्षा सीधे सिंह की गुफा में घुस जाना पसन्द करूँगी। इमर्सन के शब्दों का अन्वय कर मैं कहूँगी कि "क्लब" के भवन कारागार हैं। जान बनयेन पैरिश (एक जिला जिसमें अपना गिरजाघर हो) के गिरजे मे उपस्थित होने की अपेक्षा जेल गया। जार्ज फाक्स ने मजिस्ट्रेट के सामने टोप उतारने की अपेक्षा जेल जाना स्वीकार किया और मैं भी ऐडिरौण्डैक्स लौटने से पहले किसी न किसी प्रकार शहीद हो जाना पसन्द करूँगी।

"यदि सब लोग यह जानते होते कि उनके लिए क्या अच्छा है और तदनुसार कार्य करते तो यह संसार बहुत भिन्न स्थान बन गया होता, यद्यपि तब यह इतना रोचक न रह जाता। परन्तु हम नहीं जानते कि हमारे लिए अच्छा क्या है। मैं अपने दिन प्रयोग करने में बिता रही हूँ। ये प्रयोग मनोरंजक हैं—और कभी-कभी महँगे भी, परन्तु ज्ञान प्राप्त करने का और कोई उपाय नहीं है....

"मुझे खुशी है कि मुझे न्यू इँगलैंण्ड की चेतना की विरासत नहीं मिली। यदि ऐसा होता तो मै पाप की उस स्थिति से परेशान हो उठती जिसका मैं अब पोर्टोरीको मे आनन्द ले रही हूँ। यहाँ कोई प्रसन्न हुए बिना रह नहीं सकता, हैलेन—प्रसन्न और सुस्त और उद्देश्यहीन और अधार्मिक—ये सब पाप जिनके विरुद्ध हमे चेतावनी दी जाती है। मै हर रात को जब बिस्तर पर जाती हूँ तो सूर्य के प्रकाश और संतरों की बहार से भरी होती हूँ और बैलों की केले के पत्ते चबाने की ध्वनि की लोरी के साथ सोती हूँ।"

तब तक अध्यापिका और पौली उस झोपड़ी में बस गये थे और मैं उसकी उस प्रसन्नता की कल्पना कर सकती हूँ जो उसे तब होती होगी जब अनेक बैल चुपचाप उसके कमरे में घुस पड़ते होंगे और अपनी शान्ति की गहरी झीलों जैसी आँखों से उसे निहारते होंगे, जब कि बेयेमान, जो एक आवारा कुत्ता था और जिसे उसने अपना लिया था और उसे खिला-पिलाकर तथा नहला-धुलाकर सुन्दर बना लिया था, बड़े क्रोध में भूँकने लगता.....

पत्र में आगे लिखा था—

"हम हर शाम को छज्जे में बैठ जाते है और सूर्यास्त की आभा को एक सजीव ंग से दूसरे में ढलते हुए देखते हैं—गुलाब, ऐस्फोडैल (तुम जानती हो, इसका रंग कैसा होता है ? मै समझती थी कि यह नीला होता है, परन्तु अब मुझे ज्ञात हुआ कि यह स्कौच ब्रूम के रंग के समान सुनहरा पीला होता है) से नीले बैंगनी रंग में और तब गहरे बैंगनी में। जब आकाश मे तारे निकलने लगते हैं तो पौली और मै साँस रोके रह जाते है—वे आकाश मे अनेक रंगों के दीपकों के समान नीचे लटके रहते हैं—और असंख्य जुगने घास पर निकल आते है और अँधेरे मे पेड़ों पर टिमटिमाने लगते है।

"....इस स्थान ने मुझ पर जादू कर दिया है। मुझमें जो कुछ सो गया था वह अब जाग उठा है और जागरूक हो गया है। सान जुआन पर उतरना मेरे लिए ऐसा हुआ जैसे कि मै एक दीर्घ कष्टमय अनुपस्थिति के बाद स्वदेश की भूमि पर आ गई हूँ।"

अध्यापिका को उस छोटी सी ब्रेल स्लेट पर खरोंचने और अपने सुन्दर वर्णनों को अंकित करने में कितनी थकान का अनुभव होता रहा होगा और विशेषतः इसलिये क्योंकि वह उन अनेक संक्षिप्त प्रणालियों से अपरिचित थी जिनके सहारे अन्धों के लिये पढ़ना और लिखना सरल बन जाता है। पत्र लिखने के अतिरिक्त, वह घरेलू कामों में व्यस्त रहती थी और पौली को भोजन बनाने की शिक्षा देती रहती थी। इस प्रकार वह उसे हमारे घरेलू तथा सार्वजनिक जीवन की प्रत्येक तात्कालिक स्थिति मे सहयोग दे सकने के योग्य बनाने के लिए प्रशिक्षित कर रही थी। जब हम दौरे में थे, पौली ने हमारी चिट्ठी-पत्रियों और कपड़े-लत्तों की देखभाल की थी और हमे लोगों से मुलाकातें करने में सहायता दी थी। अब उसका सोने से भी अधिक सुनहला हृदय और अध्यापिका के संघर्ष में भाग लेने के गौरव की उसकी अनुभूति उसको अपनी क्षमताएँ बढ़ाने के लिए उत्साहित कर रहे थे जिससे वह हमारे उस भार को कंधा देने में सहायक हो सके जो उस समय और आगे के अनेक वर्षों तक हम पर लदा था। अध्यापिका अपने पत्रों में जो कुछ लिखती थी उससे मै समझ सकती थी कि उसका स्वास्थ्य अच्छा नही है, और तब मै बहुत कृतज्ञ हो जाती थी कि अध्यापिका के लिए विश्राम करना और अपने 'आनन्द के द्वीप' की सुखद शान्ति में आत्म-विभोर हो जाना संभव बनाने के लिए पौली उसके साथ थी।

मेरे लिए भेजे हुए अध्यापिका के एक दूसरे पत्र में उसकी आत्मा भाव-विभोर प्रतीत हुई :

"सूर्य फर्श के आरपार सोने के तीर छोड रहा है। हवा संतरों की बौरों की सुगंध से महक रही है, और धरती पाइनऐप्ल की लम्बी फीतेनुमा पत्तियों से दहक रही है। बरामदे से यह दृश्य एक फारसी कालीन-सा लगता है, अन्तर यही है कि यह उससे अधिक दमकता हुआ है और अपने ऊपर पसरने के लिए बिल्कुल भी आमन्त्रित नही कर रहा है। पाइनऐप्ल देखने में रमणीय है, परन्तु स्पर्श करने में यह इतना सुखद है जितना कि हैजहॉग। यदि मुझमें केले के वृक्ष पर अग्नि-खंडो की माला के समान घिरे हुए चहचहाते पक्षियों की-सी समझ का लेशमात्र भी होता तो मै युद्ध के विषय में सोचने मे इतने समय और शक्ति का अपव्यय न करती। क्या यह हमारी मूर्खता नही है कि हम अपने मस्तिष्क को प्रकृति के सौन्दर्य की अपेक्षा मनुष्य की पैशाचिकताओं से भर लेते हैं? परन्तु हमे यथासंभव एक दूसरे की सहायता करनी चाहिए और यदि हम यह विश्वास करते है कि संसार पागल हो गया है तो हमें अपना दिमाग सही रखने का और भी अधिक प्रयत्न करना चाहिए।"

यह एक शुभ समाचार था कि पोर्टोरीको में एक औटोमोबाइल गाड़ी रखने का खर्च अधिक न पड़ेगा और अध्यापिका ने मुझे बताया कि कैसे हमारा मोटर-चालक (शोफर) हैरी लैम्ब, हमारी कार को बहुत थोड़े खर्चे पर ले आया था। "हैरी अनेक प्रकार से हमें आराम पहुँचायेगा और ओह, हम यहाँ कार का कैसा आनन्द लेगे। इसके अतिरिक्त हमे इसकी यहाँ आवश्यकता भी तो थी, क्योंकि हमारे पास कही जाने का कोई साधन न था, और दूर के पड़ोसियो की कृपा के अतिरिक्त हमारे पास सामान लाने तक का कोई साधन न था। इसलिए यहाँ चली आओ। मै तुम्हें अपने स्वर्ग का कोना-कोना दिखा दूँगी।"

एक बार अध्यापिका ने मुझे एक बहुत विचित्र अनुभव के बारे में लिखा जो उसे तब हो रहा था।

"मुझे निरन्तर यह स्मरण होता प्रतीत होता है, कभी धुँधले तौर पर और कभी बड़ा सजीव कि मै यहॉ या ऐसे ही किसी उष्ण-कटिबन्ध में पड़नेवाले स्थान में पहले भी आ चुकी हूँ। वर्षा की झड़ी के बाद तपते हुए सूर्य का स्पर्श मुझे सक्रिय और उत्तेजित कर देता है। पहाड़ों पर गन्नों की हरियाली उद्वेजक रूप से सुपरिचित है और एक पहाड़ के कंधे की, जिसके ऊपर सड़क का एक सँकरा मोड है, जो नीली परछाई पड़ती है उसे देखकर तो बस मैं अपना सिर दूसरी तरफ मोड़ लेती हूँ, मानो कि मुझे वहाँ किसी परिचित के मिलने की आशा हो। क्या यह विचित्र बात नही है? बेअनेट के पौधे को

देखकर तो मुझे भाग जाने की इच्छा होती है। मैं निश्चित रूप से कह सकती हूँ कि मुझे इसकी लम्बी, पैनी उँगलियाँ अपने शरीर में चुभती प्रतीत होती है। यह अनुभूति इतनी तीव्र होती है कि मैं शरीर के उस भाग का भी अनुभव करने लगती हूँ, जिसमे मुझे यह चुभन प्रतीत होती है।

"पिछली रात जब हम सैन जुऐन से मोटर मे घर आ रहे थे, सड़क का एक मोड़ मुड़ने पर हम एक अँधेरे जलाशय के पास पहुँच गये। पूरब मे पीला-पीला चॉद फिसल रहा था। हैरी कह उठा, "देखो!" और पौली बाहर देखने के लिए कार से बाहर की ओर झुकी। मैं बाहर देखने का प्रयत्न न कर पाई। मेरा सारा शरीर भय से तन गया था। मैं मन में ऐसे निश्चयपूर्वक समझ रही थी, जैसे मैं अपनी इन भौतिक आँखों से ही देख रही होऊँ कि बाहर उस धुँधले प्रकाश मे दो नंग-धड़ंग आदमी बुरी तरह लड़ रहे है। यही बात वहॉ हो भी रही थी। जब पौली और हैरी ने मुझे बताया कि उन्होंने बाहर क्या देखा तो मेरा सारा शरीर ठंडा पड़ गया और मैं एकाकीपन की निराशा-पूर्ण भावना से भर उठी। कैसी विचित्र अनुभूति है यह, क्या नही है? कारण जो भी हो, यह अनुभूतियाँ मुझे पूर्व स्मरण सी लगती है। कौन जानता है—प्राचीन सलिवाँ वंश की किसी आयरिन कुमारी ने किसी स्पेनिश सिपाही से भली भाँति प्रेम किया हो, परन्तु बुद्धिमत्तापूर्वक नही। तुम जानती हो कि आयरलैण्ड के विरुद्ध लड़नेवाली सेनाओं में प्राय. भाड़े के सिपाही थे जिनमें फ्रास, स्पेन, हालैण्ड सभी देशो के साहसिक होते थे।

"यहॉ के चपरासी जब काम करते रहते है या चलते होते है या दरवाजे पर बैठे रहते है तो वे शिकायत भरे तुकबन्दी के से स्वर में बड़बड़ाते रहते है कि वे क्या कर रहे है, बहुत कुछ वैसे ही, हैलेन, जैसे तुम अपने आप से बातें करती हो—संतरे तोड़ना, एक-एक कर मछली पकड़ना, काँटा फेंकना, इसे खीचना," "चलना, एक सीढ़ी, तब दूसरी, छोटी सीढ़ियाँ, लम्बी सीढ़ियाँ" —उसी प्रकार जैसे मैंने तुम्हें विशेषण सिखाये थे, याद है तुम्हें?

"कितना अच्छा होता कि मैं ब्रेल अधिक सरलता से लिख पाती। इस लिखने की शिथिल प्रक्रिया से मेरे अनेक विचार प्रकट हुए बिना रह जाते हैं। परन्तु तुम जानती हो कि वे मेरे हृदय मे उतने ही निश्चित रूप से है जैसे कि डैफोडिल फूल जिनके बारे मे तुमने लिखा था, जाड़े भर भूमि के अन्दर रहते हैं। मेरे विचार हमारे मिलन के वसन्त में फूलेंगे और तुम्हे डैफोडिल फूलों के समान प्रसन्नता का अवसर देंगे।"

उसका आमन्त्रण लुभानेवाला तो था परन्तु न माँ ने और न मैंने ही वहाँ

जाना उचित समझा, क्योंकि हम निश्चित रूप से जानते थे कि इससे संसार से वह बिलगाव, जिसकी अध्यापिका को नितान्त आवश्यकता है, जाता रहेगा।

उसके कुछ पत्रों में बहुमूल्य परामर्श भरे थे जिनमें ऐसे विचार व्यक्त किये गये थे जो मुझे आज तक प्रेरणा देते आये है। मैंने उसके सम्बन्ध में और अपने दोनों के भविष्य के विषय में अपनी जिन चिन्ताओं का उल्लेख किया उनके उत्तर में उसने लिखा—

"हैलेन, तुम्हें भविष्य के बारे में चिन्तित न होना चाहिए। मै अभी मरने-वाली नहीं हूँ—मैं जानती हूँ कि मै अच्छी हो जाऊँगी, मै थोड़ी भी रुग्णता का अनुभव नही कर रही हूँ—

"परन्तु यदि मै मर भी जाऊँ, तब भी कोई कारण नही है कि तुम जीवन में आगे न बढ़ो—यदि तुम अपने आस-पास के जीवन पर और विशेषतः अपने जीवन पर शान्तिपूर्वक ध्यान दो तो तुम देखोगी कि भविष्य के इतने निराशापूर्ण होने की संभावना नही है जितना कि मेरे तुम्हारे पास आने से पहले तुम्हारे जीवन का आरम्भ प्रतीत होता था। इसके अतिरिक्त तुम तो किसी स्वर्गीय पिता की स्नेहमय जागरूकता में विश्वास करती हो। (मुझे यह सान्त्वना प्राप्त नहीं है, परन्तु मै हृदय से प्रसन्न हूँ कि तुम्हे यह प्राप्त है।) कठिनतम परिस्थिति से बाहर निकलने का हमेशा कोई न कोई रास्ता मिल ही जाता है, यदि हम सचमुच इससे बाहर निकलना चाहें।"

एक दूसरे अवसर पर उसने मुझे एक ऐसे उपाय के लिए उत्साहित किया जिसे मैं अब भी काम मे लाती हूँ—

"मुझे प्रसन्नता है कि तुम अपने मन को शान्त करने के लिए कविता पढ़ रही हो। किसी कवि के विचारों के पत्तों को उखाड़ना, उसके फलों को स्वयं अपनी आत्मा के सूर्य के समक्ष अनावृत करना और तब ध्यान से देखना कि इसकी किरणों के प्रभाव से उसका स्वाद कैसा बदल जाता है, यह एक अच्छा मानसिक व्यायाम है। दूसरे मस्तिष्क में आरोपित होने पर किसी कवि के मस्तिष्क के पुष्पों और फलों का रंग, सुगन्ध और स्वाद कैसे बदल जाते हैं, यह निरीक्षण बहुत रोचक होता है। ("फ्रोस्ट किंग" वाली घटना से मैंने जिस दुखदायी मानसिक निष्क्रियता का अनुभव किया था उसका उसे उतना ही कटु स्मरण था जितना मुझे।)

"शब्दों का खेल ही एकमात्र ऐसा खेल है जिसे तुम श्रेष्ठतम व्यक्तियों के साथ समानता के स्तर पर खेल सकती हो। इस खेल की गति मन्द है इसलिए धैर्य न खो बैठो। याद रखो, महान् लेखक प्रायः ठीक शब्द या रूप पकड़ पाने

के लिए दिनो तक अभ्यास करते है—तुम वर्तमान काल की तथा बाधित लोगों की समस्याओ में रुचि लेती हो। तुम मानव-जाति की सेवा करना चाहती हो। लिखने के अतिरिक्त तुम और कैसे यह सब कर सकती हो?"

जब मैं अमरत्व के प्रति उसके अपने अविश्वास की पुनः स्वीकृति पढ रही थी तो नास्तिकता की ओर झुकते हुए इस प्राणी के लिए मेरे ऊपर प्रेम के ह्रास का भार आ पडा। मुझे स्मरण हो आया कि कैसे वह एक समय मृत्यु के समीप पहुँच गई थी और मुझे यह सोचकर दुख हुआ कि फिर भी उसमे जीवन को बनाये रखने की उदात्त भावना न आ पाई थी।

"मुझे इस बात से तीव्र वेदना होती है, हैलेन, कि मै तुम्हारी तरह आस्तिक नही बन पाती। तुम्हारे जीवन के धार्मिक पक्ष मे हिस्सा न बँटा सकने से मुझे दुख होता है। मेरे लिए तो, जैसा तुम भली भाँति जानती हो, यह जीवन ही महत्त्व की वस्तु है। हम इस समय और यहाँ जो कुछ करते है उसका बहुत महत्त्व है, क्योंकि हमारे काम दूसरे मानव-प्राणियों पर प्रभाव डालते हैं।

"बाइबिल के प्रति एक काव्य के रूप में मेरा चाव है। मै इसमे सौदर्न्य और आनन्द पाती हूँ, परन्तु मुझे इस बात में विश्वास नही है कि इसमे अन्य सभी सुन्दर ग्रन्थों की अपेक्षा अधिक ईश्वरीय प्रेरणा है। मेरे लिए भविष्य अंधकारमय है, मेरा विश्वास है कि प्रेम शाश्वत है और यह जीवन में शाश्वत रूप से व्यक्त होता है। मै "शाश्वत" शब्द का प्रयोग इस अर्थ मे कर रही हूँ कि जहाँ तक मेरी कल्पना पहुँच सकती है, वहाँ तक यह है।

"तुम्हारा एक ऐसे भविष्य मे विश्वास, जहाँ कुटिल स्थान सरल बना दिये जायँगे, सहज वृत्ति के रूप में है। सचेतन अमरत्व में तुम्हारी श्रद्धा तुम्हें तुम्हारी सीमाओं और कठिनाइयों के रहते हुए भी जीवन को रहने योग्य समझने में सहायक होती है। स्वर्ग नाम के किसी स्थान में सदैव बसे रहने का विचार मुझे नही भाता। मुझे संतोष इसी मे होगा कि मृत्यु हमारे जीवन की समाप्ति बने, सिवाय इसके कि हम दूसरों की स्मृति मे बने रहे।"

ऊपर के अनुच्छेद को उद्धृत करते हुए मेरी आत्मा अध्यापिका की ओर कैसी घूम जाती है। मै उसे विश्वास दिला देना चाहती हूँ कि मै जीवन को स्वयं जीवन के लिए ही प्यार करती आई हूँ और इसलिए प्यार करती आई हूँ क्योंकि वह (अध्यापिका) मेरे पास चली आई थी। मैने न्यू चर्च के विश्वासों को आनन्द के रूप में ग्रहण किया था न कि उस "सान्त्वना" के कारण जिसे ये विश्वास मेरे अन्धेपन या बहरेपन अथवा मेरी अन्य किसी कठिनाई के लिए

प्रदान करते। मूलतः मै सदैव यही अनुभव करती रही हूँ कि मै अपनी पाँचों प्रज्ञाओं का उपयोग करती आ रही हूँ और यही कारण है कि मेरा जीवन भरा-पूरा रहा है। इस समय और यहाँ मै आध्यात्मिक संसार में हूँ जहाँ जब मै इस भौतिक-स्वप्न से जाग उठूँगी तो मेरा जीवन अनन्त काल तक चलता रहेगा, इसलिए मैने कभी यह अनुभव नहीं किया कि अध्यापिका और मै वस्तुतः अलग हैं। अमरत्व की भावना मुझें उसी प्रकार दबा नहीं सकेगी जैसे कि "काल" मुझे यहाँ दबा नही पाता। भावनाओं तथा विचारों के नये अनुभवो की खोज में मुझे "स्थान" वाधित न कर सकेगा। मुझे यह सोचकर दुख होता है कि अध्यापिका अपने अधैर्य के कारण हम सब मे विद्यमान उस परम तत्त्व को समझ न सकी जो मस्तिष्क मे निवास करनेवाली पाँचो प्रज्ञाओं को प्रामाणिक बनाता है और इस प्रकार जो अदृश्य है उसे प्रकाश प्रदान करता है और जो अश्रुत है उसे संगीत।

अब मै अध्यापिका के कुछ ऐसे पत्रों पर आ रही हूँ जो सुन्दर अर्थ से पूर्ण है क्योंकि ये पत्र प्रकट करते हैं कि वह मुझे एक अन्धे, बहरे प्राणी के रूप में नही वरन् एक मानव के रूप मे कितना अधिक मानती थी। वह किसी भी परिस्थिति में मुझे अपने विवेक के प्रतिकूल सोचने, बोलने या काम करने न देती थी। राजनीति, अर्थशास्त्र या धार्मिक विषयों पर अपने विचार व्यक्त करने, और दूसरों के इतनी ही स्पष्टता से व्यक्त किये हुए विचारों को सुनने के मेरे अधिकार को वह मेरे ईश्वर-प्रदत्त अधिकारो मे गिनती थी। उसने मेरी शारीरिक हीनताओं के प्रति कभी मुझ पर व्यंग नहीं किया। मेरी जो भी सम्मति होती उसे वह स्पष्ट हृदय से सुनती, फिर चाहे हमारी सम्मतियाँ कितनी ही भिन्न क्यो न हो और मेरी परिपक्व अवस्था में जब मै अपनी धारणाओ को विकसित कर रही थी और अपने व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति के मार्ग खोज रही थी वह मेरे साथ रही।

"तुम जानती हो, प्रिय, कि तुम स्वभाव से ही एक उत्साही सुधारक हो। हम दोनों युद्ध-भूमि में सैनिकों के समान शान्ति के लिए लड़ रहे हैं। मैने कितनी बार कहा है कि हम दोनों ने जीवन को अत्यधिक संग्राम-भूमि बना डाला है। यदि हम अधिक सौजन्यपूर्ण गुणो को विकसित करते तो संसार में संभवतः अधिक शान्ति होती। यह हम लोगों का जो यह समझते हैं कि सबके प्रति धैर्य और सहिष्णुतापूर्ण होना ठीक है, कर्त्तव्य है। हमारे बिना भगवान् इस संसार को अधिक करुणापूर्ण नही बना सकता......

"फिर भी, यह एक खेद का विषय है कि विल्सन संसार के विस्तार के

साथ स्वयं को विस्तृत नहीं कर सका है। परन्तु क्या उसके आस-पास का संसार विस्तृत हुआ है ? यह एक तथ्य जान पड़ता है कि कुछ दिमाग किसी ऐसी बात को पचा नही पाते जो उनके लिए व्यक्तिगत न हो। वे ऐसे ही बूढ़े हो जाते हैं और समझते है कि उनकी परिपक्व अवस्था ही बुद्धिमत्ता है।

"प्रेजिडेंट विल्सन के प्रति अप्टन सिन्क्लेयर के विश्वास से मै थोड़ा भी प्रभावित नही हूँ। सिन्क्लेयर उन बैठकबाज समाजवादियों में से है जिनसे जो ऐटर को घृणा है। वह एक ऐसा व्यक्ति है जो विल्सन के शब्दजाल में फँस जाता है। नही, नही। विल्सन कोई महान् मानवतावादी नही है। उसके सारे काम और धारणाएँ एक निर्धारित धारणा द्वारा परिचालित होते है। यह धारणा क्या है, इसके विषय में मै अभी स्पष्टतः नहीं जानती, परन्तु जैसे-जैसे घटनाएँ सामने आयेंगी, उसकी यह धारणा भी प्रकट हो जायगी। एक बात निश्चित है। वह जो भी करता है उससे संसार का श्रेष्ठतमं कल्याण होगा। शोषण सदैव अपकारी होता है—यह है क्रिश्चियन मत। मुझे भय है कि प्रेजिडेंट विल्सन के कार्यो और शब्दजाल मे परमार्थ की भावना देख पाने के लिए मेरे मस्तिष्क और हृदय को उन्मुक्त करने मे स्वर्गीय प्रेरणा से कम कोई वस्तु समर्थ नहीं हो सकती। मेरा अनुमान है कि मै उन लोगों मे से हूँ जो अपना विस्तार नही कर पाते।"

उसका अगला पत्र तो मेरे हृदय को छेद देता है। जब हमने प्रथम विश्व-युद्ध में प्रवेश किया था, उस समय मेरा विवेक स्पष्ट था और मै अपने शान्ति-वाद को बनाये रख सकी थी, परन्तु जब द्वितीय संघर्ष छिडा तो मेरे सामने—स्वतन्त्रता या हिटलर—यह विकल्प स्पष्टतः आ खडे हुए और मैंने भयंकर अत्याचार को परास्त करने के लिए अमरीका तथा मित्र-राष्ट्रो की यथा-शक्ति सहायता की। फिर भी मैंने अनुभव किया कि जैसे मैंने शान्ति की स्वर्गीय पताका को त्याग दिया हो और यह भावना मुझे आज भी सताती रहती है।

"फिर भी तुम इस युद्ध की भयकरताओं को अपने दिमाग से बाहर नही रख सकतीं। हम इसके सम्बन्ध में प्रतीक्षा करने के अतिरिक्त और कुछ भी नही कर सकती। मैं समझती हूँ कि कुछ ही महीनो बाद हम इसमे कूद पड़ेंगी। मै नही जानती कि इससे क्या लाभ होगा, परन्तु हमने अमरीका को इस भँवर से दूर रखने मे व्यक्तिगत रूप से यथाशक्ति प्रयत्न किया है......

"हाँ, यह एक अकल्पनीय बात है कि हम जिस युग में रह रहे है और जिसे हम सुसंस्कृत और सभ्य कहते हैं, उसमे ऐसी निन्दनीय घटनाएँ हों। तुम

अब समझ सकती हो कि क्यों विल हेवुड किसी देश के सभ्य होने की धारणा का उपहास किया करता था। मुझे उसका यह कथन याद आता है कि हमारी उच्च-संस्कृति झूठों, ठगो और हत्यारों को छिपाने के लिए एक झीना पर्दा है। उस समय मैं सोचती थी कि वह पागलपन की बात कर रहा है परन्तु अब इस युद्ध की विभीषिकाओं को देखते हुए उसका कथन हल्का लगता है।

"तुम जानती हो, मैंने कभी प्रेजिडेंट विल्सन पर विश्वास नहीं किया। वह अहंकारी है, हृदय से वह एक ऐसा अत्याचारी है जो विस्मार्क बनना चाहता है, परन्तु विस्मार्क जैसी प्रखर बुद्धि उसमें नही है। जब साहूकार लोग (बैंकर्स) अपने ऋणों के विषय में सशंक हो जायँगे तो वे उसको युद्ध में कूद पड़ने के लिए विवश कर देंगे। परन्तु तुम जानती हो, हैलेन, कि इतिहास मे हमें बुरी से बुरी बातें, भयंकरतम विनाश किसी नये युग का प्रवेश-द्वार बनते दिखाई देते हैं। फ्रांसीसी क्रान्ति के उपद्रव, विनाश और भयंकरतायें निःसत्व लोगों को अपने मानवीय अधिकारों के प्रति जागृत करने के लिए आवश्यक थीं। कौन जानता है? संभव है, यह युद्ध इस विशाल भौतिकवादी धनिक तंत्र (प्लूटोक्रेसी) की हृदयहीन मूर्खताओं और अशोभनीय बातों को धरती पर पटक दे। सम्भव है, पूँजी का अपव्यय इतना बढ़ जाये कि पूँजीवाद फिर उठने ही न पाये। इस युद्ध में बलिदान संख्यातीत होंगे, परन्तु संभवतः इसके लाभ भी विपुल होंगे। ओह, प्रिय, कितना निराशापूर्ण है यह पत्र! और ओह, मेरे आस-पास के वातावरण में यह कितना बेसुरा आलाप है।"

अध्यापिका ने जब अपने अगले पत्र के साथ रोम्या रोलाँ का प्रेजिडेंट विल्सन के लिए लिखा गया खुला पत्र भेजा तो मेरे हृदय में विद्युत् का सा स्पन्दन होने लगा। नही, मुझे यह आशा नहीं थी कि रोलां के उदार आग्रह पर ध्यान दिया जायेगा, परन्तु इससे मेरा यह विश्वास फिर से दृढ़ हो गया कि सर्वत्र मानव-प्राणी शान्ति के इच्छुक हैं।

"जनता अपनी शृंखलाओं को तोड़ रही है। जिस समय की आप प्रतीक्षा कर रहे थे और जिसके लिए आप इच्छुक थे, अब आ गया है। इसे व्यर्थ ही न बीत जाने दें। यूरोप के एक छोर से दूसरे छोर तक जनता मे अपने भाग्य को पुनः अपने हाथों में ले लेने और यूरोप के पुनर्जीवन के लिए एकत्र होने की इच्छा जागृत हो रही है। राजनीतिक सीमाओं के आरपार उनके हाथ एक दूसरे से मिल जाने के प्रयत्न में हैं। परन्तु उनके बीच हमेशा से चौड़ी खाइयाँ और गलतफहमियाँ बनी हुई हैं। इस खाई पर पुल बनाना पड़ेगा। पुरातन भाग्यवाद की उन शृंखलाओ को, जो इन लोगों को राष्ट्रीय युद्धों में घसीट

ले जाती हैं और जिनसे वाध्य होकर ये पारस्परिक विनाश के लिए एक दूसरे पर अन्धे होकर टूट पड़ते है, छिन्न-भिन्न करना होगा। अकेले वे यह सब नही कर सकते और वे सहायता के लिए पुकार रहे है। परन्तु वे अपनी बात कहे भी किससे?

"मि० प्रेजीडेट, जिन पर आज जनता की नीति का मार्ग-प्रदर्शन करने के भयंकर सम्मान का भार आ पड़ा है, उनके बीच केवल आपको ही विश्वजनीन नैतिक अधिकार प्राप्त है। आप इन करुणापूर्ण आशाओं की पुकार का प्रत्युत्तर दें। आप इन बढ़े हुए हाथों को अपना लें और आप इनके पुनर्मिलन में सहायक बने। इन भटकते हुए लोगों को पुनः अपना मार्ग खोजने में, स्वन्त्रतता और एकता के अधिकारपत्र की, जिसके सिद्धान्तों की वे हृदय से खोज कर रहे है, नीव डालने में आप सहायता करे।

"आप विचार करे—यूरोप के नारकीय लोकों के रूप में छिन्न-भिन्न होने का भय उत्पन्न हो गया है। सभी देशो की जनता का शासक-वर्ग से विश्वास उठ चुका है। ऐसे समय मे केवल आप ही ऐसे है जो जनता को, सभी राष्ट्रों के मध्य-वर्ग को समझा सकते है। और जिनकी बात को दोनो पक्ष सुन सकते हैं। आप ही केवल ऐसे है जो इन दोनो पक्षों के बीच मध्यस्थ बन सकते हैं। (क्या आप कल भी ऐसा कर सकेगे?) यदि यह मध्यस्थता विफल होती है तो बँटे हुए जन-समूह, सन्तुलन खोकर, भाग्य के द्वारा अति की ओर परिचालित होगे, जनता रक्त-पूर्ण अराजकता की ओर और पुराने शासन-तंत्र के पक्षपाती रक्तपूर्ण प्रतिक्रिया की ओर। वर्ग-युद्ध, जाति-युद्ध, कल की जातियों मे युद्ध, उन जातियों मे युद्ध जो आज बन रही है, अन्धे सामाजिक युद्ध जो केवल घृणा और सर्वसामान्य लोलुपता को ही शान्त करते है, ये सब भविष्यहीन जीवन के एक क्षण के पागलपन के स्वप्न सामने आयेगे।

"जार्ज वाशिंगटन और अब्राहम लिंकन के उत्तराधिकारी! आप किसी एक दल या एक राष्ट्र के पक्ष का समर्थन न करें, अपितु सबका पक्ष ग्रहण करें। आप राष्ट्रो के प्रतिनिधियों को मानवता के सम्मेलन मे आमन्त्रित करे। इसमे आप उस समस्त अधिकार के साथ, जो आपको अपने उच्च नैतिक विवेक और विशाल अमरीका के भविष्य के द्वारा निश्चित रूप से प्रदान किया गया है, सभापति का आसन ग्रहण करें। आप बोले, सबसे बोले! संसार एक ऐसी आवाज का भूखा है जो जातियो और वर्गो की सीमाओं से दूर हो। आप स्वतंत्र राष्ट्रों के मध्यस्थ बनें और भविष्य आपका स्वागत "सुलहकार" के नाम से करे।"

पोर्टोरीको के पत्रों में अध्यापिका के जीवन का केवल वह अंग प्रतिफलित हुआ

है जिसमें बाह्य परिस्थितियों और आदर्शों के संसार के संघर्ष का अभाव था—इसके बीच भी एक विश्व-युद्ध आ पड़ा। मुझे उसकी उस अत्यधिक अनिच्छा पर कोई आश्चर्य नहीं होता जिसके साथ उसने पुनः अपने चिन्ताओं से लदे वातावरण में लौटने के लिए अपने इस 'आनन्द के द्वीप' को छोड़ा। वह जानती थी कि वे परिवर्तन और भाग्य-विपर्यय जिनका अनुसंधान करने का कभी उसे चाव था अब उसके लिए उन्मुक्त न होंगे। वह जानती थी कि उसके संसार मे उसके पुराने शत्रु-विश्लेषण ने जो दरारें छोड़ दी हैं, उनको भरने का उसके पास कोई उपाय नही है। अपनी दृष्टि के बढ़ते हुए धुँधलेपन के कारण उसे काम-काज की व्यस्तता से भय होने लगा था और अपने उग्र स्वभाव के कारण वह संघर्षों से भयभीत होने लगी थी।

१२

यह केवल अध्यापिका की व्यवस्था कर सकने की आशा ही थी जो मुझे अपनी जीवन-कथा की फिल्म बनवाने के लिए हालीवुड ले गई। अभी वह पूर्णतः स्वस्थ न हुई थी और भाषण देने का कार्य वह एक वर्ष से अधिक न कर सकी, परन्तु चल-चित्र में काम करने से उसमें कुछ सन्तुलन आ गया और इससे उसका मस्तिष्क पूर्णतः व्यस्त रहने लगा। यह सन् १९१८ की गर्मियों की बात है। अधिकतर दिन गरम होते थे, परन्तु रातें ठंडी रहती थीं। झाड़ियों के समान उगते हुए जिरेनियम, चटकीले पौपी पुष्प और पाइनसैतिया जिन्हें देखकर अध्यापिका कहती थी कि उसे प्रतीत होता जैसे मेरी आत्मा नई भूमिकाओं पर आरोहण कर रही हो, निश्चित रूप से हमारे आनन्द का विषय थे। जब हम स्टूडियो की ओर जाते होते तो मार्ग में अप्रत्याशित दृश्य जैसे एलास्का के अपरिमापित प्रदेश की ओर जानेवाला कोई अभियान और इसके स्लेज गाड़ी खींचनेवाले कुत्ते, देहात की ओर प्रयाण करता हुआ कोई पुराने ढंग की डाक-प्रणाली का टट्टू, स्की-जूते (लकडी के बने लम्बे, तङ्ग जूते जिन्हें पहनकर बर्फ पर चलते है) पहने हुए पर्वतारोहियों का कोई दल, हमारा स्वागत करते।

चित्र के जिन दृश्यों में हमने भाग लिया उनके बीच के अवकाश में अध्यापिका डाइरेक्टर तथा कार्य-कर्त्ताओं के साथ बातचीत और हँसी-मजाक करती। उसके दिमाग में अनेक प्रतीकात्मक योजनाएँ थी जिन पर वह मेरे साथ विचार-विमर्श किया करती थी। इनको लेकर वह फिल्म-कम्पनी के प्रतिनिधि डा० लीबफ्रीड के साथ, जो बिलों का भुगतान किया करता था, तर्क-वितर्क करती और उसने उससे ये रंगीन वायदे करा लिये कि हमारे इस चित्र से दर्शकों की रुचि और सहानुभूति अपनी ओर जागृत करने के हमारे प्रयत्नों में वह हमारी सदा सहायता करेगा। ये वायदे कभी पूरे न किये गये और जब कभी वह बढ़ते हुए खर्चो को देखकर क्रोध से लाल-पीला हो उठता, वह धैर्यपूर्वक परन्तु बड़ी कठोरता से उसे उसके वचनों का स्मरण दिला देती। तब उसके क्रोध का वेग छूट पड़ता और अध्यापिका के सिर पर वही पुरानी बेपरवाही सवार हो जाती। कभी-कभी वह इस वाग्युद्ध से विरत होकर

हैलेन कैलर हार्वर्ड विश्वविद्यालय के वर्षारम्भ समारोह मे। इस समारोह मे कैलर को 'डॉक्टर ऑव् लॉ' की उपाधि से सम्मानित किया गया था। बाये से दाये—पौली टॉमसन; कुमारी कैलर; आर्थर हेस सुल्ज़बर्गर; 'न्यूयार्क टाइम्स' के प्रकाशक; डॉ० कॉनरेड ऐडेनूर, 'जर्मन फैडरल रिपब्लिक' के चासलर, डॉ० नैथन पुसी, 'हार्वर्ड' के प्रेजिडेन्ट।

हैलेन कैलर और ऐन सलिवॉ मेसी उँगलियो की भाषा में वार्तालाप करते हुए।

मुझसे प्रेम का बखान करने लगता और फिर प्रहार करने लगता। वह चाहता था एक ऐसा चित्र जो व्यापारिक क्षेत्र में सनसनी पैदा कर दे और अध्यापिका और मैं चित्र में ऐतिहासिक विवरण का आग्रह कर रही थीं और इन दोनों दृष्टिकोणों का मेल होता दिखाई न देता था। यह एक गम्भीर परिस्थिति थी, परन्तु यद्यपि अध्यापिका क्रोध से लाल हो उठती और वह आपे से बाहर हो जाती, फिर भी वह अनुभव के अनदेखे प्रदेशों की ओर बढ़ने और सांसारिक बातों की समझ-बूझ को बढ़ाने के मेरे अधिकार के पक्ष में अडिग रहती।

मुझे आशा थी कि हालीवुड विशिष्ट परिस्थितियाँ उसके वास्तविक स्वरूप का और भी अधिक उद्‌घाटन कर देंगी, परन्तु जब हम मेरी पिकफोर्ड, डॉग्लस फेयरबैंक्स और श्रीमती कैरी जैकब्स बौड से मिले तो बहुत अधिक अपने में ही सिमटी रही। ये सब हमारे प्रति मित्रतापूर्ण थे परन्तु इन्होंने मेरी जो प्रशंसा की उससे मैं ठगी सी रह गई, यद्यपि इन लोगों ने जान-बूझकर ऐसा न किया था। इनमें से पहले तो किसी ने अध्यापिका के बारे में कुछ कहा ही नही और यदि किसी ने कुछ कहा भी तो उसने भी यह न कहा कि अध्यापिका इसलिए विशेष प्रशंसा की पात्र है क्योंकि उसने मेरी सीमित क्षमताओं के क्षेत्र का मानो हल चलाकर संस्कार किया था और मुझे मेरी मानवीय विरासत की फसल प्रदान की थी। तथापि चार्ली चैपलेन के साथ अध्यापिका की स्वभावगत उदारता और सौन्दर्य अभिव्यक्त हुए। इन दोनों ने ही गरीबी और इससे शरीर और आत्मा में जन्म लेनेवाली कुरूपताओं को सहन किया था। इन दोनों ने शिक्षा और सामाजिक समानता प्राप्त करने के लिए संघर्ष किया था और जब इनके प्रयत्न सफलता से विभूषित हो गये तो इन्होने निःस्वत्वों के लिए करुणा से द्रवित होकर अपने आपको बिछा दिया था। दोनों ही विनम्र थे और भाग्य पर अपनी विजय से उद्धत न बने थे। इसलिए यह स्वाभाविक था कि ये दोनों एक दूसरे को समझ सकें और एक ऐसी मित्रता स्थापित कर सकें जो प्रतिभा की संतानों के प्रति प्रायः हृदयहीन इस संसार में महान् कलाकारों के लिए सान्त्वना प्रदान करनेवाली है। परन्तु उसके प्रति मेरा अभिमान (यदि प्रेम को इस शब्द से सम्बोधित किया जा सके) मेरी समस्त जागरूकता और उसके व्यक्तित्व को प्रकाशित करने की मेरी समस्त इच्छाओं के होते हुए भी शायद ही कभी संतुष्ट हो पाया हो। यदि उसने यह सोचा हो कि मैं सार्वजनिक प्रशंसा के छिछलेपन से सदैव प्रसन्न या तटस्थ रहने लगी हूँ तो मेरे प्रेम में अन्धी होकर ही उसने ऐसा सोचा होगा। मैं अकृतज्ञता के कारण नहीं, अपितु न्याय की भावना के कारण ही उन मूर्खतापूर्ण धारणाओं की आलोचना में प्रवृत्त होती

हूँ, जो धारणाएँ मेरे साथ किये हुए अध्यापिका के कार्यो के प्रति बन गई थीं।

मैं "फ्रॉस्ट किंग" की अपनी साहित्यिक चोरी का पहले ही उल्लेख कर चुकी हूँ। इस सम्बन्ध में मैं जिस दुष्कृत्य को क्षमा नही कर पाती वह यह है कि ऐन सलिवाँ पर मेरे मस्तिष्क को विकृत करने का आरोप लगाया गया। जब मै रैडक्लिफ कालेज में अध्ययन कर रही थी, कुछ लोगों ने जो अपने आपको "क्रिश्चियन" और "अन्धों का मित्र" कहते थे, मेरे मार्ग में शंकाएँ और भ्रम इसलिए बिखेरे क्योकि मै अन्धी और बहरी थी और अध्यापिका का स्पष्टत. नाम न लेते हुए इन लोगो ने अप्रत्यक्ष रूप से यह जताया कि मुझे ऐसे विषय लेने के लिए बाध्य किया है जिनका मर्म समझने मे मेरा मस्तिष्क समर्थ नही हो सकता।

यहाँ तक कि रैन्थम के सुखमय दिनों मे भी जब मैंने स्वान्तं.सुख के लिए शेक्सपियर-बेकन विवाद पर लिखा और अपने लेख मे बेकन का पक्ष लिया तो 'सेंचुअरी मैगजीन' के रिचर्ड वाटसन गिल्डर जैसे मित्र भी चौंक उठे। श्री गिल्डर ने मुझे "सेंचुअरी मैगजीन" के लिए "मेरा संसार" (दि वर्ल्ड आफ लिव इन) और "पत्थर की दीवार का गीत" (दि सौग ऑव दि स्टोन वाल) लिखने की अनुमति दी थी। इनमें से पहला निबन्ध तो अत्यधिक विवादग्रस्त था, परन्तु उसने इसे स्वीकार कर लिया था। परन्तु जब मैंने उसके पास अपना शेक्सपियर-बेकन सम्बन्धी लेख भेजा तो उसने यह भय प्रकट किया कि ऐसे विषय पर सार्वजनिक रूप से अपने विचार व्यक्त करने से मुझे हानि पहुँचेगी। यहाँ तक कि उसने अध्यापिका और जॉन पर भी यह आक्षेप किया कि उन्होने मुझे ऐसा लेख क्यो लिखने दिया। उसे स्वप्न में भी यह ख्याल कैसे आया कि एक स्वतन्त्र नारी के रूप में मुझे जो अपनी इच्छा के अनुसार कुछ भी लिखने का अधिकार प्राप्त है उसमे वे हस्तक्षेप करेंगे। मै इस बात का उल्लेख इसके महत्त्व के कारण नही कर रही हूँ, अपितु इसलिए क्योंकि यह प्रथम अवसर था जब मैंने बाहरवालों को यह जताया कि मै स्वयं अपने विचार भी रखती हूँ।

सबसे बड़ा प्रतिबन्ध जो मुझे पीड़ित कर रहा था, यह था कि मुझे केवल दो विषयो तक सीमित कर दिया गया था। पहला विषय तो स्वयं मै ही थी, जिससे मै हृदय से तंग आ चुकी थी और दूसरा विषय था अन्धे लोग। अध्यापिका मुझे अपने (अध्यापिका के) विषय मे, यहाँ तक कि "मेरी जीवन-कथा" में भी कुछ न कहने देती थी। सन् १९०६ में मुझे बडी निराशा हुई जब अध्यापिका के बदले, जिसे अन्धों के कार्य का दीर्घकालीन अनुभव था, मुझे अन्धो के लिए

मैसाच्युसेट आयोग का सदस्य नियुक्त किया गया। मुझे दुःख होता था कि अध्यापिका को, जिसे इतने वर्षो से वाधितो की सहायता पहुँचाने की विधियों का प्राथमिक ज्ञान था, छोड़कर मुझसे परामर्श लिया जाता था। मुझे आश्चर्य होता था कि रैन्थम में हमारे घर पर आनेवाले लोग बहरो, अन्धो और बहरे-अन्धों की अत्यधिक भिन्न समस्याओं पर निपुण अध्यापिका का परामर्श न लेकर जो उनके प्रश्नों का योग्यतापूर्वक उत्तर देती, मुझसे विचार-विमर्श करते।

जब अध्यापिका और मै पहले-पहल रैन्थम मे बसे तो लोग समझते थे कि मै अन्धों के लिए काम करती हूं, न कि आंखो की रोशनी की रक्षा के लिए। मुझे पूर्णत· व्यस्त रखने के लिए अन्धों का कार्य ही पर्याप्त था। मुझे अपना स्वतन्त्र जीवन बिताने का सौभाग्य केवल कुछ ही वर्षों से मिला था और अब भी जब कभी मेरे सामने अन्धों की कोई उलझी हुई समस्या उपस्थित हो जाती तो मै समाधान के लिए अध्यापिका का सहारा लेती। जब विभिन्न प्रश्न सामने आते, हम इन पर विस्तृत चर्चा करते और जॉन उन पुस्तकों और विवरणों को पढ़कर सुनाता, जिनमें यह उल्लेख होता कि अमरीका, इंगलैण्ड, फ्रास और जर्मनी में नेत्र-हीनों की समस्याएँ कैसे हल की गई है। इनमें से कुछ पुस्तके या विवरण फ्रान्सीसी अथवा जर्मन भाषा मे होते। यह स्मरण रखना चाहिए कि अमरीका मे अन्धों के लिए आन्दोलन अपेक्षाकृत नया था और उनको पढ़ाने की विधियों के विषय मे उन व्यक्तियो के अतिरिक्त जो अन्धों के थोडे से स्कूलो में थे और कोई शायद ही कुछ जानता रहा हो। जितना ही मैं स्थिति की पर्यालोचना करने लगी उतना ही मुझे अपनी अपर्याप्तता का बोध होने लगा। जनता सभी अन्धों को एक वर्ग समझती थी और अब भी समझती है। परन्तु वस्तुतः जैसे नेत्रवाले दो व्यक्ति एक जैसे नहीं होते वैसे ही कोई दो नेत्र-हीन व्यक्ति भी एक से नही होते। जितने अन्धे है उन्हे लगभग उतनी ही भिन्न-भिन्न प्रकार की सहायताओं की आवश्यकता है। नेत्र-हीन बच्चों का प्रशिक्षण एक प्रकार का होता है और सीमित दृष्टिवाले या सर्वथा दृष्टिहीन बच्चों का प्रशिक्षण दूसरे प्रकार का। युवक अन्धों को विशेष कारखानों में या उनके ही घरो मे काम देने की समस्या है, बूढ़े और अशक्त अन्धों की देखरेख का प्रश्न है और इनकी निरन्तर बदलती हुई आवश्यकताओं के प्रति जनता के कर्त्तव्य और सरकार के उत्तरदायित्व का प्रश्न है। फिर इसमें आश्चर्य ही क्या है कि किसी सार्वजनिक सभा में बोल सकने या विधान-सभा के सदस्यो के समक्ष वाधितों का पक्ष-समर्थन कर सकने से पहले अध्यापिका और मुझको इस कार्य के किसी नये पक्ष से प्रायः भिड़ना पड़ता था। तो फिर इसमे आश्चर्य की

बात ही क्या है कि मै अध्यापिका को, जिसका अन्धों के बीच अनुभव विपुल था और जिसके साधन विशाल थे, अपने दोनो के सामूहिक कार्य में प्रेरक-शक्ति समझती और अपने आपको उस कल्याणकारी ईश्वरीय योजना का साधन समझती जिसका हमने दूर से आभास पाया था !

अब मै यहाँ यह बता देना चाहती हूँ कि एक ऐसा भी समय था जब समाज में नवजात शिशुओ के अन्धेपन की चर्चा करना भी वर्जित था। इस रोग को समाप्त करने के लिए मैने स्वयं ही आन्दोलन उठाया। मैने यह कदम इसलिए भी उठाया क्योंकि आँखों के कारण अध्यापिका के कष्टों से मै द्रवित हुई थी। तब भी मेरे एक प्रिय मित्र ने मेरी तथा अध्यापिका की मेरे उन लेखों और भाषणो के लिए निन्दा की जो मैंने साध्य अन्धेपन के सम्बन्ध में प्रस्तुत किये थे। "तुम ऐसे व्यर्थ के प्रश्नो पर क्यों अपने दिमाग को परेशान करती हो ?" उसने कहा, "निरी लापरवाही से बच्चो की आँखो को नष्ट कर देना मानव-स्वभाव की बात है और तुम जानती हो कि मानव-स्वभाव को बदलने का कोई भी प्रयत्न कितना आशाहीन होता है।" मैने उसके साथ बहुत देर तक तर्क-वितर्क किया, परन्तु व्यर्थ। तब से समय का प्रवाह अनेक पुलो के नीचे से होकर बह चुका है और अब हम लोगो को जो यह जानते है कि आज साध्य अन्धेपन को दूर करने के अधिक अच्छे तरीकों पर विचार करने के लिए प्रति वर्ष अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन किये जाते है, ये अन्धविश्वास अविश्वसनीय लगते है।

कभी-कभी तो मै उन मूर्खतापूर्ण धारणाओं पर हँस देती थी जो बहरे-अन्धो के विषय में और उनके लिए इस संसार तथा इसकी बातो का ज्ञान प्राप्त करने की असंभवता के सम्बन्ध मे उस समय प्रचलित थीं और अभी तक चल रही है। इन धारणाओं को देखते हुए मुझे वे अलंकारपूर्ण प्रशंसात्मक शब्द जो मेरे लिए प्रयुक्त होते थे, जैसे "देवी", "सन्त", "अन्धकार में प्रकट होनेवाला अवतार", निष्प्राण प्रतीत होने लगे।

जब मै अन्धों के लिए मैसाच्युसेट आयोग में नियुक्त हुई तो मुझे उस लड़ाई मे विशेष रुचि का अनुभव हुआ जिसे यह राज्य युवक अन्धों के प्रशिक्षण के तथा स्वावलम्बी बनाये जाने के अधिकार की रक्षा के लिए अन्धविश्वासों तथा अज्ञान के साथ लड़ रहा था। मुझे याद आई कि अध्यापिका पर्किन्स इन्स्टीट्यूट में शिष्या के रूप में रह चुकी है और इसके प्रथम अध्यक्ष डा० हावे ने एक ऐसी संस्था की योजना बनाई थी जो राज्य के सभी युवक अन्धों को रोजगार दे सके। यह रचनात्मक योजना उस सीमा तक कार्यान्वित न की गई थी जितना कि किया जाना चाहिए था और अध्यापिका तथा मैंने इसको

पूर्णतः कार्यान्वित करने का उद्योग किया। अकस्मात् मुझे एक भयंकर आघात लगा। बात यह हुई कि मै स्प्रिंगफील्ड से निकलनेवाले "रिपब्लिकन" पत्र के सम्पादक श्री एफ० बी० सैन्बोर्न से परिचित थी। वह कभी उस अध्यक्ष-मंडल का सदस्य था जिसके नियन्त्रण मे ट्यूक्सबरी का अनाथालय था और उसी के प्रयत्नों से ऐन सलिवॉ पर्किन्स में लाई गई थी। उससे यही आशा की जा सकती थी कि ऐन के उस साहस को जिसके साथ उसने अपनी शिक्षा के लिए संघर्ष किया था और उसके उस मानव-कल्याण के कार्य को जिसमें उसने अपने आपको लगा दिया था, देखते हुए वह ट्यूक्सबरी के सम्बन्ध में उसके मौन का सम्मान करेगा, परन्तु यह मेरा भ्रम सिद्ध हुआ। जब मै मैसाच्युसेट की विधान सभा के सदस्यों के सामने युवक अन्धो की आवश्यकताओं के बारे में बोल चुकी तो मित्रों ने मुझे सूचना दी कि सैनबोर्न ने अध्यापिका को अपमानित किया है। उसने उसके विरुद्ध उसकी साधारण परिवार मे जन्म पाने की बात खड़ी की और उस संस्था के प्रति उसकी "कृतघ्नता" की चर्चा की जिस संस्था ने उसको तब शिष्या के रूप मे ग्रहण किया था जब वह राज्य के संरक्षण में थी। अध्यापिका ने मुझसे इस विषय मे कभी एक शब्द भी न कहा, परन्तु मैने, उसकी इच्छाओ के प्रतिकूल अपनी घृणा को सैनबोर्न के लिए लिखे गये एक पत्र में उँड़ेल दिया। आज तक मै इस कमीनेपन के व्यवहार को क्षमा नहीं कर पाती। उसे तब यह स्मरण न रहा होगा कि हम अपने साथियों से कितने ही उकता क्यों न जायँ, फिर भी हम परस्पर सम्बद्ध हैं और एक दूसरे के लिए तथा एक दूसरे की सहायता से हमारा जीवन है। उच्च कार्य करने के हमारे अवसर हमारे मानवता के गौरव को लांछित करनेवाले व्यवहार से नष्ट हो जाते हैं। मेरे लिए यह एक कटु अनुभव था कि कैसे एक ऐसा व्यक्ति जो इमर्सन और थोरो के आदर्शो का उपासक रहा हो, इन आदर्शो से निर्धनों और भाग्यहीनों के प्रति सद्भावना प्राप्त करने की अपेक्षा घृणा ग्रहण करता है।

निष्ठुरता और भद्देपन की इस भयंकर भावना ने जो मानव-स्वभाव में प्रायः प्रकट होती है, सन् १९१४ से १९१८ तक के मेरे भाषण-काल में मुझे आक्रान्त न किया। हमारे श्रोतागण सभी जगह बड़े कृपालु थे और मैं उनके उस धैर्य की प्रशंसा करती जिसके साथ वे मेरे दोषपूर्ण उच्चारण को सुनते, परन्तु मैं इस भावना से अपने को बचा न पाती थी कि अध्यापिका की सराहना पूरे तौर पर नहीं की जा रही थी। उसमे सार्वजनिक सभाओं मे बोलने की स्वाभाविक क्षमता थी, इसलिए कार्यक्रमों में उसका भाग प्रमुख रहता था और मुझे यह देखकर प्रसन्नता होती थी कि उसके बहुमूल्य कार्य

का प्रकाश अब किसी आवरण से छिपाया नहीं जा सकता। श्रोताओं से मैं जो प्रश्न पूछती थी उन प्रश्नों के उत्तर में उनके उदासीनतापूर्ण शब्दों से मै जान गई थी कि शान्ति, समाज के ढाँचे या मजदूर आन्दोलन के विषय में मै जो कुछ कहती थी उस पर वे ध्यान नही देते थे, वे मुझसे केवल अन्धों के बारे में या शायद कोई सुखमय संदेश सुनना चाहते थे। परन्तु मुझे इस बात से बड़ी तृप्ति होती थी कि वे अध्यापिका की बात ध्यान से सुनते थे। मैं कल्पना करती थी कि सरल और विनम्र अध्यापिका के मंच पर खड़े होने पर उसका सामान्य और प्रज्ञाहीन बच्चों की यथार्थ शिक्षा का संदेश मानो

बिखरने को, किसी धधकती अँगीठी से
भस्म और चिनगारियाँ

निकल पड़ा हो और संसार भर मे नवीन विचारों को उत्तेजित कर रहा हो, परन्तु निराशा स्थान-स्थान पर मेरा पीछा करती रही। यद्यपि उस पर प्रशंसात्मक शब्दों की बौछार की जाती, परन्तु मैंने देखा कि श्रोतागण उसके विचारों को समझने के लिए बहुत उत्सुक न रहते थे। इससे यह तथ्य प्रमाणित हो गया कि ऐसे लोगों की संख्या अपेक्षाकृत नगण्य है जो भाषा के चमत्कार का अनुभव करते है और इससे सच्चा प्रेम करनेवाले लोग जैसे डा० वेल और अध्यापिका, तो और भी कम है। उसने मुझे कभी अपनी यह इच्छा प्रकट न करने दी कि लोग उसका (अध्यापिका का) अधिक व्यापक और हार्दिक सम्मान करें और यदि इस विषय मे मैं कभी विरोध प्रकट करती तो वह मुझे धमकी देती कि वह फिर कभी भाषण न देगी।

[illegible] तथा अन्य उदार दलो के बीच भी, जहाँ अध्यापिका और मै अधिक अपनापन अनुभव करती थी, मुझे उसके (अध्यापिका के) कार्य की बोधयुक्त प्रशंसा का अभाव प्रतीत हुआ। बहुत वर्षों बाद जब मै अपने यौवन-सुलभ अधैर्य को पार कर पाई, तब कही मै समझ पाई कि शिक्षा, अर्थ-व्यवस्था, शासन-तन्त्र, विज्ञान या अन्य कोई भी विषय जिस पर युगों से चिन्तन होता आ रहा है, इन सबके सम्बन्ध में धारणाएँ धीरे-धीरे ही विकसित होती हैं। विशाल सिक्वोइया वृक्ष के समान ये मानव-चेतना की धरती में अपनी जड़े इंच-इंच कर जमाते है और विचार के विस्तृत आकाश में अपनी शाखाएँ धीरे-धीरे फैलाते हैं। अध्यापिका को यह रहस्य बहुत पहले अवगत हो गया था, परन्तु प्रथम विश्व-युद्ध की दुखद घटना, कुछ मौलिकता-वादियों पर से हमारा विश्वास उठ जाना और स्वयं उसके अपने निरुत्साह के क्षण, इन सब बातों के होते हुए भी, वह बेदखल, सम्पत्तिहीन लोगो के लिए तथा शान्ति के लिए मेरे उद्योगों मे सहर्ष मेरे साथ रही। उसका प्रथम और अन्तिम

विचार यही था कि मानव-जाति की एक सदस्य के रूप में मैं स्वेच्छानुरूप कार्य करने की पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त कर लूँ। वह मुझे बता देती थी कि सामाजिक प्रश्नों के प्रति मेरी दृष्टि को अच्छे से अच्छे जानकार लोग स्वीकार करते है या इसकी निन्दा करते हैं और तब इनमें स्वतन्त्रतापूर्वक चुनाव का उत्तरदायित्व मैं अपने ऊपर ले लेती। इस विषय में वह अपने व्यक्तिवाद से कभी अभिभूत न होती थी, जैसे कि मेरे जान-पहिचान के कुछ लोग हो जाते है और जिनकी बोधयुक्त अथवा अबोधयुक्त अहंकारपरता उन व्यक्तियों को नष्ट कर देती है, जिन व्यक्तित्वों का विकास करने का वे दावा करते हैं।

पहले तो सभी बाते मेरी अध्यापिका की व्यवस्था कर सकने की इच्छा के प्रतिकूल जाती प्रतीत हुई। हालीवुड मे हमने बहुत ऊँचा दॉव लगाया था, परन्तु वहाँ हम हार गये। तब हम विविध मनोरंजन-गृह (वौदविल) के कार्यक्रमों की ओर मुडे। मेरी आवाज, जो कि इन कार्यक्रमो में हमारे अनुष्ठानों का सारभूत अंग थी, इतनी सुधर न पाई थी जितनी कि मुझे आशा थी। मुझे श्रोताओं से बचने की वैसे ही आशा नही थी जैसी कि इससे पहले और जब मैं यह सोचती कि यदि हम यहाँ विफल हुए तो मुझसे अधिक अध्यापिका को कष्ट झेलने पड़ेंगे, तो मेरा हृदय निरुत्साहित हो जाता। परन्तु परिस्थितियों ने हमारा साथ दिया। श्रोतागण, तब भी जब कि उनके बीच कुछ उद्धत लोग भी आ जाते, हमारे अनुष्ठान मे आनन्द का भाव प्रदर्शित करते और मेरे इस सन्देश को कि यदि मनुष्य केवल इतना समझ जायें कि मानवता की उपचार-साध्य महान् विपत्तियों को दूर करने के लिए संसार में पर्याप्त बौद्धिक शक्ति और सद्भावना है तो संसार में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो जायें, वे कृपा-पूर्वक ग्रहण करते। मुझे किसी गौरवपूर्ण कार्य द्वारा अपनी आजीविका का उपार्जन करने में वैसे ही अभिमान का अनुभव होता था जैसा कि मैडम शूमन हीन्क को और मुझे इसकी चिन्ता न थी कि मेरे कार्य से अत्यधिक कोमल भावुक लोगों को ठेस पहुँचती थी। हमारे प्रबन्धक श्री हैरी बैबर ने असाधारण विचारशीलता द्वारा हमारे मार्ग को सरल बना दिया था और अन्ततः मै अध्यापिका के लिए वह निधि जुटाने में सफल हुई जो तब से मेरे स्वप्नों मे बसी हुई थी जब मैं अल्पवयस्क लड़की थी। मैं श्री बैबर की इस बात के लिए विशेष रूप से कृतज्ञ थी कि वे हमारे आलोचकों से निपटना जानते थे। जब ये लोग आक्षेप करते कि मुझे तो केवल भाषण-भवनों में और चर्चो मे ही भाषण देने चाहिए, परन्तु हमारी आर्थिक समस्याओं का कोई व्यावहारिक समाधान उपस्थित न करते तो ऐसे लोगों से श्री बैबर केवल इतना

पूछते, "क्या तुम उन्हे वही रकम दे सकोगे जो हम देते हैं?" और तब हमें फिर इन लोगो के दर्शन न होते। हमारे लिए यह भी एक लाभदायक बात थी कि हमारे अनुष्ठान में संगीत का अधिक भाग रहता था और अनुष्ठान डेढ़ घंटे की अपेक्षा बीस ही मिनट मे समाप्त हो जाता था। इसके अतिरिक्त हम एक स्थान पर एक सप्ताह तक ठहर सकती थी। हमारे लिए यह आवश्यक न था जैसा कि पहले भाषणो के कार्यक्रम मे होता था कि हम उन लोगो का सदिच्छापूर्ण परन्तु उकतानेवाला आतिथ्य स्वीकार करें जिन्होंने हमारे कार्यक्रम की व्यवस्था की हो।

दूसरी ओर, वे दो वर्ष अध्यापिका के लिए कठोर परीक्षा के वर्ष रहे थे। उसे सार्वजनिक सभाओ मे भाषण देना कभी रुचिकर न था, यद्यपि सर्वत्र लोग मुझसे यही कहते थे कि उसके स्वर को सुनने मे बड़ा आनन्द आता था। जब कभी वह मच के प्रकाश में आती, उसकी आँखें वेदना का अनुभव करने लगतीं। इसके अतिरिक्त उसकी विशाल आत्मा इस बन्धन से तथा उन अनेक क्षुद्र बातों से, जो उसे देखने और सुनने को मिलती, भाराक्रान्त हो उठती। मुझे उसकी न्याय की भावना पर तब बड़ा आश्चर्य होता जब वह यह चर्चा करती कि उसे विविध मनोरंजन-गृह मे कैसे अनेक थका देनेवाले घंटे बिताने पड़ते हैं परन्तु मैं यह भी भली भाँति जानती थी कि साधारण श्रोतागणो का मनोरंजन करनेवाले सामान्य स्थानों से उसकी भावुकता को कैसी ठेस लगती थी। उसकी आत्मा तालाब मे मछली के समान व्यर्थता के चक्रों में चक्कर काटती प्रतीत होती थी और उसके उदासी के दौरे उसकी सहायता न कर पाते थे। उद्योग की वेदना से उसकी आत्मा

.........आग की बूँदे
आँसुओं से न बुझनेवाली

बहाती। उसे उन झगड़ों, ईर्ष्याओं और क्षुद्रताओं से घृणा थी जो प्रत्येक व्यवसाय, कला और कार्य मे पाई जाती है। उसे ऐसे-ऐसे लोग मिलते, जिनके साथ वह इसलिए धैर्य खो बैठती क्योंकि उन लोगों का स्वयं अपनी मान्यताओं और उपदेशों मे पूर्ण विश्वास न होता और क्योंकि ये लोग अपने निश्चयों को कभी भी कार्यान्वित न करते या करते भी तो यदा-कदा ही। "इसकी परवाह नहीं कि क्या होता है, प्रारम्भ करने और असफल होने का क्रम चलाते रहो। जब भी तुम विफल हो जाओ, फिर नये सिरे से प्रारम्भ करो और इससे तुम अधिकाधिक शक्तिशाली होते जाओगे तथा अन्त मे तुम देखोगे कि किसी उद्देश्य की पूर्ति कर पाये हो—वह उद्देश्य नहीं जिसको तुम लेकर चले थे,

परन्तु संभवतः एक ऐसा उद्देश्य जिसका स्मरण कर तुम प्रसन्न होगे।" और कौन गिनेगा उन असंख्य बारों को जब कि उसने प्रयत्न किये, विफल हुई और जीती?

मुझे यह सोचकर बहुत मनस्ताप होता है और साथ ही मैं प्रशंसा से भी भर उठती हूँ कि अध्यापिका को विविध मनोरंजन-गृह के दौरों में ऐसी अवस्था में जाना पड़ा जब उसे आराम करना चाहिए था। मै यह याद कर भी बहुत दुखी होती हूँ कि मैंने भद्दे प्रश्नों का स्पष्ट उत्तर देने की अपनी मनोवृत्ति के कारण उसे कितना परेशान किया। उसका स्वास्थ्य गिरता जा रहा था। यदि उसके बगल मे पौली न चलती होती तो वह लड़खड़ाने लगती। बार-बार उसके स्वर-यंत्र को या कंठ नाल को जबर्दस्त ठंड पकड़ लेती। जिन विभिन्न नगरों मे हमारा भ्रमणशील मनोरंजन-गृह हमे ले जाता, वहाँ के नेत्र-चिकित्सक उसकी आँखो की परीक्षा करते और कहते कि वह अपनी आँखों को विश्राम दे, नहीं तो वह उनकी रोशनी से बिलकुल हाथ धो बैठेगी। वह उनके आदेशों पर ध्यान न देती और अपने काम मे जुटी रहती, परन्तु अन्त में सन् १९२१ के दौरान में टोरन्टो में उसको इन्फ्लुएंजा के एक बहुत बुरे दौरे के कारण बिस्तर पकड़ना पड़ा। पौली को, जो इस आकस्मिक स्थिति के लिए तैयार न की गई थी, उसके निर्देशन मे मंच पर उसकी भूमिका निभानी पड़ी। अध्यापिका कुछ समय के लिए अपना कार्य सँभालने के लिए पर्याप्त रूप से स्वस्थ तो हो गई, परन्तु सन् १९२२ के प्रारम्भ में कंठ-नाल के रोग ने उसको रुक जाने के लिए बाध्य कर दिया, क्योंकि वह फुसफुसाहट से अधिक उच्च स्वर मे बोल न पाती थी। पौली ने अध्यापिका के निर्देशो के अनुसार कार्य करते हुए स्थिति पर आश्चर्यजनक रूप से अधिकार कर लिया था और वह मंच पर मेरे साथ काम करने के योग्य हो गई थी। अध्यापिका के प्रेम का इससे अधिक सजीव प्रमाण और क्या हो सकता है कि उसने अपने आप पर मेरी भौतिक निर्भरता को कम कर दिया और मेरे लिए यह संभव बना दिया कि मै किसी और के साथ भी मंच पर कार्य कर सकूँ। कुछ समय तक तो मैं अपने अनुष्ठान की प्रधान प्रेरणा से वंचित होकर अपने आपको बिलकुल खोई-सी समझने लगी परन्तु मेरे लिए उसने जो वीरोचित बलिदान दिया था उसका विचार कर मुझे दुःख मानने का साहस न हुआ।

१२

हम तीनों का वौदविल से फारेस्ट हिल मे अपने घर की ओर प्रत्यावर्तन अवसादपूर्ण था। अध्यापिका ने मेरे उन कार्यों के प्रति, जो मैंने उसके स्वावलम्बन के "अल्प-साधनों" को बढ़ाने के लिए किये थे, अपना प्रशंसाभाव बड़े हृदयग्राही रूप से प्रकट किया, परन्तु मैं भ्रम में न पड़ी। यह तो बहुत ही स्पष्ट था कि उसमें जीवन के प्रति जो महान् उल्लास था, वह अब समाप्त हो गया था। उसके मुख पर प्रकाश की जो आभा झलकती थी, वह अब बुझ चुकी थी। वह उस स्वतन्त्रता के लिए व्याकुल रहने लगी थी जिसका आनन्द उसने तब उठाया था जब वह अपने आप घूम सकती थी, गाड़ी चला सकती थी और किसी की सहायता के बिना पढ़ सकती थी। उसे एक नये संसार में रहने का परिवर्तन इतना न खल रहा था जितना यह अनुभव कि निष्ठुर नियति उसकी शक्तियों को क्षीण करती जा रही है। मेरे कहने का यह अर्थ नहीं कि वह परास्त हो गई थी। हमारे घर मे वह जब कभी मित्रों का आतिथ्य करती उस अवसर पर वह अपने आपको भव्य-व्यवहार और उत्साहवर्धक संलाप के लिए सन्नद्ध कर लेती। वह किसी ऐसे व्यक्ति को सहन न कर सकती थी जो यह समझता हो कि उदास बने रहने में ही बुद्धिमानी और चतुराई है। वह उन लोगों से घृणा करती थी जो जीवन-मन्दिर के पर्दों में से झाँकते हैं, इसे खाली पाते हैं और बड़बड़ाते हुए चले जाते हैं, परन्तु जिन्हे कभी यह बात नही खटकती कि स्वय उनकी आध्यात्मिक कल्पना ही धुँधली है। परन्तु वह कभी इस तथ्य के साथ समझौता न कर पाती थी कि उसकी उपेक्षित, अत्यधिक परिश्रान्त दृष्टि की परियाँ (आँखें) देर-सबेर से उसकी सेवा करने मे असमर्थ हो जायेंगी। उसे सदैव उस बात में विश्वास रहा था जो डा० सैमुएल ग्रिडले हौवे ने सोलह वर्षो तक पर्किन्स इन्स्टीट्यूट का सदस्य रहने के बाद कही थी। "यह समझना कि आँखों के बिना चरित्र का पूर्ण एवं समरस विकास हो सकता है, यह समझने के बराबर है कि भगवान् ने हमें यह ज्ञानेन्द्रिय व्यर्थ ही प्रदान की है।"

अध्यापिका इस बात से इनकार न करती थी कि इस अभाव की किसी न किसी रूप में क्षति-पूर्ति भी होती है और उसे मिल्टन के अपनी नेत्र-हीनता पर लिखे गीत का स्मरण आता जिसमें ये शब्द आये हैं, "वे भी सेवा करते हैं जो खड़े रहते हैं और प्रतीक्षा करते हैं।" परन्तु उसके दृष्टिकोण से ये क्षति-पूर्तियाँ छाया की उस लम्बी रात की तुलना में पर्याप्त न थीं। वह उन भावुक आत्माओं में से थी जो अन्धेपन के कारण लज्जा का अनुभव करती हैं। यह उन्हें वैसे ही अपमानित करता है जैसे कोई भद्दी भूल या कोई विकृत अंग। वे दूसरों की कृपापूर्ण सद्भावनाओं का आसरा नही खोजतीं और वे उन लोगों की आलोचनाओं से हिचकती हैं जो दुर्भाग्य के विरुद्ध उनके संघर्ष को ध्यान से देखते रहते हैं। अन्धापन उनकी स्वतन्त्रता और शान पर एक आघात होता है और विशेषतः तब जब कि वे सदैव सक्रिय एवं उद्योगशील रही हों।

यदि अध्यापिका को बचपन में उन तरीकों की उचित शिक्षा मिली होती जो अंधकार के उपयुक्त होते हैं तो वह ऐसी विधियों को विकसित कर पाती जिनसे उसकी स्वतन्त्रता अधिक समय तक बनी रहती, परन्तु इस पर भी उसमें भग्न आशाओं की ऐसी कटुता बसी हुई थी जिसे उसके निकटतम सम्पर्क में रहनेवाले ही जानते थे। इस वस्तुस्थिति से अपरिचित लोग कभी-कभी अनजाने उसके प्रति निष्ठुरता का अपराध कर डालते थे। उसको पढ़कर सुनाने के लिए उत्सुक मित्रों तक के आसरे पर वह न रहना चाहती थी, यद्यपि बाद में उसकी यह हालत हो गई थी कि वह स्याही में छपी किताबों में जिन स्थलों को देखना चाहती थी उन्हें ढूंढ न पाती थी। वह शंकित रहती थी कि कहीं वह उन लोगों पर भार-स्वरूप न बन जाय और उनके लिए परेशानी का कारण न बन बैठे जो उसका ध्यान रखते थे। अपनी स्मृति में उस अन्धकार की कटु अनुभूति बनी होने के कारण, जिसमें वह कभी दिन बिता चुकी थी, उसका मस्तिष्क "प्रकाश के प्रति उग्र" बन गया था और वह उस प्रकाश से अपने निर्वासन की ओर पुनः लौटना सरलता से स्वीकार न कर पाती थी।

परन्तु हमेशा की तरह अध्यापिका इन दुश्चिन्ताओं को अपने दिमाग से ठेलकर बाहर कर देती और एक या दो दिन बाद फिर किसी कल्याण-कार्य या सुख के मार्ग की ओर तेजी से बढ़ने लगती। वह व्यग्रतापूर्वक कह उठती, "यदि मैंने जीवन की व्यर्थता के विषय में कुछ कह दिया हो तो इससे क्या, तुम जानती ही हो कि मैं कैसी गिरगिट हूँ। आओ, हम एक दूसरे के भार को वहन करें। हम अपने जीवन को वास्तविकता के अनुरूप बनायें। हम दानों को न गिनते हुए बोयें। हम किसी अन्य के लिए उपयोगी बनें। हममें

जो भी प्रज्ञाएँ हों उन्हें हम कल्याणकारी शक्ति मे परिवर्तित करे। तब हम परिस्थितियों से अपनी रक्षा करने की बात कम सोचेगे और अपने चारों ओर प्रसन्नता फैलाने की अधिक—और सम्भवत: मै अपने अनुभवों को ईश्वरीय बनाने मे तथा उस हर्ष-विषाद के तत्त्व को समझने में जिससे हमारे दिनों की चादर बुनी गई है, सफल हो सकूँगी।"

यह दिखलाने के लिए कि अध्यापिका सख्यभाव की आत्मा थी, भले ही यदा-कदा वह कितने ही विकृत उद्वेगो के प्रभाव में आ जाती रही हो, मै उसके उन उपदेशों को जो वह मुझे दिया करती थी, शब्दबद्ध करूँगी, "सख्य-भाव अत्यधिक कठोर निर्णय को रोक देता है। अपने आप पर छोड़ दिये जाने पर आदमी की बुद्धि निष्ठुर हो उठती है और वह अधिकांश मस्तिष्कों की मूर्खता पर बौखला उठता है। अत्यधिक सुसंस्कृत लोगों मे यदि कवित्वमय दृष्टि न हो तो उनका जीवन निष्क्रिय हो जाता है। जो लोग उद्धततापूर्वक सोचते है, उनके लिए सभी सामान्य बातें उकताहट की दलदल बन जाती है। परन्तु अच्छा सख्यभाव दृष्टि की अमित्रता को क्षीण कर देता है और सामान्य बुद्धि की कमियों की अनुचित आलोचना के लिए प्रेरित नही करता। सख्य-भाव घमंडी नहीं होता, अपितु मनुष्यों के झक्कीपन और अपूर्णताओं को सदय विनोद की दृष्टि से देखता है। यह लोक-व्यवहार निपुणता के समक्ष एक सज्जन साक्षी के रूप मे उपस्थित होता है, जिससे दूसरो को कष्ट उठाने की आवश्यकता नही रह जाती। सख्यभाव किसी बहुत धीरे बढ़नेवाले वृक्ष पर कोई मनोहर पुष्प या बहुमूल्य फल प्रदर्शित करता है, सामान्य कोटि की दिखाई देनेवाली वस्तुओं में भव्यता की दीप्ति प्रकट करता है और किसी खुरदरे पत्थर पर लिपटी स्फटिक मणि के समान प्रतीत होता है। सख्यभाव अरुचि को दबा देता है, जिससे लोगो मे छिपे गुण प्रकाश में आने के लिए उन्मुक्त हो जाते है। सधूम चर्म को वह नही बुझाता।"

इन नये विचारों मे अध्यापिका का वौदविल मे काम करते समय का आध्यात्मिक उत्कर्ष प्रकट होता है।

हमारे फारेस्ट हिल में हमारे लौट अ.ने पर अध्यापिका भाँति-भाँति के विलक्षण कार्यो मे उसी प्रकार व्यस्त रहने लगी जैसे वह हमारे भाषण के दिनों में या मंच पर काम करने के दिनों में रहती थी। इधर पौली घर की व्यवस्था करती थी, टेलीफोन और दरवाजे की घंटी का उत्तर देती थी और हमारा हिसाब-किताब रखती थी तो उधर अध्यापिका मेरे स्वर के अभ्यास का निरीक्षण करती थी। ओह, काश मै इस अभ्यास को घंटे पर घंटे लगा-

तार करती रहती। काश उसके ओठों को पढ़ते समय जब मैं उसकी नकल कर अपने शब्दों का उच्चारण करती, मेरी उँगलियाँ उस स्वर की परी को पकड़ पातीं जो अपना रहस्य कानों को सुनाती हैं। पृथ्वी की अन्य कोई भी शक्ति अध्यापिका की मेरी दो महान् बाधाओं—मेरे बोलने में नीरसता और स्वर के उतार-चढ़ाव का अभाव—को हटाने की इच्छा को पूर्ण न कर सकती थी। इस कार्य मे वह जितना धैर्य रखती थी इतना वह अन्य किसी भी काम मे नही रख पाती थी। वह मुझे कोई छोटी-सी कविता या गद्य-खंड पढ़कर सुनाती (उसके ओठों से अक्षर पकड़ने के काम मे मेरी बाँहें बहुत थक जाती) और तब मैं उसके उच्चारण के "कंपन" तथा स्वर के उतार-चढ़ाव को पकड़ने का प्रयत्न करती हुई इसको बार-बार दुहराती। जब मै अपने स्वर में हास्य या उत्सुकता भर पाती तो वह प्रसन्न होती, परन्तु स्वर का वह "कंपन" और उतार-चढ़ाव सदैव मुझसे दूर भाग जाते। यह समझाने के लिए कि वह मेरे स्वर मे किन गुणों को लाने के लिए प्रयत्न कर रही है, वह झरने की झल-झल ध्वनि, पक्षी की ऊँची कूक, या किसी वाद्य-यंत्र के स्वरो की अनेक प्रकार की उपमाओं का प्रयोग करती थी। कभी-कभी मुझे ऐसा लगता कि गोल, चिकने, मधुर शब्द मेरे गले मे अटके हैं और मै कल्पना करती कि मै इनके उच्चारण में सफल हो जाऊँगी; तब वह मुझे बताती कि मेरा स्वर मधुर है, परन्तु मेरे मुँह से शब्दों का स्पष्ट उच्चारण न हो पाता। वह मुझसे आग्रह करती कि मैं नित्य सुबह, दोपहर, शाम को छतवाले कमरे में जहाँ हम सोते थे, उच्चारण का अभ्यास करूँ। मैं भी हृदय से चाहती थी, परन्तु कर न पाती थी। रैन्थम के वे खाली घंटे, जिनमें मैं अपने आप से जोर जोर से पढ़ने का प्रयोग कर सकती थी, गुनगुना सकती थी, गाने का प्रयत्न कर सकती थी और विभिन्न वस्तुओं पर यह देखने के लिए हाथ रख सकती थी कि उन पर मेरे स्वर-कंपन की क्या प्रतिक्रिया होती है, बीत चुके थे। कदाचित मैं मनोराज्य में विचरण कर रही हूँ, परन्तु मुझे ऐसा लगता है कि यदि हम कुछ और अधिक समय तक शान्तिपूर्वक ठहरे रहते और भाषणों के कार्यक्रम को घटा देते तो मै सामान्य उच्चारण मे काफी आगे बढ़ गई होती। देश के एक छोर से दूसरे छोर तक भ्रमण करने के कार्य-क्रम ने हमारा सारा समय ले लिया और मंच पर आने से पहले मुझे जो जल्दी में अपने भाषणो का पूर्वाभ्यास करना पड़ता उससे मुझे ऐसे ध्यानपूर्वक और संभवतः रचनात्मक अभ्यास का अवसर न मिल पाता, जिससे मेरा उच्चारण अधिक श्रुतिसुखद और अधिक सुबोध हो गया होता।

जब हम फारेस्ट हिल में आ बसे तब तक सामान्यत: बोल सकने की मेरी असन्तुष्ट आकांक्षा के निराशापूर्ण प्रभाव ने और जब मैं मंच पर आती थी उस समय की मेरी बैचेनी ने मेरे उस उत्साह को समाप्त कर दिया था जिसको लेकर मैं अपनी बोलने की कठिनाई को दूर कर सकती थी। स्वाभाविक स्वर प्राप्त कर सकने का लोभनीय लक्ष्य अब मुझे अप्राप्य प्रतीत होने लगा। अध्यापिका के लिए मैं स्वयं को कमरे मे बन्द कर तब तक अभ्यास कर सकती थी जब तक थक न जाऊँ, परन्तु हमारी सारी शक्ति दूसरे आवश्यक कार्यों मे लग जाती थी। घर मे हमारा काम इस कारण दुगुना बढ़ गया था कि हम अन्धों, बहरों, युद्ध और शान्ति के प्रश्नों, हाल मे प्रकाशित पुस्तकों, समाजवाद तथा ऐसी ही अन्य बातों के विषय में अपने ज्ञान की दरारो को भरने के प्रयत्न में भी लगे रहते थे। इसके अतिरिक्त घर पर ऐसी हजारो चिट्ठियो का ढेर लगा हुआ था, जिनका उत्तर न दिया गया था। इनमे से अधिकांश पत्र सामान्य लिखावट मे या टाइप किये हुए थे। पौली इन सबसे न निपट सकती थी, क्योकि हमारे पास कोई नौकर न था। इनमे से अति आवश्यक पत्रों को मेरी प्रिय अध्यापिका, ऑखों के रुग्ण होने पर भी, उठा लेती थी और मेरा भार कम कर देती थी। पौली भी जब कभी घर के काम-काज से फुरसत पाती, किन्ही पत्रों के उत्तर में एक दो पंक्तियाँ लिख भेजती। इस प्रकार चिट्ठी-पत्रियों के मेरे भार को कम करने में बेकार ही घंटों व्यतीत हो जाते जब कि मेरे उच्चारण को सुधारने का कार्य, जिस पर सबसे पहले ध्यान दिया जाना चाहिए था, उपेक्षित रह जाता।

परन्तु अध्यापिका ने मुझे उन 'दुष्ट चुड़ैलों' के सम्बन्ध में, जिन्होंने मेरी श्रेष्ठतम सदिच्छाओं को विफल कर दिया था, दीर्घकाल तक परेशान न होने दिया। उसे याद आई कि कैसे एक बार मोटर मे कही पहाड़ों पर यात्रा करते हुए हम देवदारु के वृक्षों के नीचे सोये थे और तब हम रात्रि की सुगन्ध तथा सिर पर चमकते हुए तारों से कैसे आनन्दित हुए थे। उसने सन् १९२४ की गर्मियों मे न्यू इँगलैण्ड में एक नये प्रकार की आमोद-यात्रा की योजना बनाई; इस समय पौली छुट्टी लेकर स्कॉटलैण्ड चली गई थी और हैरी लैम्ब हमारे साथ गया। औटोमोबाइल में हम पुआल के गद्दों सहित एक नये प्रकार का तम्बू, एक स्टोव, एक आइसबाक्स और अपने दिल की रानी सुनहरे लाल रंग की ग्रेट डेन जाति की कुतिया सीजलिन्द को ले चले। मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि हम जब एक लम्बे अर्से की सूखी मौसम की गर्मी और बेचैनी से हरे-भरे वर्कशायर की ओर भाग चले तो अध्यापिका में जीवन के प्रति

एक नई रुचि जाग्रत हो गई। जब हम गोश्त, आलू और बादाम के हलवे का भोजन कर तम्बू में लेटे तो अध्यापिका मुझसे बोली "इस स्वच्छ वायु का, जिसे केवल ईश्वर के हाथ ही उँडेल सकते हैं, पान करना कितना अद्भुत है।" और फिर यहाँ

"उल्लू और चिपमंक गिलहरियाँ रात्रि के शीतल द्वारो पर मौन से करते हैं संलाप।"

सुबह जब हम तम्बू से बाहर हरे-भरे मैदान में बैठे थे, मेरे चारो ओर कुछ गायें घिर गईं। मैने उनकी मधुर साँसो को सूँघा और एक गाय ने तो मेरा मुँह ही चाट लिया। अध्यापिका के लिए इससे अधिक प्रसन्नता की बात और कोई न थी कि मै प्रकृति की सतानों के सुखकर प्रत्यक्ष संपर्क में आ रही हूँ। हमने समीप के एक शीतल निर्झर मे स्नान किया और इसकी द्रुतगामिनी लहरों से मेरे शरीर में जो सिहरन पैदा हुई उसमें उस सरल जीवन का स्पन्दन भरा हुआ था जिसे मै प्यार करती थी। इससे भी अधिक मंत्रमुग्ध हम तब हुए जब हैरी हमे गाडी में मेन में ले आया और एक दिन सुबह तड़के ही हम कैनीबी नदी के तीव्र वेग से बहते पानी मे घुस पड़े। हम इसमे तैर तो न सके अपितु किनारे की चट्टानों से चिपटे रहे जब कि लकड़ी के विशाल टुकड़े हमसे टकराकर आगे बहते रहे। उन उत्तेजनापूर्ण क्षणों में हमने उन खोजियों के साहस का कल्पना मे अनुभव किया जिन्होंने कैनीबी नदी की खोज की थी और तभी हम लकड़ी के उद्योग की विशालता का अनुभव कर सके। हमारे डेरा डालने की अगली जगह मूसहेड लेक थी, जहाँ लकड़हारों ने हमारा स्वागत अपने उन्मुक्त, हार्दिक ढंग से किया। जब हम नदी मे गोता लगाने के बाद धूप में बैठे थे, नई कटी हुई कुट्टी और जंगली गुलाबों की सुगन्ध हमारे पास तैर आई। मुझे इस बात की निराशा हुई कि हम किसी मूस (एक अमरीकी बर्फानी पशु) की झलक न पा सके। ऐसा ही अनुभव अध्यापिका ने भी किया। हमने मेन और कनाडा के मूस और कैरिबौ के विषय में बहुत कुछ सुना हुआ था। चीड़ और देवदारु के सघन वनों के बीच मे से गुजरते हुए, मुझे थोरो के किये हुए इस प्रदेश के अद्भुत वर्णन का स्मरण होने लगा और मैं दृष्टि के बिना भी वृक्षों के "खडे हुए अंधकार" का सचमुच अनुभव करने लगी।

इसके बाद हम सेंट लारेंस के किनारे-किनारे माट्रियल और क्यूबेक की ओर बढ़े। अध्यापिका और हैरी, जो हिज्जे कर लेता था, मुझे सड़क के किनारे स्थित विचित्र मन्दिरों और ईसू मसीह की मूर्तियों के बारे में बताते

रहते। जब वे मुझसे मकानो के विभिन्न रंगो का वर्णन करते तो मैं सोचने लगती कि वे "देखनेवाली वस्तुएँ" हैं। इस आमोद यात्रा में अध्यापिका के उल्लास में मुझे ऐसी शान्ति का अनुभव हुआ जिसे मै चाहती थी कि वह सदा बनी रहे। जब भी मै उसके मुख का स्पर्श करती, स्वयं मेरी प्रसन्नता पूर्ण हो जाती, क्योंकि अब उसे जीवन मधुर लगने लगा था। रोमाचक कष्टों और कमियों के होते हुए भी वह उन निरन्तर पीछे पड़ी रहनेवाली चिन्ताओं और अरुचिकर कार्यों से, जो उसके फारेस्ट हिल के जीवन के प्रमुख अंग थे, मुक्ति पाकर प्रसन्न थी। धरती, आकाश और जल की समस्त विशालता इस समय हमारी थी। इस समय हम इच्छानुसार बातें कर सकते थे, हँस सकते थे या चुप रह सकते थे। हम समाज के किसी भी प्रकार के सम्पर्क से दूर थे। हम जैसे चाहें वैसे कपडे पहन सकते थे और घंटों तक दिवास्वप्नों में विभोर रह सकते थे। मुझे कुछ देर के लिए इस विषादमय विचार से मुक्ति मिल गई (अपने जीवन मे उसने कभी यह बात प्रकट न की) कि कदाचित् उसका व्यक्तित्व मेरे व्यक्तित्व के अधीन है। विश्व के फैलाव, गहराई और उँचाई में तथा साथ ही प्रेम मे तादात्म्य का अनुभव करती हुई दो आत्माओं के बीच समानता की भावना से बढ़कर संतोषप्रद हमारे लिए और कोई बात न थी। यही कारण है कि इस यात्रा की सुन्दरता और शान्ति में हमने समान रूप से जिस आनन्द का अनुभव किया वह मेरे लिए अवर्णनीय रूप से बहुमूल्य बना हुआ है।

मौसम बहुत सुहावना था, परन्तु जब हम न्यू हैम्पशायर होकर लौट रहे थे, आकाश के चारों कोनों से हवाओं ने हमारे विरुद्ध षड्यन्त्र रच दिया। हम मुश्किल से अभी लेटे ही थे कि उन्होने हम पर आसुरी कोप के साथ आक्रमण कर दिया। तम्बू का दरवाजा हवा के जोर से खुल गया और हम अपने प्यारे प्राणों के त्राण के लिए कम्बलों से चिपट गये। तम्बू के खम्भे खड़खड़ाने लगे और बेचारी सीजलिन्द करुणाजनक स्वर में गुर्राने लगी। हमें भय लगने लगा कि सबेरा होते-होते यह हवाएँ हमें और हमारे तम्बू को उड़ाकर विनेपेसौ की झील में पटक देंगी। भयत्रस्त त्वरित गति से हमने शरीर पर कपड़े डाले, सीजलिन्द को और हर एक चीज को जल्दी-जल्दी अपनी कार में फेंका और हैरी हमें वहाँ से द्रुततम गति से ले चला। हवाएँ निर्दयतापूर्वक तब तक हमारा पीछा करती रही, तब तक हम नीचे मैसाच्युसेट में एक शान्त स्थान पर न पहुँच गये। यहाँ थोड़ा-सा विश्राम कर, हमने नाश्ता तैयार किया और अध्यापिका ने गोश्त, अंडों तथा मक्खन लगे टोस्टों से सीजलिन्द को

आश्वस्त किया। हम सारे दिन वही पड़े रहे और वह रात बिना किसी दुर्घटना के बीत गई। सोने से पहले मैंने अपनी उँगलियाँ तम्बू के नीचे डालीं और इनसे घास की शब्दहीन सुरसुराहट और उस स्तब्धता में रेंगते या उड़ते हुए कीड़ों के लघु स्वरों का अनुभव किया और तब मैंने उन घुमक्कड़ दिनो को, जिन्होंने मेरे हृदय-स्पन्दन की गति बढ़ा दी थी अपने उच्छ्वासों द्वारा स्नेह-पूरित, विदाई दी। अध्यापिका कहने लगी कि घर के नजदीक आने का उसे खेद नही है, परन्तु मुझे सदैव स्मरण रहेगा कि ये दिन उस आध्यात्मिक अग्नि और प्रकाश से, जो जीवन की अग्नि और प्रकाश को जन्म देती है, कितने पूर्ण थे।

यह आमोद-यात्रा हमारे आगे के कठिन परिश्रमवाले वर्षों के लिए इतनी अधिक कल्याणकारी भूमिका थी जितनी हमें प्राप्त हो सकती थी। अन्धों के लिए अमरीकन फाउन्डेशन की स्थापना सन् १९२१ में हुई थी—यह संस्था अन्धों के विषय मे उन सूचनाओं के प्रसार का कार्य करती थी जिनके लिए अन्धों के क्षेत्र में काम करनेवाले सभी सुपठित कार्यकर्ता दीर्घकाल से इच्छुक थे। अध्यापिका और मै तब वौदविल में ही थे जब फाउन्डेशन ने हमसे पहले-पहल बातचीत की। उस समय हमारे सामने अपने उन कार्यों को छोड़ने का प्रश्न ही न था जिनमें हम लगे हुए थे, परन्तु सन् १९२३ में हम न्यूयार्क के आस-पास इधर-उधर बैठकों में बोलने लगीं। व्यक्तिगत रूप से भाषण देने और वौदविल में कार्य करने से मुझे बहुत कुछ अनुभव प्राप्त हो गया था और इसके कारण मैं बाधितों के लिए काम करने के सर्वथा योग्य हो गई थी। परन्तु फिर भी अभी तक सब कुछ "लक्ष्य पर प्रकाश परन्तु मार्ग में अँधेरा" की स्थिति में था। मै स्वीकार करती हूँ कि मै इस नई प्रत्याशित स्थिति से तब हिचक रही थी और यही स्थिति अध्यापिका की भी थी। जब मै पहले-पहल मैसाच्युसेट की विधानसभा के सदस्यों के सामने युवक अन्धों को स्वावलम्बी बनाने के लिए उनके प्रशिक्षण पर जोर देते हुए बोली, उस समय हम दोनों उच्चाकांक्षी आदर्शों से भरी युवतियाँ थीं और मुझे पूर्ण विश्वास था कि इस राज्य के कार्य-समर्थ अन्धों पर शीघ्र ही ध्यान दिया जायगा और उन्हें विभिन्न व्यवसायों में कार्य करने के लिए सुयोग्य मान लिया जायगा। अध्यापिका को इस कार्य में प्रगति की शिथिलता का पूर्वाभास हो रहा था, क्योंकि अन्धों की समस्याओं के प्रति जनता को शिक्षित करने के लिए, जो कि उनके लिए सहायता प्राप्त करने का एक-मात्र उपाय है, कोई संघटित प्रयत्न नही हो रहा था। यह देखकर बहुत तरस आता था कि थोड़े से उच्चाकांक्षी अन्धे—इनकी

संख्या पहले से अधिक अवश्य हो गई थी, परन्तु अब भी वे थोड़े ही थे—बहुत थोड़े से व्यापारो और शिल्पों में असंतोषजनक मजदूरी पर काम कर रहे हैं और उन्हें नेत्र-युक्त कारीगरोवाले कारखानों में मुश्किल से ही प्रवेश मिल पाता है। अन्धों के लिए एक अधिक प्रकाशमान संसार का स्वप्न सदैव मेरे सम्मुख प्रज्वलित रहता था और मै एक अग्रगामी के रूप में इसका अनुगमन करती रही, परन्तु मुझे आशा न थी कि मै अन्धेपन की इस इतनी विस्तृत मरुभूमि को, जितनी कि मैने इसे तब से देखा है, "शून्य के बीच सृष्टि के एक चमकते हुए, स्निग्ध, प्रफुल्लित द्वीप" के रूप में परिवर्तित होते हुए देख सकने के लिए जीवित रहूँगी।

परन्तु यह फाउन्डेशन किन्हीं रूपों में हमारे लिए एक अभिनव आन्दोलन था। यह (फाउन्डेशन) हमारे लिए उन अनुभवो में से एक रहा है जो इतने ऊबड़-खाबड और हिचकोले देनेवाले होते है कि उनका सामना करने के लिए मनुष्य को अपने समस्त दार्शनिक ज्ञान, खिलाड़ीपन और सहन-शक्ति को लगा देना पड़ता है। जीवन की आकस्मिक, अपरिचित परिस्थितियाँ मनुष्य को हड़बड़ी में ऐसे संकटों मे डाल देती है जिनका सामना बिना किसी हिचक के करना पड़ता है और इसके लिए उसे तत्काल अपनी समस्त क्षमताओं को एकत्र करना पड़ता है, अपने विचारों को अभिनव रूप देना पडता है, दूसरों के साथ अपने सम्बन्धों को सुधारना पड़ता है और अपने रहन-सहन का ढंग बदलना पडता है। अध्यापिका के साथ जीवन के अन्त तक यही होता रहा और विशेषत: तब जब उसने फाउन्डेशन के कार्यो मे भाग लिया।

यदि अध्यापिका को अपना लक्ष्य चुनने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया जाता तो वह स्वयं को कभी भी अन्धों के कार्य तक सीमित न करती। उसने जो अपने समृद्ध मस्तिष्क और हृदय को मेरे प्रयत्नों के साथ सम्बद्ध कर दिया, यह तो केवल इसलिए कि इसमें उसको अंधों के लिए अपनी उपयोगिता की संभावनाएँ प्रतीत हुईं, और मै भी जो अन्धों के कार्य की ओर आकर्षित हुई वह इसलिए नही कि स्वयं मै भी अन्धी थी या इसलिए कि वाधितों के प्रति मेरे हृदय मे कोई विशेष स्नेह था, अपितु इसका कारण वह सामान्य मानवता का प्रेम था जो सभी अन्धों के और मेरे हृदय मे स्पन्दित होता है। अन्धों मे मानसिक चक्षु होते है और मुझमे भी ये है और उन्हें इस धरती पर अन्य मानव-प्राणियों के समान स्वयं अपनी शक्तियो द्वारा साधन खोजने तथा अपने जीवन को रहने के योग्य बनाने के लिए दूसरों की सहायता प्राप्त करने के लिए रखा गया है। मेरा निर्माण इस ढंग से हुआ है कि मै

अंग-हीनों या निर्धनो या पीड़ितो के लिए समान उत्साह से कार्य कर सकती थी।

फाउन्डेशन के अधीन कार्य करने के हमारे पहले वर्ष में अध्यापिका का व्यक्तित्व मेरे सामने एक नये रूप मे प्रकट हुआ। कर्मचारी-वर्ग के सदस्य प्रायः उससे परामर्श लेने थे और मैंने लक्ष्य किया कि वे जिस नीति को अपनाते उस पर अध्यापिका की टीकाओं, आलोचनाओं तथा उसके तीखे व्यंगों का स्पष्ट प्रभाव होता। इनमें मैसाच्युसेट से एक भव्य, कर्मठ कार्य-कर्त्ता था जिसके युवक अन्धों के प्रति प्रगतिशील विचार थे और जो अध्यापिका को नेत्र-हीनो की रात के मार्ग-दर्शक तारे के रूप में उसका उचित स्थान उत्साहपूर्वक देता था। उसका विश्वास था कि वस्तुत. अन्धों की समस्या तभी हल हो सकती है जब वे स्वयं अपने लिए जीवन को टटोले। अध्यापिका जानती थी कि अन्धों को आँखवालों के जीवन के विषय में यथासम्भव सभी बाते अपनी उस मन.शक्ति द्वारा जो उन्हे प्राप्त है, अर्थात् स्पर्श द्वारा, जाननी चाहिए, क्योकि "दृष्टि" शब्द का उनके लिए कोई अर्थ नही है। यदि यह कुछ अर्थ रखता है तो केवल उन्हीं अन्धों के लिए जिन्हे आँखों की ज्योति बुझने से पहले देखने को मिला हो। अध्यापिका अपनी छोटी शिष्या को स्पर्शनीय वस्तुओ के विषय मे मौखिक रूप से न बताती थी अपितु वह इन वस्तुओं को उसके हाथ में रख देती थी और तब इनके नाम दे देती थी—कुत्ता, बिल्ली, चूहा, कबूतर, किताब, घड़ी, टेलिस्कोप इत्यादि और वह मेरी उँगलियों को अपने चेहरे पर रख देती थी, जिस पर विविध भाव प्रकट होते रहते थे। इस प्रकार उसने उन सभी वस्तुओं से जिनको मै छू सकती थी, उनके गुण मेरे सामने प्रकट कराये।

अध्यापिका उन लोगों में से थी जिन्होंने दया को नेत्र-हीनों के मार्ग के सबसे बड़े रोड़े के रूप में पहचाना। दया से प्रेरित होकर लोगों ने अन्धो के लिए पाठशालाएँ खोली थी—परन्तु ये अनाथालय कही जाती थी न कि पाठशाला। यह प्रवृत्ति सच्ची सद्भावना से किये कार्य को बिलकुल प्रभाव-हीन बना देती थी। भाग्यहीनों पर बहाये गये आँसुओं में और मानव-प्राणियों का भाग्य से दबे होने की भावना में कविता भले ही हो, परन्तु ईश्वर नहीं चाहता कि हम इन ढंगों से उनकी आत्माओं को शरीर की निर्बलताओं से ऊपर उठाये। कोई भी व्यक्ति, जो बुरी तरह विक्षत हुआ हो, अपने में छिपे हुए शक्ति के स्रोतों को तब तक नहीं जान पाता जब तक उसके साथ एक सामान्य मानव-प्राणी का सा व्यवहार न किया जाये और उसे अपने जीवन

को स्वयं बनाने का प्रयत्न करने के लिये प्रोत्साहित न किया जाये। यही कारण था कि अन्धों के सुविज्ञ मित्र अध्यापिका से परामर्श और सुझाव लेते थे।

वह शिक्षा में शिक्षा के रूप में विश्वास करती थी, न कि किसी वर्ग के लिए दान के रूप में, यहाँ तक कि कमजोर दिमागवालों के लिए भी नही। जैसे कि मै अन्यत्र कह चुकी हूँ, उसे मेरी सीमाओ का कभी ख्याल न रहता था। उसकी दृष्टि में मै जीवन की एक छोटी सी अन्वेषिका थी और वह तब तक कभी मेरा दुलार या प्रशंसा न करती थी जब तक कि मेरे उद्योग उन अच्छे से अच्छे उद्योगों के समान न होते जिनमे सामान्य कोटि के बालक समर्थ होते है। उसने मेरे लिए खोज करने के साधन प्रस्तुत कर दिये थे और यदि मै कभी कपड़ो की टोकरी मे लुढ़क पड़ती या अपना सिर टकरा लेती या ब्लैकबेरी अथवा गुलाब चुनते हुए हाथों मे खरोच लगा लेती तो वह अनुचित रूप से व्यग्र न होती थी। वह जानती थी कि मै स्वयं ही प्रकृति के विरोधी तत्त्वों से अपनी रक्षा करना सीख लूँगी और यहाँ तक कि उनका खिलवाड़ भी बना सकूँगी। उन सभी लगनवाले, विचारशील अन्धो ने जिन्हे प्रयोग करने का अवसर दिया गया, आत्म-निर्भरता के इस सिद्धान्त को कार्यरूप मे सिद्ध किया है और दिखा दिया है कि जीवन के किन्ही पूर्णतम संतोषो को प्राप्त करना कितना हितकर होता है। इसके उदाहरण अनेक है। इनमें से कुछ तो बड़े वीरतापूर्ण है और अब तो ऐसे उदाहरण संसार में सर्वत्र बढ़ते जा रहे है, परन्तु मै यहाँ अध्यापिका के विषय मे लिख रही हूँ, और मेरे लिए यह एक विशेष आनन्द की बात है, क्योंकि उसके जटिल व्यक्तित्व के कुछ पक्ष जिस रूप मे मेरे सामने प्रकट हुए, उन्हे चित्रित करने के लिए मुझे पहली बार स्वतन्त्रता मिली है। उसके जीवन के विषय में मेरी लिखी प्रथम पांडुलिपि के जल जाने से मुझे बहुत समय तक ऐसा प्रतीत होता रहा जैसे कि मेरी शक्तियाँ अपूर्णीय रूप से सुखा दी गई हों, परन्तु एक ऐसा दिन आया जब मैने अनुभव किया कि जिस पुस्तक का मै दु:ख मना रही हूँ वह वैसी नही थी जैसी मै उसके बारे मे लिखना चाहती थी। मैने वह पांडुलिपि उसके तानाशाही निरीक्षण मे प्रारम्भ की थी। वह मुझे अपनी परीक्षाओं तथा रोगों का वर्णन करने में कदाचित् ही खुली छुट्टी देती थी और वह मुझे यह तो कभी बताने ही न देती थी कि उसके प्रति बार-बार की उपेक्षाओं ने मेरा प्रकाश एवं सौन्दर्य की निधियों की ओर मार्ग-दर्शन किया था। उसके प्रति मेरा स्नेह बदला नही है, परन्तु इन पंक्तियों को लिखते हुए मै हम दोनो की पृथक् आत्माओं, मस्तिष्कों, हृदयों तथा शक्तियो के विषय

में कहने मे स्वतन्त्र हूँ। मै उसको, जिसने मुझमें मानवता उत्पन्न करने के लिए अपनी मानवता प्रदान की, धरती पर अपने लक्ष्य को पूर्ण करती हुई तथा परलोक में जीवन के सुखद मार्ग पर चलती हुई, जहाँ से वह मेरे संकट के क्षणों मे मेरे पास स्वीकृति की मुस्कान या चेतावनी का संकेत भेजती रहती है, चित्रित करती हूँ।

सन् १९२३ में जब अध्यापिका तथा मैंने वह कार्य प्रारम्भ किया जिसको मै आज तक चलाती आ रही हूँ, तब हमारे सामने जो स्थिति थी वह अन्धो के प्रति सद्भावनाओं की अव्यवस्थित स्थिति थी। यद्यपि यह सर्वविदित है कि दृष्टियुक्त लोगों की शिक्षा मे लिखने तथा पढने की प्रणालियो मे एकरूपता होना नितान्त आवश्यक है, अन्धो के लिए उस समय उभरे टाइप की पाँच भिन्न-भिन्न प्रणालियाँ प्रचलित थी और प्रत्येक प्रणाली के पक्षपाती लोग अपनी प्रणाली को ही मुक्ति का एकमात्र उपाय बताते हुए इसके लिए भयंकर उग्रतापूर्वक लड़ते थे। अध्यापिका और मै इन विवादो को सुनते-सुनते तंग आ गये और हमने इन झगड़नेवालो से आपस में सुलह कर लेने और सामान्यतः सभी अन्धो के लिए कार्य चला सकने के लिए एक आदर्श प्रणाली की रूपरेखा तैयार करने के लिए असफल आग्रह किये। दलबन्दी की भावना इतनी उग्र हो उठी कि हम इस विषय को आम बैठक मे न रख सके।

सन् १९१५ में जब तक वह समिति नही बनी थी जो आगे चलकर 'राष्ट्रीय अन्धता-निरोधक समाज' के नाम से अभिहित हुई तब तक, यदि हम अन्धो के लिए अमरीकी मुद्रणगृह (अमरीकन प्रिंटिंग हाउस फार दि ब्लाइण्ड) को राष्ट्रीय संस्था न समझें तो, संयुक्तराज्य अमरीका मे समस्त अन्धो के लिए कोई संघटन न था। डा० हैनरी बेस्ट की "अन्धे, उनकी दशा और उनके लिए किया गया कार्य" (दि ब्लाइण्ड, देयर कंडीशन एण्ड दी वर्क बिइंग डन फार देम) ही एकमात्र वस्तुतः सूचनाप्रद पुस्तक थी जिसका मै अपने लेख लिखने में उपयोग करती थी और अध्यापिका मेरे लिए इसके किसी अंश को कैसे खोज पाती थीं, इसका मैं इसके सिवाय और कोई अनुमान नही लगा पाती कि अपने विस्तृत ज्ञान, स्वत. स्फुरित होनेवाली समझ और किसी पुस्तक के सार को समझने की अपनी विलक्षण योग्यता के कारण उसे पुस्तक को प्रारम्भ से अन्त तक न पढ़ना पड़ता था।

उस समय अन्धो के लिए कुछ निजी संस्थाएँ अवश्य थीं जैसे न्यूयार्क नगर में मिसेज रूफस ग्रेव्स मैथेस, जिसका मुझे पहले-पहल कुमारी विनिफ्रेड हाल्ट के रूप में परिचय हुआ था, के अधीन "लाइट हाउस फार दि ब्लाइण्ड"

(अन्धों के लिए प्रकाश-स्तम्भ), परन्तु सामान्यतः अन्धों के लिए अमरीकी कारखाने और संस्थाएँ बहुत थोड़ी और छितरी हुई थीं और इनके लिए जो पाठशालाएँ थीं वे अधिकांशतः अपनी विधियों को अपने तक ही रखती थी। किसी स्थान के इने-गिने कार्यकर्त्ताओं को ही यह सूचना मिल पाती थी कि दूसरे लोग क्या कर रहे हैं। परिणामतः इस प्रकार के असघटित प्रयत्नों में अत्यधिक धन, समय और सद्भावनाओं का अपव्यय होता था। किन्ही राज्यों ने नवजात शिशुओ तथा बड़े बच्चों की आँखों की रक्षा के लिए कानून बनाकर कार्यान्वित कर दिये थे, परन्तु सामूहिक रूप से अन्धों को अपने संघर्ष में अनेक निराशाओं का सामना करना पड़ रहा था और यह स्वयं अन्धों की ही हार्दिक पुकार का फल था कि अन्धों के लिए फाउन्डेशन की स्थापना हुई। यदि मेरा मानवीय सहयोग एवं समझदारी के निश्चित, यद्यपि क्रमिक-विकास मे गहरा विश्वास न होता तो मुझे आश्चर्य हुआ होता कि कैसे प्रथम विश्व-युद्ध के बाद के उन भयंकर दिनों में इस संस्था की स्थापना हो सकी। अध्यापिका ने फाउन्डेशन का स्वागत उन महान् घटनाओ के प्रतीक के रूप में किया जो अब भी अन्धों का भाग्य बदल सकती थी और उनकी उपयोगिता को आँखों-वाले के बराबर बना सकती थी। उसका विचार यह था, जैसे रेडियम उचित संस्कार पाने पर अन्धकार मे सहज रूप से प्रकाशमान बन जाता है, इसी प्रकार वाधितों की सेवा का तत्त्वज्ञान वाधितों की क्षमताओं को इस प्रकार प्रकाश से भर देता है कि वे प्रत्यक्ष की जा सके और यह इसलिए नहीं कि वे वाधित है, अपितु इसलिए कि वे भी मानव-प्राणी हैं जिनके पास शिक्षित किये जाने के लिए मस्तिष्क है और प्रशिक्षण के लिए शक्तियाँ हैं जिनसे निपुण कार्य सम्पन्न हो सकते हैं और जिनको लेकर वे उद्देश्यपूर्ण, सुखमय जीवन बिता सकते है। अपने अधिक अच्छे रूप को प्राप्त कर लेने पर वे "वाधित प्राणियों" के स्तर से ऊँचे उठ सकते है और अपने उल्लासरहित पुरुषत्व या स्त्रीत्व को ईश्वर की संतानों की भव्यता एवं गौरव में बदल सकते है।

एक अर्थ में तो अध्यापिका के और मेरे काम की पृष्ठभूमि मे युग-युग के उद्योग हैं, उसी तरह जैसे कि इँगलैड की पहाड़ियाँ लाखो छोटे-छोटे जन्तुओ द्वारा छोड़े हुए घोंघों से बनी है, परन्तु दूसरे अर्थ में अध्यापिका अन्धो और बहरों के लिए सभ्यता की अग्रदूत थी और मुझे भविष्य की लम्बी पगडंडी पर चलने में उत्साह प्राप्त करने के लिए उसकी मूर्ति को सदैव अपने सामने रखना चाहिए। यह उस आदर्श की ओर बढ़ने की विधि है जो उसने मुझमें भर दिया था—अपूर्ण शरीरों में बसी पूर्ण आत्मा की उपयोगिता,

सृजन के ग्रन्थ में उनका औचित्य और साथ ही ईश्वर को अत्यधिक स्वीकार्य भक्ति।

फाउन्डेशन में सम्मिलित होना हम दोनों के लिए एक नये संसार में प्रवेश करने के समान था। यह सत्य है कि व्यक्तिगत रूप से हम इन कामों को करने के अभ्यस्त थे—पत्रों का उत्तर देना कि युवक अन्धों को प्रशिक्षण तथा स्वावलम्बी बनने के लिए काम कहाँ मिल सकता है, नेत्र-हीन बच्चों के माता-पिताओं को सुझाव देना कि इन बच्चों की आवश्यकताओं की पूर्ति के सबसे अच्छे ढंग क्या हैं, अन्धेपन की रोकथाम के लिए आन्दोलन करना और मै कालेजों में शिक्षा के लिए संघर्ष करते हुए छात्रों को उत्साहवर्धक सन्देश भी भेज सकती थी, उन्हे उभरे टाइप मे छपी वे पुस्तकें उधार दे सकती थी जिनका मैंने रैडक्लिफ मे उपयोग किया था और उन्हे उन पुस्तकालयों के नाम बता सकती थी जहाँ से वे और अधिक पुस्तकें प्राप्त कर सकते थे। परन्तु जब अध्यापिका ने और मैंने फाउन्डेशन को, जो फूट के बीच धीरे-धीरे एकता पैदा कर रहा था, अपनी सेवाएँ अर्पित कर दीं तब परिस्थिति सर्वथा भिन्न हो गई। पुनः हम इस विशाल महाद्वीप मे ऊपर-नीचे यात्राएँ करने लगे। हम जिन नगरो मे जाते वहाँ एक या दो दिन ठहरते और वहाँ बैठकें करते जिनमे जनता को वे उद्देश्य समझाये जाते जिन पर फाउन्डेशन जोर देना चाहता था। इन बैठकों में उस नगर या कस्बे का पादरी इस कार्य को आशीर्वाद देता, एक-दो नागरिक अमरीका के अन्धों के कल्याण-कार्य की अपरिहार्य आवश्यकता पर जोर देते हुए श्रोता-वर्ग से इस कार्य के प्रति उदार बनने का आग्रह करते, फाउन्डेशन का कोई कार्यकर्त्ता अन्धों के लिए राष्ट्रीय कार्य-क्रम की रूप-रेखा पर प्रकाश डालता और मैं जनता से प्रार्थना करती कि वह अपने को किसी दृष्टिहीन के स्थान पर रखकर सोचे कि दृष्टिहीन होना कैसा होता है और कार्यक्षम अन्धों के प्रशिक्षण तथा रोजगार की व्यवस्था के लिए यथासम्भव अनुदान दे। अनुदान एकत्र करते समय एक अन्धा संगीतकार, जो हमारे दल के साथ चलता था, कोई वाद्ययन्त्र बजाता रहता था। प्रायः सभी जगह जनता जिस सहज उत्साह के मेरी प्रार्थना का उत्तर देती थी, उससे मैं द्रवित हो उठती। पत्र और पत्रिकाएँ, जिनमें से कुछ ने तो मेरे सन्देश को सुबोध रूप में और दया के विनाशकारी तत्त्व को घटाते हुए जनता तक पहुँचाया, सभी क्षेत्रों के प्रभावशाली पुरुष और स्त्रियाँ, वे दानी जिन्होंने मेरे लिखने पर बड़ी-बड़ी रकमे दान दी और यहाँ तक कि बच्चे भी जो अपने आपको अपने छोटे-छोटे आनन्द के साधनो से वंचित कर अपनी जेब के पैसे अन्धों के लिए

दे डालते—ये सब मेरी प्रार्थना का हार्दिक स्वागत करते । वे वर्ष जो हमने इस संघटन की अनुदान निधि को अधिकांशतः उन लोगों की छोटी-छोटी रकमो से एकत्र करने में बिताये जिनके स्नेहपूर्ण हृदय-स्पंदन किसी राष्ट्र की सच्ची सम्पत्ति होते है, अविस्मरणीय थे।

साथ ही अध्यापिका और मै समृद्धिशाली लोगों के द्वारों पर भिखारियो के रूप में खड़े होने मे यथार्थ लज्जा का अनुभव करती थीं, जब कि हम अन्धो को भिखारीपन से उठाने मे यथाशक्ति परिश्रम कर रही थीं। अध्यापिका के हृदय मे सदैव क्रोध का एक ज्वालामुखी धधकता रहता था क्योंकि वैसे तो लोग अन्धों के कार्य की बहुत प्रशंसा करते थे और बड़े-बड़े शब्दों में अपनी परोपकारिता का ढोल पीटते थे, परन्तु वस्तु-स्थिति यह थी कि अब भी अन्धे उसी नीची निगाह से देखे जाते थे जैसी निगाह से वे युग-युग से देखे जाते आ रहे थे। मेरा कहने का यह अर्थ नही कि इस देश में अन्धों को जान-बूझकर करुणाजनक तथा अपमानपूर्ण स्थितियो मे डाल दिया गया था, परन्तु लोगो को उन्हे दान का पात्र समझने की जो आदत पड़ गई थी उसे तोड़ना अविश्वसनीय रूप से कठिन था। अत्यधिक प्रमाणों से लैस होने पर भी फाउन्डेशन के लिए यह असम्भव हो रहा था कि वह मालिकों को अच्छे प्रशिक्षित तथा दृष्टियुक्त लोगों के समकक्ष बनने के योग्य अन्धों तक को काम देने के लिए तैयार कर ले। शिकागो जैसे स्थानों पर प्रतिभाशाली अन्धे संगीतकारो को काम मिलना इसलिए कठिन हो रहा था क्योंकि लोग सोचते थे कि उनका संगीत सुनने के लिए जो लोग आयेंगे वे उनके प्रति करुणा से इतने द्रवित हो जायेंगे कि उनके संगीत का आनन्द न ले सकेंगे। हम उस अज्ञान तथा उन पूर्वाग्रहों को हटाने के दीर्घकालीन संघर्ष को चलाते रहे जो अमरीका के अन्धों को घेरे हुए थे और जिनके कारण आज भी संसार के अधिकतर भाग के अन्धे जीवन की अच्छाइयों से वंचित रह जाते है।

ऐसे भी भलाई के वीर सैनिक थे जो उन संघर्ष के वर्षो मे हमारे साथ रहे। परन्तु अध्यापिका जिस आश्चर्यजनक शक्ति के साथ उस युद्ध में कूद पड़ी, जिसकी विजय के लाभ मुझे प्राप्त होने थे, वह अद्वितीय थी। उसे जो शक्ति आगे बढ़ने की प्रेरणा दे रही थी, उस शक्ति को रहस्यमयी माने बिना मै न रह पाती और मै उससे पूछ बैठती, "तुम मेरे लिए इस या उस योजना का आग्रह क्यों कर रही हो, जब कि तुम्हें वस्तुतः अन्धों की समस्याओं में सर्वोपरि रुचि नहीं है?"

वह व्यग्रतापूर्वक उत्तर देती, "तुम तो हमेशा कल्पनाएँ करती रहती हो। आओ, तुम्हारे उच्चारण के अभ्यास पर जुट जायें।"

परन्तु बाद की घटनाओं पर विचार कर मैं समझी कि अन्धापन, बहरापन, पागलपन तथा मानव के अधिकांश रोगों को जन्म देनेवाली निर्धनता उस बन्दूक का घोड़ा थी जिसे वह मेरे मार्ग में पड़नेवाले शत्रुओं पर दागती थी। जैसा कि मैंने एक विश्वसनीय सहयोगी कार्यकर्ता को लिखा था, "बहिन ऐन यह देखने के लिए कि सहायता के लिए घुड़सवार आ रहे हैं या नहीं, बुर्ज पर चढ़ जाती है और उदास चेहरा लेकर यह कहकर उतर आती है कि अभी तो उनके आने का कोई लक्षण दिखाई नहीं देता।" परन्तु सदैव की भाँति वह एक ऐसी प्रज्वलित गुल्म थी जिसे कैसी भी हवाएँ बुझा न सकती थी। हमें कैलीफोर्नियां में जब कभी कोई अवकाश का दिन मिलता, ऐसे दिनों को वह बहुत चाहती थी—वह हम सबको मोटर में मॉटेरी या डेल मौंट अथवा सान्ता बारबैरा की ओर एक मनोमुग्धकारिणी आमोद-यात्रा के लिए ले चलती और हम पहाड़ों के बीच अथवा समुद्र के किनारे किसी मनमोहक सौन्दर्यपूर्ण स्थान पर आमोद-प्रमोद मनाते।

वह कह उठती, "मैं जो यहाँ हमेशा नहीं रहती उसका एकमात्र कारण यह है कि यह समस्त सौन्दर्य मुझे इतना मंत्रमुग्ध कर देगा कि मैं सब कुछ भूल जाऊँगी और तब मुझसे कुछ भी काम न हो सकेगा।"

परन्तु बहुत समीप से उसे ध्यानपूर्वक देखने के कारण मैं जानती थी कि वह वेदना सहन कर रही थी। उसकी आँखें प्रायः काम करने से जवाब दे देती थीं और प्रायः उसे कंठनाल पर ठंड के भीषण आक्रमण का शिकार होना पड़ता था। इसके अतिरिक्त यदा-कदा वह उस प्राण-शक्ति को भी खो बैठती थी, जिसके द्वारा उसने मेरी तरह मधुरता की लहरों में गोते लगाये थे।

अध्यापिका की एक अन्य असाधारण बात यह थी कि मेरे भविष्य के सम्बन्ध मे वह बहुत विचारशील थी। इस आशंका से कि वह मेरे साथ अधिक लम्बे समय तक न रह सकेगी, उसने पौली को अपना स्थान ग्रहण करने के योग्य बनने में सहायता दी। पौली हर रात को पर्दे के पीछे से सुनती रहती और अध्यापिका की कथा को अन्य पुरुष एकवचन में कहने का अभ्यास करती रहती। किस प्रकार के प्रश्न पूछने चाहिए और कैसे-कैसे प्रश्न उससे पूछे जा सकते हैं, इसका उसे अच्छा ज्ञान हो गया था। कभी-कभी मैं उसे ऐसे नये प्रश्न सुझाती जिनके उत्तर में मैं नये विचार प्रस्तुत कर सकती थी। मैं यह कभी

कल्पना न कर पाती थी कि कोई दूसरा अध्यापिका का स्थान वस्तुत. ग्रहण करने में समर्थ हो सकता है, परन्तु पौली की गम्भीर सत्यपरायणता से अध्यापिका को विश्वास हो गया था कि उसके और मेरे प्रयत्नों को मिलानेवाला सहानुभूति का स्निग्ध बन्धन कभी न टूटेगा। इस प्रकार अध्यापिका की बार-बार की रुग्णता के अवसरों पर पौली उसको उसके कार्यभार से मुक्त करने में समर्थ हो जाती और श्रोतागण हमारा बड़े स्नेह से स्वागत करते।

१४

सन् १९२७ में, जब कि अध्यापिका ने सार्वजनिक सभाओं में भाग न लेने का नियम ही बना लिया था, उसने मुझसे कहा, "तुम क्यों नहीं अपने काम से एक वर्ष की छुट्टी ले लेती और अपनी जीवन-कथा को आधुनिकतम (अप-टू-डेट) बना देतीं, जिसके लिए डबल डे-प्रकाशन-गृह तुमसे कभी से आग्रह करता आ रहा है?"

मै कह उठी, "नहीं, इसकी अपेक्षा मैं तुम्हारी जीवनी लिखना चाहूँगी। मै बचपन से ही तुम्हारे जीवन के विषय में नोट लेती रही हूँ और तुम्हारी जीवनी न लिख पाने पर मैं अत्यधिक निराश हो जाऊँगी।"

"ओह, हैलेन, किसी स्मारक को ऐसी दुखभरी दृष्टि से न देखो। तुम अपने विषय में जो कुछ लिखती हो उसी में मेरे विषय में लिखना भी हो जाता है।"

एक आन्तरिक प्रेरणा से प्रेरित होकर मैने उत्तर दिया, "यह बात एक ही अर्थ में सत्य है कि तुम मेरे जीवन की जीवन हो और इसके लिए मेरी कृतज्ञता का कोई अन्त नहीं है, परंतु तुम और मै दो भिन्न व्यक्तित्व हैं और तुम्हारे निजी व्यक्तित्व के अधिकार का अपने व्यक्तित्व के लिए बलिदान कर देना मेरे लिए प्रत्येक व्यक्ति के अधिकारों के प्रति अपनी श्रद्धा का अतिक्रमण करना होगा।" उसने उत्तर नहीं दिया और कुछ समय तक हम तर्क-वितर्क करते रहे, कोई निश्चय न कर सके और तब हमने मेरे बाद की जीवन-कथा के विषय को यों ही रहने दिया।

तब मुझसे न्यू चर्च के एक मंत्री ने आग्रह किया कि मै स्वेडनबर्ग के विषय में और उसके उपदेशों का मेरी दृष्टि में क्या महत्त्व है, इस विषय पर लिखूँ। यह मुझे उस काम से, जिससे मैं डरती थी, भाग निकलने का और प्रेम की वेदी पर श्रद्धा के एक ऐसे सन्देश को, जो शक्ति और आनन्द का स्रोत था, कर्म का सिद्धान्त था और जिसने मुझे भौतिक परिस्थितियों से अपनी आंशिक स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में आश्वस्त कर दिया था, चढ़ाने का अवसर मिल रहा

था। प्रसन्नतापूर्वक मुझे एक पद्य याद आया जो अध्यापिका ने मुझे अपनी इच्छा के अनुसार किसी मत मे विश्वास करने के लिए स्वतन्त्र होने का सुझाव देते हुए सुनाया था।

...ओह आत्मा, जैसे कोई दौड़नेवाला तेज दौड़ता है, वायु से उद्वेजित अपराह्न मे
जो तुझे सताये उनसे तू भी भार-मुक्त हो....
भव्यता से उठ
और तेजी से चल, हवा को अपने चेहरे पर झेलकर।

आनन्दातिरेक की उस स्थिति में मैंने निर्भीक, सादर, परन्तु साथ ही सूर्य, मेघों और समुद्र के समान, जिनकी स्वच्छन्दता को अध्यापिका ने मेरी साँसों में बसा दिया था, निर्बन्ध भाव से स्वेडेनबर्ग के उपदेशों को ग्रहण किया था और उसकी बाइबिल की व्याख्याओं का पान किया था। मुझे इसमें अध्यापिका से सहायता की आशा न थी, क्योकि उसका धर्म में विश्वास न था और जब वह अपने आपको मेरे स्थान में रखती और कल्पना करती कि मेरा धर्म-मत कैसा होगा और मेरे हाथ मे स्वेडेन के इस तत्त्वज्ञानी तथा न्यू चर्च, जिसका संस्थापक कहलाना वह नहीं चाहता था, से सम्बन्धित लेखों के हिज्जे करती तो मै रोने को हो जाती। उसने मेरे लिए यह भी पढ़ा था कि स्वेडेनबर्ग के लेखों से एलिजबैथ ब्राउनिग, विलियम डीन होवैल्स तथा विलियम और हैनरी जेम्स का पिता बड़ा जेम्स कैसे प्रभावित हुए थे। मै इमर्सन की पुस्तक "रैप्रेज़ैण्टेटिव मेन" (प्रतिनिधि-व्यक्ति) को जिसमें स्वेडेनबर्ग को भी सम्मिलित किया गया था, ब्रेल में पढ़ चुकी थी।

एक दिन मैंने उसको विलियम जेम्स की पुस्तक "टॉक्स टु टीचर्स" (अध्यापकों से बातचीत) को दुबारा पढ़ते पाया, इस पुस्तक का आनन्द वह जान मेसी के भावपूर्ण स्वर में ले चुकी थी। यद्यपि उसकी मन्द होती हुई दृष्टि का ध्यान कर मेरे हृदय पर गहरी चोट लगी, परन्तु उस पुस्तक के साथ उसके स्नेहपूर्ण सम्बन्ध की मैंने सराहना की और जैसा मै अन्य अवसरों पर करती थी, इस समय मैंने उससे दलील न की। जब मै अपनी पुस्तक "माइ रिलिजन" (मेरा धर्म) समाप्त कर चुकी तो उसने मुझे उकसाते हुए कहा, "तुम इस बात पर जोर देती रही हो कि हम दो भिन्न व्यक्तित्व हैं। मैंने अपना व्यक्तित्व तुम्हारे लिए अलग रख दिया है। अब क्या तुम यह पसन्द न करोगी कि हम अपनी अच्छाइयों को एक दूसरे के साथ बदल ले; आओ, अपने आपको मेरी जगह पर रखो और पिछले बीस वर्षों में हमने जो काम साथ-साथ किये हैं उनका विवरण तैयार कर दो—ऐसा विवरण नहीं जो केवल हमारा व्यक्तिगत हो, अपितु

ऐसा विवरण जिसमें हम अन्धों की मुक्ति के साधन के रूप में हों।" इस प्रकार उसने मेरे अनिच्छित कर्त्तव्य के भय को प्रेम के कार्य मे परिणत कर दिया।

परन्तु जैसे-जैसे मै "मिडस्ट्रीम" (प्रवाह के बीच) की समाप्ति पर पहुँचने लगी, मुझे अध्यापिका पहले की अपेक्षा कम तर्क-संगत प्रतीत होने लगी। उसने मुझे "माई गार्जियन ऐंजेल" (मेरी अभिभावक स्वर्गदूत) शीर्षक अध्याय में बहुत अस्वाभाविक नियन्त्रण से काम लेने के लिए बाध्य कर दिया। उसने अपने साधारण परिवार मे जन्म या अनाथालय अथवा अपने कष्टों और निराशाओं के विषय मे मुझे कोई संकेत न करने दिया। वस्तुत: मैंने ऐसे अपमान का अनुभव किया जैसे कि मै स्वयं ईश्वर से झूठ बोल रही हूँ। इस घृणा उत्पन्न करनेवाले अनुभव के बाद मैंने अध्यापिका से कभी "मिडस्ट्रीम" की चर्चा न की, क्योंकि मै अध्यापिका से प्रेम करती थी, न कि उसमें अपने आपको।

मै उन असंख्य कार्यो से परेशान न हुई जो मुझ पर १९२७ से १९३० के बीच लदे रहे—साहित्यिक कार्य, चिट्ठी-पत्रियों का लड़खड़ा देनेवाला बोझ, अपने घर के अन्दर और आस-पास के काम जिनमें मुझे टाइपराइटर पर निरन्तर शब्द खटखटाने से निश्चित आराम मिलता था, और अध्यापिका को जोर से पढ़कर सुनाने का आनन्ददायक कार्य। इस समय मुझे जो दुख सता रहा था वह था पूर्णता की ओर बढते हुए अध्यापिका के अन्धेपन का ज्ञान। वह नंगी आँखों से या साधारण चश्मों से भी न पढ पाती थी। उसकी देख-रेख न्यूयार्क के डा० कौनरेड ई० बैरेन्स बडी लगन से कर रहे थे और वे प्रायः शाम को उसे देखने आया करते थे। उन्होंने उसकी आँखों में बार-बार दवाई डालने और दुहरे लैन्सवाले टैलिस्कोपिक चश्मे लगाने की व्यवस्था की। ये चश्मे उसके चेहरे पर बहुत भारी पड़ते थे और इसलिए तथा तीव्र वेदना के कारण उसे बहुत थोड़े समय तक पढ़ सकने के बाद रुक जाना पड़ता था। उसके सामने यदि कोई सफेद मेजपोश बिछा होता तो उससे भी उसको तीव्र वेदना होती थी और मोमबत्तियाँ और आवरण-रहित लैम्प तो उसकी आँखों को छेद डालते थे। मेरे हार्दिक आग्रह पर उसने तब अपना पढ़ना बन्द कर दिया था जब पौली अपने परिवार से मिलने स्काटलैण्ड गई हुई थी। वह जैसे-तैसे हमारा भोजन तैयार कर पाती, स्टोब की तरफ वह यथासंभव न देखने का प्रयत्न करती, रोटी के सिकने का अनुभव भी स्पर्श से करती और काफी उबल गई या नही, यह जानने के लिए वह खौलने की आवाज पर ध्यान देती। जब नाश्ता तैयार हो जाता, प्यारी सीजलिन्द हमारे बीच बैठ जाती और अपना हिस्सा पाने के लिए वह अपनी मखमली नाक हमारे हाथों पर रखती। भोजन में

अध्यापिका का आनन्द तब तक अधूरा ही रहता था जब तक वहाँ कोई कुत्ता भोजन की कोई वस्तु चुराने या उसमे से मॉगने के लिए न हो और इस सम्बन्ध में सीजलिन्द से बढकर साथी मिलना कठिन था। यह कुतिया हमारे साथ तब से थी जब यह बच्ची ही थी और अध्यापिका ने उसका पालन उसी स्नेह से किया था जैसे कि बाइबिल के निर्धन आदमी ने अपने मेमने का। सीजलिन्द उसके भाव-परिवर्तन को आदमी की सी कुशलता से पढ़ लेती थी। जब कभी कोई ऐसा आदमी हमारे घर चला आता जिससे अध्यापिका उकता जाती हो, तो सीजलिन्द अध्यापिका की उकताहट को भॉप जाती थी और उस आगन्तुक के पास बैठकर उसे धकेलने की कोशिश करती थी। वह शटलैण्ड-टट्टू जितनी बड़ी थी और मेरी उँगलियो मे जो एक प्रियतम स्मृति-चित्र बना हुआ है वह उस अपराह्न का है जब मैने उसे अध्यापिका के कन्धो पर पंजे रखकर उसके मुँह को चाटते हुए और अपने कोमल कान को उसकी ऑखों पर फिराते हुए, मानो कि कह रही हो कि मै तुम्हारी ऑखो की वेदना को जानती हूँ, खड़े हुए पाया। स्वय अपने स्नेह के साथ-साथ मुझे एलिजबैथ बारेट ब्राउनिग की "फ्लश" शीर्षक कविता की प्रत्येक पक्ति को जीवित सत्य के रूप में अनुभव करने का भान हुआ। परन्तु खेद है कि यह देवदूत सी सीजलिन्द कभी-कभी चोरी भी कर लेती थी। एक दिन रसोई की मेज पर स्वादु रेविओली का बर्त्तन रखा हुआ था और अध्यापिका सब्जीवाले के साथ बाते कर रही थी कि तभी सीज-लिन्द वहाँ जा पहुँची और इससे पहले कि उसे कोई हटा सके, उस पकवान को चट कर गई। मुझे आश्चर्य है तो यही कि यह घटना उसकी मौत का कारण न बन गई।

इसी समय के बीच अध्यापिका ने अपनी विशाल-हृदयता के कारण एक मधुर स्वभाव की स्त्री को, जो स्वयं भी अन्धी थी और जिसने बाद में बेर-मौन्ट के अन्धों के लिए काम किया, नेला हैनी की किताब के लिए नोट लेने के काम पर लगाया। यह इस बात का एक उदाहरण-मात्र है कि फारेस्ट हिल्स मे हमारे घर पर आनेवाले अन्धों तथा बहरो का कितने उल्लासमय आतिथ्य से स्वागत किया जाता था। बहरों के राइट-ह्यूमेसन स्कूल के मेरे कुछ सहपाठी हमारे घर के समीप रहते थे और क्योंकि अध्यापिका चाहती थी कि जब मै दौरे में न होऊँ तब उनसे मिलने का आनन्द प्राप्त करती रहूँ, इसलिए वह उन्हें मेरे जन्म-दिन पर या अन्य किसी सामाजिक-समारोह मे आमन्त्रित कर लेती थी। जब मै उन अवसरो के उल्लासपूर्ण संलापों की (जो मै उनकी उँग-लियो पर करती थी) तथा स्कूल के दिनों की याद करती हूँ तो मेरी स्मृति

मे प्रसन्नता और उल्लास उभर आते है। कनाडा की एक आकर्षक युवती, जो थोडा-बहुत सुन सकती थी और पद्य-रचना कर लेती थी, शहर में काम मिलने तक हमारे साथ ठहरी थी। एलिजबैथ गैरेट, जो सुदूर पश्चिम के अन्तिम और महानतम शैरिफ की एक पुत्री थी, न्यूयार्क मे प्रसिद्ध संगीत-शिक्षक श्री विदरस्पून से शिक्षा ले रही थी और वह प्रायः हमसे भेंट करती थी। मै उसको उसके दृष्टिहीन परन्तु भावाभिव्यंजक मुख, उसके हँसमुख स्वभाव, भव्यता और हास्य उत्पन्न करनेवाली कहानियों की सम्पत्ति जिन्हें सुनकर अध्यापिका प्रसन्नचित्त हो जाती थी, इन सब बातो के लिए प्यार करती थी। एलिजबैथ ने गायन और वाद्य-संगीत का प्रदर्शन करते हुए साहसपूर्वक सारे देश का भ्रमण किया था। परन्तु, तब उसका हमे जितना अभिमान था, उससे भी अधिक अभिमान हमे तब हुआ जब वह बाद में अपने राज्य न्यू मैक्सिको मे सगीतकार के रूप में सम्मानित हुई। इन तथा अन्य अनेक प्रकार के उपायों से अध्यापिका हमारे घर के वातावरण को प्रसन्न बनाये रखने का तथा अपनी आँखों की वेदना को भुलाने का प्रयास करती थी। वह मुझे हमेशा एक ईश्वरीय दूत बनने, नये-नये प्रकार के जीवन की खोज करने, दूसरों के लिए योग्यताओं के नये-नये राज्यों का निर्माण करने और अपने विषय मे चिन्ता न करने के लिए प्रेरित करती रहती थी। उसके साहस के सामने मेरी आत्मा किसी भी समय की अपेक्षा इस समय अत्यधिक श्रद्धापूरित हो रही थी—साहस, जिसके विषय मे डा० जानसन का कथन है कि इस गुण के अभाव में मनुष्य अपने अन्य गुणों को सुरक्षित नहीं रख सकता—परन्तु मै यह न भूल पाती थी कि वह जान-बूझकर अपनी आँखों का जो दुरुपयोग कर रही थी उससे उसके देख सकने के काल की अवधि घट गई थी और मै जानती थी कि डा० बैरेन्स आँखों मे आँसू भरकर उससे आग्रह किया करते थे कि वह उनकी सुविचारित चिकित्सा का पालन करे और विशेषत आराम करे। परन्तु उसे मै या डा० बैरेन्स या अन्य कोई भी अपने आपको विश्राम देने के लिए तैयार न कर पाते थे। जब मै उसका स्पर्श न करती, तब भी और जब मै उसे छूती तब तो निश्चित ही, उसका मुख किसी पुस्तक में घुसा होता। अब पढ़ना ही उसका जीवन बन गया था और मुझे उसके इस आचरण से बलिदानी की सी अग्नि-परीक्षा सहन करनी ही पड़ी। वह मुझे प्रति दिन की डाक मे आनेवाले अधिक महत्त्वपूर्ण पत्र पढ़कर सुनाती और मै उनका उत्तर देती। अन्य पत्रों को वह खानों और दराजों में बेतरतीब फेंक देती थी और पौली ने बाहर से लौटने पर इन्हे निकाला। जब पौली बाहर गई हुई थी, टेलीफोन और दरवाजे की घंटी बजती रहती, परन्तु उनका उत्तर

न दिया जाता, क्योंकि मै उन्हें सुन नही पाती थी और डा० वेल के समान अध्यापिका उनका उत्तर देने से इनकार कर देती थी। उसका पढ़ना तब तक चलता रहता जब तक वह बीमार न पड़ जाती,* ऐसा अधिकाधिक बार होने लगा और परिणामतः उसे बिस्तर पकड़ना पड़ता।

इस समय तक मेरी पुस्तक "माइ रिलिजन" का प्रथम प्रारूप तैयार हो चुका था और बहुत दिनों तक आराम कर लेने तथा बहुत देर के बाद डा० बैरेन्स के आदेशों का पालन पर लेने के पश्चात् अध्यापिका ने मेरी पांडुलिपि को पढ़ा और मेरे हाथ में इसके हिज्जे किये। मैंने यह पांडुलिपि अनेक विघ्नों के बीच, ऐसे विघ्नों के बीच जो बिजली की करण्ट के समान प्रकट होते, मेरे विचारों को स्तब्ध कर देते, तैयार की थी और अब यह मेरे दिमाग से बिलकुल ही उतर चुकी थी। अध्यापिका के टैलिस्कोप-चश्मे भी किसी-किसी शब्द को पढ़ सकने में उसकी सहायता न कर पाते थे। इस असहाय अवस्था में वह एक बच्चे के समान बन गई थी। जान पड़ता था कि वह भूल गई है कि किसी की सुप्रयुक्त क्षमताएँ किसी अन्य की क्षमताओं के विकास में सहायक होती है, जैसे कि डा० फ्रैडरिक टिलनी कहा करते थे कि उसकी अच्छी और सुविचारित शिक्षा मेरे मस्तिष्क को अज्ञान के बन्धनों से मुक्त करने में नितान्त आवश्यक सिद्ध हुई थी। हम स्तब्ध रह गई और हम पर भय-विह्वल मौन छा गया। सौभाग्य से हमारे कृपालु मित्र श्री एफ० एन० डबलडे को जब यह स्थिति ज्ञान हुई तो उसने हमारे त्राण के लिए नैला ब्रैडी, जैसा कि तब उसका नाम था, को अध्यापिका के और मेरे लिए आँखों का काम देने के लिए भेजा। उस स्मरणीय दिन से लेकर आज तक उसकी दुष्प्राप्य, बहुमूल्य मैत्री हमारे जीवनों के लिए कल्याणकारी बनी हुई है।

जब अध्यापिका समझ गई कि उसका पढ़ने का आनन्द समाप्त होने को है तो वह परास्त-सी दिखने लगी। परन्तु अपनी अदम्य चपलता से प्रेरित होकर उसने मैसाच्युसेट्स में कोहेसैट के समीप एक छोटे से टापू में शिकारियों की झोपड़ी में गर्मियाँ बिताने का आमंत्रण स्वीकार कर लिया। नैला कुछ समय तक हमारे साथ रही। इस बार अध्यापिका की वातावरण-परिवर्तन की यह इच्छा बहुत कुछ वैसी ही थी जैसी "ए० ई०" ने अपनी कविता "ट्रान्शियेंस" में वर्णन की है। वह सदैव पूर्ण सौन्दर्य का अन्वेषण करती रहती थी, और सौन्दर्य के किसी कोष को पाकर उस समय वह चाहे जितनी भाव-विभोर हो जाती हो, परन्तु इसके अतिरिक्त अन्य को पाने की उसकी इच्छा बनी रहती थी। उसका कहना था कि सभी वस्तुओं को यहाँ से चला जाना है और हम जिस समय जहाँ

रहते हैं वहाँ से कहीं और जाने के इच्छुक रहते हैं। वह कहती थी "शायद यह परिवर्तन-प्रियता इसलिए स्वीकार कर लेनी चाहिए कि कहीं हम इस संसार को इतना अधिक न चाहने लगें कि हम मरने और किसी अधिक रमणीय तथा अधिक पूर्ण स्थान का अनुभव करने के अनिच्छुक न बन जायें।" यह अन्तिम समय था जब मैंने उसे परिवर्तन में आनन्द का अनुभव करते पाया। अभी तक उसके संलाप मे सुरा की सी मादकता और उसके हँसने में उसके शारीरिक स्वास्थ्य की झलक बनी हुई थी—मैं इसका शारीरिक अनुभव कर सकती थी। वह हमारे साथ टापू के चारों ओर घूमती थी, टापू की सुनहरी धूप, नमकीन हवा और एकान्त उसे प्रिय थे। सीजलिन्द एक वर्ष पहले मर गई थी। उसकी मृत्यु से अध्यापिका इतनी दुखी हुई थी कि उसने हिज्जों की भाषा में मुझे बताया था, "स्नेह की ऐसी मूक प्रतिमा को खो देना किसी शिशु को खोने से भी दुखद है!" ये शब्द उसकी अन्तःप्रेरणा से निकले थे। बाद में उसने बताया कि उसका वश चले तो वह सब कुत्तों से मित्रता कर ले। उसने जर्मनी से एक छोटा काले रंग का टैरियर तथा ग्रेट डेन जाति का कुत्ता हैन्स मँगाकर अपने पास रख लिये थे। हमारे परिवार के ये दो नवागन्तुक टापू की सफेद बालू पर, अडिग चट्टानों और धीरे-धीरे बहती तरंगों पर एक दूसरे का पीछा करते हुए खूब उछल-कूद मचाते थे। मृत्युपर्यन्त अध्यापिका के लिए कुत्ते सुख का अपरिहार्य साधन बने रहे—कुत्ते भी सभी देशों और नसलों के जैसे डेन, टैरियर, शैटलैण्ड, कौली और कोई भी कुत्ता जो अपनी जीभ, पंजों और हिलती हुई दुम से प्यार कर सके और अपनी शालीनता तथा शैतानी की क्षमताओं से उसका मनोविनोद कर सके। इस टापू पर एक तूफानी रात को, जब सागर की लहरें हमारे उफनते हुए समुद्र के बीच खड़ी सीमेन्ट की दीवार पर आघात कर रही थीं, हम झोपड़ी में एक दूसरे से सिमट गये। कुत्ते भूँकने लगे परन्तु हम लोग खुशी मना रहे थे क्योंकि नैला "मिडस्ट्रीम" का अन्तिम गैली प्रूफ पढ़ चुकी थी और अध्यापिका मुझसे इसके अन्तिम पृष्ठ के हिज्जे कर चुकी थी।

अब "मिडस्ट्रीम" का कार्य पूर्ण हो जाने पर और इससे निपट लेने पर हमें अन्धों के लिए अमरीकन फाउन्डेशन में अपना कार्य पुनः ग्रहण करने से पहले निजी विचारों को एक दूसरे पर प्रकट कर सकने और यह अनुभव कर सकने के लिए कि हम एक दूसरे के हैं, कुछ घनिष्ठता के क्षण मिल सके। मैंने "मिडस्ट्रीम" में आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक विषयों पर अपने विचार स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त किये थे और वह कहने लगी कि सर्वसाधारण के बीच जीवन के अनुभव के मार्ग से वह भी मेरे जैसे निष्कर्षों पर पहुँची थी।

"तुम कहती हो, हैलेन, कि तुम्हारा दर्शन सिखाता है कि उस संसार में जिसे तुम एक और समवाय मानती हो अन्धेपन और बहरेपन का अस्तित्व नही है। इसलिए मानव का कोई भी अनुभव तुम्हारे लिए बुद्धि-ग्राह्य है और तुम्हे उन विचारो और आदर्शों को त्यागने की आवश्यकता नही है जिन्हे तुम अपने यथार्थ स्वरूप मे आत्मसात् कर चुकी हो। यद्यपि तुम्हें शारीरिक दृष्टि से अन्धों के लिए लिखने और उनके हितो के लिए संघर्ष करने में मेरे बचपन के सम्बन्ध में संकेत भर करने के अतिरिक्त और कुछ कहने न दिया गया, तथापि मेरी ही तरह तुम भी आधारभूत निर्धनता और इससे उत्पन्न होनेवाली बीमारी, शक्तिहीनता और शिष्टता के अभाव के विषय में भावक हो। मैंने भी निर्धनता द्वारा सामाजिक दलदल मे कुचले जाते हुए लोगों को देखकर दुख सहा है, परन्तु मेरा कभी यह विश्वास नही रहा कि कोई व्यक्ति किसी अन्य को क्षति पहुँचाने का विचार रखता है, और मुझे विश्वास है कि कोई भी यह पूर्व-कल्पना न कर सका होगा कि औद्योगिक जीवन इतना भयंकर दुखदायी और दासता बढ़ानेवाला बन जायगा—मालिक, जमींदार, साहूकार और मजदूर जो किसी भी मानव के लिए कल्पनातीत गति से बढ़ती हुई आज की आर्थिक एवं यान्त्रिक प्रणाली मे परिश्रान्त हो रहे है, इनमे से कोई भी यह पूर्व-कल्पना न कर सका होगा।"

फिर भी, अध्यापिका उन स्थितियो को कभी क्षमा न कर पाई जिनसे प्रेरित होकर वाकेल लिन्डसे ने "दि लीडन आइड" (शीशे की आँखोंवाला) जैसी पुस्तक लिखी, क्योकि वे स्थितियाँ साहित्य, संगीत, चित्रकला, वास्तुकला और वह बौद्धिक जीवन, जिसकी वह उपासिका थी, की ईश्वरीय देनों का गला घोंट देनेवाली थी। यही कारण था कि जब मै धनवानों और शक्तिशालियों से धन की प्रार्थना करती थी तब वह बेचैन हो जाती थी।

वह कहती थी, "परन्तु जब तक हमारे बीच ऐसे लोग है जो विश्व-अशान्ति, घृणा, ठगी, हितों की टक्कर, पूर्वाग्रह और अधिकतम शक्तिशाली का अधिकार—इन बातों को अपरिहार्य मानने से इनकार करते है, तब तक मानव-जाति के जीवित रहने की आशा है। हम इतिहास को ऊपर से भी देख सकते है और नीचे से भी और अपने उद्देश्यो मे शाश्वत लोकों के संगीत से नवीन स्फूर्ति भर सकते है।"

सन् १९२८-२९ के जाड़ों मे तो मै कार्यो के प्रवाह में डूब सी गई—स्कूल में प्रवेश कराने से पहले छोटे बच्चों को सामान्य आदतों के प्रशिक्षण के लिए तथा कालेज के अन्धे छात्रों की वृत्ति की व्यवस्था करना, कांग्रेस के सामने यह

आग्रह करते हुए कि अन्धों के लिए उभरे टाइप में छपा साहित्य प्रस्तुत करने के लिए अनुदान की राशि बढ़ाई जाय, भाषण देने और ऐसे ही अनेक कार्य। पौली मेरे साथ सभाओं में जाती थी, परन्तु मैं जो कुछ बोलती या लिखती थी, अध्यापिका उसमें एक नया प्रभाव भर देती थी। अध्यापिका सरल शब्दो को नये-नये अर्थो मे प्रयोग करने का जादू जानती थी; वह शब्दों को ऐसे स्थान पर सजा देती थी जहाँ वे अपनी आभा पूर्णतः विकीर्ण कर सकें। मेरे शब्दों का मस्तिष्क की दृष्टि से देखनेवाले अन्धों पर कैसा प्रभाव पड़ेगा, यह भापने की उसमें अलौकिक क्षमता थी—ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे उसे भविष्य की बातें जान लेने की क्षमता प्राप्त हो गई है, जो उसकी समाप्त होती हुई दृष्टि की सीमा से दूर थी। जब उसके तीर जैसे स्पष्ट शब्द मेरे धनुष पर चढकर लक्ष्यभेद करते थे तो मुझे गौरव का अनुभव होता था।

सन् १९२९ की गर्मियों मे डा० बैरेन्स ने अध्यापिका की दाईं आँख की शल्य-क्रिया (ऑपरेशन) की और बाद में पौली ने और मैंने ऐडिरौन्डैक्स में लौंग-लेक पर एक कुटीर ढूँढ़ ली। यह बड़ा आनन्ददायक स्थान था। मैं यहाँ किनारे बँधी रस्सी के सहारे झील के किनारे तक जा सकती थी और एक दूसरी रस्सी के सहारे तैर सकती थी, परन्तु अध्यापिका तैरने मे मेरा साथ न दे पाती थी और न वह पौली के और मेरे साथ देवदारु-वृक्षों के बीच घूम सकती थी। उसकी हालत पहले जैसी अच्छी न थी और उसे पढ़ने से रोकने के लिए हमें निरन्तर लड़ना पड़ता था। इन छुट्टियों के दिनों में मुझसे भाषण इत्यादि के लिए अनेकानेक आग्रह किये जाते, परन्तु अध्यापिका उस थोड़े से समय को जो मुझे तैरने, चहचहाते पंछियों पर ध्यान देने जिनका आभास मुझे, रस्सी के सहारे चलते हुए, उनके पंख की फड़फड़ाहट से मिलता था, पारक्यूपाइनों (एक बनैला पशु जिसे "सेही" कहते हैं) को तंग करनेवाले और इसके बदले मे अपनी नाक पर उनके पैने पंखों की मार खानेवाले कुत्तों की कहानियाँ सुनने के लिए मिलता था, मुझसे छीनकर मेरे आनन्द मे बाधा न डालने देती थी। कुटीर के समीप एक सेब के वृक्ष पर एक भालू का चढ़कर फल चबाना सुनकर अध्यापिका भी मेरी तरह उत्तेजित हो उठी थी। जब उसे कष्ट देनेवाली भूख न होती तो हम सब मोटरबोट मे चढ़ जाते और इसे झील पर धीरे-धीरे या तेजी से चलाते। अध्यापिका चारों ओर की रमणीक दृश्यावली की चर्चा करती और उसकी पुरानी भाव-प्रवणता लौट आती। वह पूर्ण-सौन्दर्य और बेहूदगी दोनों से प्यार करती थी। ये दोनों बातें एक दूसरे के सर्वथा विरुद्ध जान पड़ती हैं, परन्तु प्रायः कलात्मक स्वभाव के व्यक्तियों में एक साथ पाई जाती हैं। "ओह, हैलेन,

अपने पतन का अनुभव करना कितना दुखदायी होता है! मुझे छोड़कर जाती हुई प्रत्येक शक्ति उस विनाश का आभास देती है जो मृत्यु से भी बुरा है। जीवन की सीढ़ी पर नीचे उतरना, क्या भयंकर नहीं है?

पृथ्वी मेरी अस्थियों को अपने से चिपटाती है।
मुझे छोड़ दो, ओ आकाश-जन्मा शक्तियो,
घास और पत्थरों का बन्धु बनने को।"

१५

सन् १९३० के वसन्त और ग्रीष्म ने अध्यापिका को और मुझको—नवजीवन से मैं नहीं कहती, क्योंकि जीवन सार्वजनीन है—ऐसे देशों की श्लाघा से समृद्ध किया जिनका इतिहास हमारे अपने इतिहास से भिन्न है, जिनका वातावरण भिन्न है और जहाँ वन-सम्पत्ति तथा जीव-जन्तु, जिनसे आनन्द प्राप्त करना चाहिए, भिन्न है। अध्यापिका की बाईं आँख को आराम देने के लिए हमारा देशाटन करना परमावश्यक था, इसलिए मैंने फाउण्डेशन से छुट्टी ले ली।

मै समझती थी कि मैं अध्यापिका की झकों तथा अस्थिर चित्तवृत्तियों से भली भाँति परिचित हूँ, परन्तु इस समय उसकी एक अप्रत्याशित दुष्प्रवृत्ति को देखकर मै स्तब्ध रह गई, क्योंकि उसमें निष्पक्ष रूप से आत्म-विश्लेपण करने की क्षमता थी। पहले यह सुझाव दिया गया कि हम फ्रांस जायँ। इस पर अध्यापिका हँसने लगी और बोली, "ओह नहीं, सारा संसार भी एक ओर हो जाय तब भी मैं उस गॉल लोगों के देश में न जाऊँ।"

"क्या!" मै बोल उठी, "क्या तुम पेरिस नहीं जाना चाहती, जिसकी शैलियों की तुम बार-बार प्रशंसा करती रही हो, जिसके सीन, नात्रदाम, टयूलेरीज़, बारसेलीज़ तथा क्रान्ति की स्मृतियों से भरे स्थानों का तुम मुझसे वर्णन करती रही हो!"

"मै नहीं जाऊँगी", उसने अपना हाथ मजे से हिलाते हुए कहा।

उसको मनाने में हमारे मित्रों ने भी हमारा साथ दिया, और मुझे भय है कि हमने मान-मनौवल की हद कर दी। वह उद्विग्न हो उठी और तब क्रुद्ध हो गई, फिर भद्रता एवं शिष्टता के विपरीत कार्य करने लगी। वह अपनी बीमारी, थकान और वृद्धावस्था की शिथिलता का रोना रोने लगी और कहने लगी 'हम उसे किताबों, मनोविनोदों तथा प्रकृति के आकर्षणों से उकताहट की ओर घसीट रहे हैं।' मैं चुपचाप उसके अपशब्द सुनती रही और उसने भी बोलना बन्द कर दिया जैसे कि वह मानने पर आ गई हो। पौली ने और मैंने "प्रेजिडेंट हार्डिज" जहाज पर यात्रा करने की जल्दी-जल्दी तैयारियाँ कर ली,

जिससे वह फिर से अपना विचार न बदल सके, परन्तु घर से चलने के नियत समय से कुछ घंटे पहले हमें विदित हुआ कि अध्यापिका पर मान-मनौवल या जोर-जबरदस्ती का कोई असर न होगा। हमें अपनी यात्रा का कार्यक्रम रद्द करना पडा।

तब अध्यापिका मानो स्वप्न से जाग उठी। उसने देखा कि मुँह से एक शब्द भी न निकालनेवाली पौली कितनी उदास, थकी हुई और निरुत्साह हो गई है। मै भी डैस्क पर अपने काम मे लग गई और मैने कुछ न कहा। पश्चात्ताप के स्वर में अध्यापिका ने पूछा कि हमें अगला जहाज कौन-सा मिल सकता है। सौभाग्य से १ अप्रैल को "प्रेजिडेण्ट रूजवेल्ट" जहाज रवाना होने-वाला था और जब हम इसमे न्यूयार्क के बन्दरगाह से बाहर निकल गये तो अध्यापिका ने सुहावने मौसम का वस्तुतः आनन्द लिया। हमें अभी तक कुछ पता न था कि पेरिस में हम कहाँ ठहरेंगे, परन्तु उसे इसकी कोई चिन्ता न हुई। थोड़े समय बाद एक जोर का तूफान जहाज पर कूद पड़ा। जहाज में हमारे कमरे की मेज-कुर्सियाँ बिछौनों से टकराने लगीं, फलों की एक टोकरी नीचे लुढ़क पड़ी और पौली फर्श पर लुढ़कते हुए सेब और संतरो को बटोरने के लिए उनके पीछे भागती फिरी। अध्यापिका अफसोस भरे स्वर मे कहने लगी, "कितना अच्छा होता कि मैं घर पर ही ठहरी रहती!" परन्तु उसे समुद्री-बुखार न हुआ और कुछ घंटे सो लेने के बाद वह उन सभी बातो मे हमारे साथ भाग लेने लगी जो हँसी-खुशी उपजानेवाली थी।

लैण्ड्स एण्ड के समीप ब्रिटेन की जीभ, आँख और कान के समान लिजार्ड नामक स्थान पर पहुँचने पर हम उत्तेजना से भर उठे। प्लाइमथ में हमें पौली की बहिन का सन्देश मिला कि कार्नवाल के लू नामक गाँव में हमारे विश्राम की व्यवस्था की गई है। दिन बहुत सुहावना था। जब हम गाड़ी में प्लाइमथ के बीच से होकर गुजर रहे थे, मेरा हृदय तीव्र गति से स्पन्दित होने लगा। इसी स्थान से मेरे पूर्वजों ने पुरानी दुनिया को छोड़ नये संसार की ओर प्रस्थान किया था। सड़कों पर गाड़ियों की भीड़-भाड़ थी जिन पर नारसिसी, डैफोडिल इत्यादि वसन्त के फूल लदे थे। इन्हें देख-कर अध्यापिका तो आनन्द के अतिरेक से स्तब्ध-सी हो गई। उसने इतने अधिक फूल खरीद लिए कि हमारी मोटर भर गई। रास्ते में एक नदी हमारे बगल में बह रही थी और बैंगनी फूलों से भरे नीले सरोवर तो वहाँ सर्वत्र थे। अन्त में हम एक बँगले में पहुँचे जो एक उच्च शिखर पर, जिसके चारों ओर गल (एक समुद्री पक्षी) पक्षियो के झुंड एकत्र हो रहे थे और कूक

रहे थे, बना था। अध्यापिका इनकी घंटियों जैसी कूक से, जो अमरीकी गल-पक्षियों की कूक से बहुत भिन्न थी, बहुत आकर्षित हुई। यहाँ हमने दो महीने बड़े आनन्द में बिताये। इस बीच अध्यापिका का स्वास्थ्य सुधर गया। उसने अपनी पुरानी भव्यता फिर से प्राप्त कर ली। जिस दिन ठंड कम होती, वह मेरे साथ बँगले से एक भेड़ों से भरे चरागाह की ओर जानेवाले रास्ते पर चल पड़ती और वहाँ पहुँचकर भेड़ों के बीच बैठ जाती। बहुत सी भेड़ें मेरे पास खिच आतीं और मेरे नीले वस्त्रों को ऐसे सूँघतीं जैसे वे इन्हें कोई सुन्दर खाद्य पदार्थ समझ रही हों। वह पौली से कार्नवाल के सम्बन्ध में उपलब्ध हो सकनेवाली सभी कविताओं और गाथाओं को पढ़वाती और इनके हिज्जे करवाती। मुझे ऐसा प्रतीत होता जैसे मैं बचपन के उन दिनों में लौट आई हूँ जब अध्यापिका ने मुझे पढ़ाना शुरू किया था। मुझे आतिथ्य-पूर्ण पुरानी सरायों, समुद्र के ठीक किनारे तक फैली हुई झोपड़ियों, जिनको अलग करनेवाले मार्ग किसी गली की अपेक्षा पानी के ऊपर आने-जाने के लिए बिछाये हुए तख्तों के अधिक समान थे, पुरानी छोटी-छोटी धर्मशालाओं, हवा-पानी के थपेड़ों से बदरंग गिर्जाघरों, कटे-फटे समुद्र-तट और अधिक आन्तरिक भाग के दलदल जहाँ तेज हवा चलती थी—इन सबकी चित्रात्मकता का आभास कराते हुए अध्यापिका का आनन्द यथार्थत: छलक पड़ता था। कभी-कभी हम ऊन कतरने के लिए ले जाई जाती हुई भेड़ों के झुंडों के बीच घूमतीं और तब उनके गरम, मोटे ऊनी शरीर का स्पर्श पाकर अध्यापिका को और मुझे एक विचित्र संवेदना का अनुभव होता। जब हम झाड़ियों और बागों की दीवारों पर उगे हुए तथा ओस, सूर्य के प्रकाश और नमकीन हवा से स्पन्दित हेयर बेल और वालफ्लावर तथा अन्य पुष्पों से भरी टेढ़ी-मेढ़ी गलियों में घंटों तक मोटर मे चक्कर काटते तो अध्यापिका सूर्य के समान फैल जाती। हम गाड़ी से उतर पड़ते जिससे मैं घास-फूस के छाजनवाली छोटी-छोटी झोपड़ियों पर अपने हाथ रख सकूँ। जब हम मोटर में चलते रहते, अध्यापिका राजा आर्थर की, मौरगाना की, उस झील की जिसमें ऐक्स-कैलिबर डुबाया गया था और ओल्ड आर्टफुल के कार्यों तथा चंचलताओं की कथाएँ वैसे ही ध्यान से सुनती रहती जैसे उसने कभी आयरलैण्ड के लोगों के पराक्रम की तथा "छोटे लोगों" की कथाएँ सुनी थीं। ये कथाएँ ऐसी रोचक और जादूभरी थीं कि अध्यापिका की और मेरी इच्छा हुई कि हम इनका आनन्द अपने घर के अन्धों में भी बाँटें। इसलिए वह जो कुछ सुनती वह सब कुछ मुझे बताने में उसने विशेष ध्यान दिया और मैंने कुछ समय के

लिए माँगे हुए एक टाइपराइटर पर इन्हें शब्द-बद्ध कर लिया और "जीग्लर मैगजीन फार दि ब्लाइण्ड" में छपने के लिए भेज दिया।

हम मोटर में शान्त एवं विश्रान्तिपूर्ण डेवन की ओर भी गये। सेब के वृक्ष वसन्ती बयार में अपनी लम्बी-कम चौड़ी कोंपलों की समृद्धि को उछाल रहे थे। सर्वत्र हरे-भरे लानु, छायादार गलियाँ, चरागाह और पहाड़ियाँ थी और पंछी अपने उल्लास और मान भरे गीत गा रहे थे। एक दिन हम ऐग्डन हीथ पर बसे उस गाँव में गये जहाँ टामस हार्डी का जन्म हुआ था। हमने उसके कुटीर में प्रवेश किया, जिसकी खिड़कियों पर गुलाब चढ़ रहे थे। हमने वह सीधा-सादा कमरा देखा जहाँ वह एकान्त में लिखा करता था। हम उस गिर्जाघर के दालान में गये जहाँ उसका मानवीय कष्टों के प्रति नानाविध सहानुभूतियों से स्पन्दित होनेवाला हृदय विश्राम के लिए लिटाया गया था।

उसी वर्ष जून मे अध्यापिका, पौली और मैं वाटरफोर्ड, आयरलैण्ड जाने के लिए "बैली काटन" नामक एक भाड़े की नाव में सवार हुए। मै इस नाव के मल्लाहो, और विशेषत: एक मल्लाह के साथ, जो नाव मे सवार जानवरों का बहुत ध्यान रखता था, हम लोगों की बातचीत का आनन्दपूर्वक स्मरण करती हूँ। अध्यापिका इस मल्लाह की शिष्टता और केवल ब्रिटिश राजनीति ही नहीं अपितु संसार भर की सामाजिक समस्याओं के बारे मे उसके विस्तृत ज्ञान से बहुत प्रभावित हुई। मै स्वीकार करती हूँ कि आयरलैण्ड जाने के विचार से मैं उदास हुई थी, जहाँ हमे अध्यापिका के माता-पिता का पता लगाने का प्रयत्न करना था। मैंने इस देश के किन्ही भागों के उत्कृष्ट सौन्दर्य के बारे मे पढ़ा था और मैं इस देश के प्रति बहुत कृतज्ञ थी, जिसकी एक पुत्री ने मेरे जीवन को भूख और प्यास से उबार कर प्रसन्नता और इच्छापूर्त्ति की दिशा में प्रवृत्त कर दिया था। परन्तु इस देश पर युग-युग से लदी हुई तथा अपरिहार्य प्रतीत होनेवाली निर्धनता के प्रति अध्यापिका का दु.ख मेरी आत्मा में द्विगुणित हो गया था। जैसा उसने बाद में लिखा, वह "स्त्रियों के मैले-कुचैले काले शालों से, पुरुषों के धूलि-धूसरित पैरों से, हड्डियों के पंजर बने हुए बेचारे उदास गधों से, आयरलैण्ड में झिझकते हुए आनेवाले सूर्य से जो मानों इस देश के इतने कष्टों को देखने से झिझक रहा हो" आँखें चुरा लेती थी। उसे वहाँ की सूखी चट्टानों से, उन दलदलों से जिनमें से लोग ईंधन के लिए काई निकाला करते थे और काउन्टी क्लेयर के रूखे-सूखे दृश्य से घृणा थी। आयरलैण्ड के दुखों को देखकर "प्रभु की आँखों से टपके हुए आँसू" के समान शैनन नदी के विषय में, जो उसके स्वप्नों में बचपन से प्रवाहित होती रही

थी, मुझसे बात करते हुए वह स्निग्ध हो जाती थी। परन्तु अपने स्वभाव के विपरीत वह इँगलैण्ड के प्रति, जिसे अभी थोड़े ही समय पहले वह मुग्धकारी बता रही थी, तीव्र घृणा से भभक उठती। जैसे कोई सेना यह जाने बिना ही कि वह किससे और क्यों लड़ रही है, अन्धी होकर लड़ती रहती है, इसी प्रकार उसके अन्दर से भी कोई शक्ति फूट पड़ने का प्रयास कर रही थी। स्पष्ट विचार की प्रक्रिया द्वारा उसमें किसी राष्ट्र-विशेष को अपना समझने का भाव न रह गया था, और साधारणतः उसकी सभी उत्पीड़ित मानव-जातियों के साथ समान रूप से सहानुभति थी। वह जानती थी कि आयरलैण्ड के आर्थिक कष्ट अफ्रीका या एशिया अथवा फिलिपाइन्स के कष्टों से मूलतः भिन्न नहीं हैं, परन्तु यह सब होने पर भी इस समय वह परम्परागत संस्कारो से विक्षुब्ध हो रही थी। वह कहती भी जाती थी कि उसे यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि, वह युक्ति-विमुख हो रही है, वह स्वयं इस बात को जानती थी, परन्तु किसी दु.स्वप्न के समान घृणा का यह भाव उसे जकड रहा था। वह आपे में नहीं थी और मैं तब प्रसन्न हुई जब हमने ऐरिन से बिदा ली और इँगलैण्ड में अधिक प्रसन्नतापूर्ण दिन बिताने को लौट आये।

यह मेरा एक सौभाग्य था कि फारेस्ट हिल में अपने घर लौट आने से पहले अध्यापिका ने मुझे भारतीय ग्रीष्म के आकर्षणों का आनन्द लेने की अनुमति दे दी, क्योंकि इसके फलस्वरूप मैं अन्धों के कल्याण-कार्य की प्रथम विश्व-परिषद् के लिए, जिसका संयोजन फाउन्डेशन द्वारा न्यूयार्क में अप्रैल १९३१ मे होनेवाला था, धन एकत्र करने में अपनी शक्तियाँ लगा सकी। अन्धों के कार्य के उस विस्तार से हमारा दैनिक कार्यक्रम अस्त-व्यस्त हो गया और प्रचार-कार्य कभी-कभी तो हम पर भारी बोझ बन जाता, परन्तु यह एक प्रशस्त अभियान था और अन्धों के इतिहास को प्रगतिशील रूप से व्यापक एवं प्रकाश-पूर्ण बनाने की दिशा मे दूसरा कदम था।

सन् १९३१ की एक दूसरी घटना भी मेरी स्मृति के लिए ऐसी तृप्ति-कारक है जैसे कभी देवताओं के लिए होम की सुगन्ध समझी जाती थी। श्री ए० एडवर्ड न्यूटन तथा अन्य लोगों के लगातार जोरदार आग्रह करने पर टैम्पल यूनिवर्सिटी ने अध्यापिका को डॉक्टर ऑव ह्यूमैन लैटर्स की उपाधि दी। मेरे विचार श्री न्यूटन की ओर सदैव कृतज्ञतापूर्ण भाव से अभिमुख होते है, क्योंकि वह एक ऐसे व्यक्ति थे जिनकी न्याय-भावना ने शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापिका को उसका उचित स्थान दिलाया। डा० बेल कहा करते थे कि उसने केवल बहरों की ही नही अपितु सामान्य बच्चों की शिक्षा-पद्धति में महान्-

तम योग दिया है। डा० मेरिया मौंटेसरी ने, जिससे हम सैनफ्रांसिस्को में ऐक्स्पोजीशन के दौरान में सन् १९१५ में मिले थे, अध्यापिका को शिक्षा-पद्धति की "सच्ची अगुआ" कहकर उसके प्रति अपना हार्दिक एवं भव्य सम्मान प्रकट किया था। मै गौरव का अनुभव करते हुए श्री न्यूटन के शब्दों को उद्धृत करती हूँ।

"टैम्पल द्वारा प्रदान की गई उपाधि को तुम स्वीकार कर लोगी, मेरे ऐसा विश्वास करने का दूसरा कारण यह है, इससे टैम्पल को अपनी दुर्लभ सिद्धियों को, वे चाहे जहाँ भी पाई जायँ उत्साहित करने की इच्छा को घोषित करने का अवसर मिल जायगा और विशेषत: जब कि इसके सम्मान को प्राप्त करनेवाली एक ऐसी स्थिति मे है कि उससे इसके प्रतिदान के रूप में कभी कुछ किये जाने की संभावना नहीं है। अनेकानेक उपाधियाँ विश्व-विद्यालयो द्वारा प्रतिदान की आशा से दी जाती हैं। टैम्पल इस आशा से परिचालित नही है। इसलिए तुम्हे इसके सम्मान को अस्वीकार करने का कोई अधिकार नहीं है। क्या यह नही हो सकता कि कुमारी कैलर तथा तुम्हारे अन्य मित्र तुम्हारे काम का मूल्याकन तुम्हारी अपेक्षा अधिक सही ढंग से करते है?"

और उसने इसके साथ-साथ इतने ही शक्तिशाली इस तथ्य का उल्लेख नही किया कि टैम्पल यूनिवर्सिटी काम कर लड़के-लड़कियो को जीवन मे सुअवसर प्रदान करने के लिए स्थापित हुई थी। अध्यापिका ने पहले तो उपाधि लेने से इनकार कर दिया, यद्यपि मै स्वयं अपने लिए इसकी एक उपाधि स्वीकार कर चुकी थी, और मुझे प्रतीत हुआ कि इस उपाधि को अस्वीकार करने में वह उस जाति की, जिसने उसे जन्म दिया था, भावनाओं एवं मान-वता के तथा अपनी उन सामर्थ्यो के जिनके सहारे वह अपनी दुर्दशा से उभर कर विस्तृत क्षेत्र में पहुँच पाई थी, विपरीत आचरण कर रही थी।

फिर भी उसे जो भी मौका मिलता, वह जनता के सामने दूसरे अध्यापकों के कार्यों का बखान करती। जब हमे स्काटलैण्ड की ऐजूकेशनल-इन्स्टीट्यूट (शिक्षण संस्था) के फेलो के रूप मे दुहरा सम्मान मिला, उसके बाद उसने कहा था, "मैंने कभी यह नहीं सोचा है कि मैं अन्य अध्यापकों की अपेक्षा, जो अपने शिष्यों को अपनी सुन्दरतम उपलब्धियाँ प्रदान करते हैं, अधिक सम्मान की पात्र हूँ। यदि इनके प्रयत्नों से किसी ओक वृक्ष मे बन्दी बनी हुई कोई अप्सरा मुक्त नहीं हुई है तो इसमे कोई सन्देह नही है क्योंकि मुक्त करने के लिए कोई अप्सरा रही ही नही है।"

"मैने अध्यापिकाओं को कुंठित बुद्धि के विद्यार्थियो पर कितने अधिक हार्दिक प्रयास एवं पूर्ण प्रवीणता का विस्तार करते देखा है! मैंने उनको अधिक रोचक कार्यों को इसलिए छोडते देखा है जिससे वे अपना जीवन एक ऐसे कार्य मे लगा सकें जो मुझे नीरस, अरुचिकर प्रतीत हुआ। मैंने उन्हें किसी थोड़े भी विलक्षण कार्य के सर्वथा अयोग्य प्राणियों के लाभ के लिए धरती, समुद्र, आकाश और अपनी समग्र शक्तियो को एक करते देखा है। वे ईसू मसीह जैसे प्रेम और धैर्य के साथ मानव-जाति के उपेक्षित, पिछडे या दुखी बच्चों के परित्राण के लिए सदैव तत्पर रहते है।"

यह था वह विशाल-हृदय व्यक्तित्व जिसे मैं प्यार करती थी और आज भी मैं उसकी अच्छाइयों से प्यार करती हूँ—और उसी के कारण मैं आज उन उदात्त भावनाओं के साथ, जो मुझे उच्चतर स्तर पर उठा देती हैं, जीवित रहने का प्रयास करती हूँ।

अब मै अध्यापिका के और अपने भी व्यक्तित्व की चर्चा स्पष्ट भाव से करती हूँ। तुलनात्मक दृष्टि से, अन्धों का इस ढंग से पुनर्वासन का आन्दोलन कि वे सामान्य मानवों जैसा जीवन व्यतीत कर सकें, अभी नया है और बहुत थोड़े लोग इसे समझ पाये है। स्मरणातीत काल से अन्धों का मानव-जाति से भिन्न कोई प्राणी समझ कर तिरस्कार होता रहा है, यद्यपि युग-युग में असाधारण योग्यता ए ं कुशाग्र बुद्धिवाले अन्धे ख्याति प्राप्त करते रहे हैं। होमर और मिल्टन ने अन्धकार में उन काव्यों का सृजन किया जिनकी विश्व में प्रशंसा होती है। रोम के इतिहास के एक सबसे बुरे काल में अन्धे वकील ऐपियस क्लौदियस कैकुस ने उन विधियों को प्रस्तुत किया था, जिनसे जनता के अधिकार सुरक्षित हुए और यह सुरक्षा दासों तक को प्राप्त हुई और भी बहुत से अन्धे हुए हैं जिनके प्रकाशमय कार्यों ने सारे अन्धकार को पराभूत कर दिया। परन्तु इन लोगों में जो भी प्रतिभा या निपुणता थी वह इसलिए नही थी कि वे अन्धे थे।

अधिकांश अन्धे अशिक्षित अवस्था में लकड़ी या कोयले के समान दृष्टि-मुक्त मस्तिष्कों से निकले विचारों से प्रज्वलित किये जाने की प्रतीक्षा में रहते हैं, और प्रायः वे लोग जिनके पास आँखें हैं "दृष्टि-युक्त" मस्तिष्क से रहित होते हैं। ऐसे लोग अन्धों को साधारण कार्य करते देखकर उन्हें ऐसे गुणों से युक्त समझ लेते हैं जो वस्तुतः उनमें नही होते, परन्तु यह जानने की चेष्टा नहीं करते कि ये अन्धे अपनी अवशिष्ट शारीरिक चेतनाओ का कैसा उपयोग कर रहे है। यही बात बहरों, विकलांगों तथा अन्य अपाहिजों के साथ भी होती है।

अज्ञान के इस घने अन्धकार मे अध्यापिका ने अपनी ज्योति विकीर्ण की। उसने मेरे साथ एक दृष्टि-युक्त एवं श्रवण-शक्ति युक्त बच्चे जैसा आचरण किया, अन्तर केवल इतना था कि मुझसे शब्दो के माध्यम से बात करने के बदले वह मेरे हाथ मे शब्दो के हिज्जे किया करती थी। वह कभी किसी को मुझ पर तरस न खाने देती थी और न किसी को मुझ पर ऐसी अवाछनीय सुरक्षा की छाया फैलाने देती थी जिससे अन्धापन और भी करुणाजनक बन जाता है। वह कभी किसी को किसी काम के लिए मेरी प्रशंसा तब तक न करने देती थी जब तक कि मैने काम को वस्तुतः सुन्दर ढंग से न किया हो और यदि कोई मुझे एक सामान्य बच्चे के समान सम्बोधित करने के बदले अध्यापिका से मेरे सम्बन्ध में कुछ कहता तो वह इस चेष्टा के प्रति अपनी उग्र घृणा प्रकट करती थी। उसने मेरे परिवार के लोगों तथा मित्रों को मेरे साथ सभी विषयो पर बात करने के लिए उत्साहित किया जिससे मै भाषा का ज्ञान अधिक तेजी से प्राप्त कर सकूं। इन बातो मे अध्यापिका को वास्तविक साहस से काम लेना पड़ा, क्योंकि टस्काम्बिया में मेरी माँ और चचेरी बहिन लीला लैसिटर के अलावा और कोई भी अध्यापिका की विधियो की बुद्धिमता को न समझ पाता था।

वर्षों बाद मै उस ज्यामिति की अध्यापिका की कृतज्ञ हुई, जिसने मुझे अठारहवाँ प्रमेय समझने मे शिथिल देखकर मेरे प्रति क्रोध प्रकट किया था और मैंने अनुभव किया कि जब प्रोफेसर कोपलैण्ड ला फौन्तेन के मेरे अशुद्ध अनुवाद की अपनी कठोर, तीखी आलोचना द्वारा निन्दा करते थे तो वे मुझे एक सामान्य शिष्य समझकर ही ऐसा करते थे। मै जो मानसिक सन्तुलन बनाये रख सकी, वह अध्यापिका की उन कल्याणकारी आलोचनाओ का फल था जो वह मेरी सफलताओ या विफलताओ की किया करती थी। उस समय उसने मुझे उन भ्रान्त धारणाओं से अवगत न कराया जो लोगों के मन में अन्धेपन के सम्बन्ध मे बसी हुई है और यही कारण है कि मै अपनी पुस्तक "दि वर्ल्ड आइ लिव इन" (मेरा संसार) को, उन आलोचको का उपहास करते हुए जो यह मानने के लिए तैयार नही थे कि मै चाँद और तारों का "प्रकाश" आवाज के "स्वर" (जिनकी संवेदना स्पर्श से संभव है), "ग" और "दृश्य" जैसे शब्दो को समझकर उपयोग कर सकती हूँ, विनोदपूर्वक लिख सकी। मुझे यह दिखाने मे यथार्थ आनन्द मिलता था कि मै उन शब्दो के साथ क्रीड़ा करने में भी विनोद प्राप्त कर सकती हूँ, जिनके अर्थ का मै सादृश्य और कल्पना द्वारा ही अनुमान लगा सकती थी। अध्यापिका ने मेरे लिए

जीवन को इस ढग से सँजोने मे कठिन परिश्रम किया जिससे मैं अपनी सीमाओं में से छिपा हुआ सौन्दर्य प्रकाश मे ला सकूँ और कदाचित् अपने पाठकों को अन्धेपन और बहरेपन को सामान्य-मनोविज्ञान की पृष्ठभूमि में देखकर इनके प्रति स्वस्थ भावनाएँ बनाने के लिए प्रेरित कर सकूँ।

मैं जो कहना चाहती हूँ, वह यह है, जब मैं अपनी सिद्धियों के लिए उदारता-पूर्वक अति प्रशसित हुई हूँ, मैंने स्वयं को कभी इन सम्मानों का पात्र नहीं समझा। "प्रतिभा" का कोई भी चमत्कार मेरे भाग्य में न था। प्रतिभा असीम कष्ट-सहिष्णुता की क्षमता को कहा जाता है और मुझमे यह क्षमता कभी भी न थी। मैंने यदि किन्हीं साधारण कार्यो पर कठोरतर परिश्रम किया है तो अपनी त्रिमुखी बाधाओ के कारण। यह मेरा सौभाग्य था कि अध्यापिका और मैं दोनों ही अँगरेजी और साहित्य से प्रेम करती थी। मैंने सदैव यह दिखाने का परिश्रम किया है कि भाषा की उपलब्धि में अध्यापिका ने मेरे लिए आँखो और कानो का काम दिया है और उसने किस प्रकार मुझे केवल लिखने के लिए ही प्रोत्साहित नही किया, अपितु मुझे वे ढंग भी सुझाये जिन्हे अपना कर मैं अपने लेखों और भाषणो को बाधितों की सेवा मे लगा सकती थी। दृष्टि-युक्त लोगों ने बाधितो के विषय मे जो मनोवैज्ञानिक नमूने बना डाले थे, उनसे भ्रान्त धारणाएँ उत्पन्न होती थीं। मै समझती हूँ कि यह एक अपरिहार्य-सी बात थी कि मै जिन लोगो से मिलती थी उनमे से बहुत थोड़े लोग ही अध्यापिका की धृष्टतापूर्ण योग्यता को समझ पाते या मुझे अपनी आत्मा की साधन-सम्पत्ति का उसी भाँति उपयोग करनेवाला एक सामान्य मानव-प्राणी मान पाते, जैसे कि अन्य कोई भी व्यक्ति जिसमें अपनी शारीरिक अभावों की पूर्ति की तीव्र इच्छा हो इस साधन-सम्पत्ति का उपयोग कर सकता है। अध्यापिका ने मेरे लिए एक सर्वत: पूर्ण नियति का सृजन किया, क्योंकि उसका विश्वास था कि प्रत्येक मनुष्य मे ऐसी अनेक क्षमताएँ छिपी होती हैं, जो प्रकाश में आने की प्रतीक्षा करती रहती है। उसमे मेरे लिए जीवन को पकड़ लाने का ऐसा दृढ़ विश्वास था जैसे कोई बाज अपने शिकार को पकड़ लेता है और उसे उड़ाकर ऊपर हवा मे ले जाता है और अध्यापिका अपनी शिष्या को लेकर कार्यशीलता के प्रशान्त क्षेत्र मे उड़ चली थी। उपलब्धि आनन्द का, सर्वाधिक तृप्तिकारी आनन्द का, विषय होती है; परन्तु इसे शौर्यपूर्ण युद्ध की कीमत पर ही प्राप्त किया जा सकता है। यह वह खजूर वृक्ष है जो स्रष्टा का मुकुट बनता है। उपलब्धि परिपालित जीवन की असीमता का एक अंग है। अध्यापिका ने जीवन का निर्माण अपनी सीमाओं से न किया, अपितु

अपनी शक्तियों के सहारे उसने इसे आगे बढ़ाया। उसने अपने कार्यों को मेरी दुर्बलताओ के अनुरूप न बनाया। उसने मेरी आत्मिक शक्तियों को उनके अनुरूप बनने के लिए प्रेरित किया। वह उन लोगों को सहन न करती थी जो अपनी चेतनाओं का गर्व करते थे, अन्धों तथा अन्य वाधित प्राणियों पर अपना अभिभावकत्व स्थापित करते थे या उन्हे दान देते थे जब कि उन्हे प्रेम की आवश्यकता थी या ऐसे कार्य करते थे जिनसे जीवन को जगानेवाले कार्यों की इच्छा मर जाती थी या इन्हें सम्पन्न करने की शक्ति क्षीण होती थी। जब कभी संभव होता, वह उनके मन से झूठी करुणा के झाग को धो डालती और उनका सामना उस ऊर्ध्वगामिनी मानवता से करती जिसे वे लोग वाधितों में न मानते थे। सैफो बनने के लिए सैफो की-सी आत्मा अपेक्षित होती है। मस्तिष्को की जननी बनने के लिए, जैसी कि अध्यापिका थी, किसी सक्रिय आदर्श के साथ विवाह करना पडता है और ऐसी कोख की आवश्यकता होती है जो आत्माओ को जन्म दे सके। अध्यापिका की अग्रगामिनी आत्मा को—पुनरुक्ति के लिए मै पाठकों से क्षमा चाहती हूँ—यह स्वप्न बढावा दे रहा था कि सामान्य तथा वाधित मानवों के मूल्यांकन में अन्ततः सर्वत्र बुद्धि की विजय होगी, पूर्वाग्रहों के कठोर सीखचे तोड़ दिये जायँगे, नये विचार एक उद्भूत निर्झर को प्रवाहित करेंगे और शिक्षा के पुराने उद्यान नये प्रभात का स्वागत नई कोपलों के साथ करेंगे, फूलों की क्यारियाँ रंग-बिरंगे फूलों से भरी होंगी और भविष्य के नये विश्व के गान गाने के लिए आभा-युक्त निर्झर फूट पड़ेंगे।

अन्धों के कार्य-कर्त्ता, लगन और धैर्यवाले वे भले ही हों, इस लक्ष्य से अभी कितनी दूर है! उन पर नई-नई समस्याएँ आ पड़ रही है, जिनका उन्हें कुछ भी पूर्वाभास न था। उदाहरण के लिए, यह अत्यावश्यक प्रश्न उपस्थित हो गया है कि पूर्णतः अन्धे या बहुत हल्की दृष्टिवाले बच्चों के लिए विशेष अध्यापकों की आवश्यकता है जो अपना सारा समय और शक्ति इन पर लगा सकें और आंशिक दृष्टिवाले बच्चों के लिए, जो सार्वजनिक स्कूलो में दी जानेवाली शिक्षा से लाभ नही उठा पाते, अन्य अध्यापकों की आवश्यकता है। अध्यापिका को यह कठिनाई भली भाँति अवगत थी और वह जानती थी कि संतोषजनक परिणाम प्राप्त करने के लिए अन्धो पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए, परन्तु अन्धों के शिक्षक और कार्यकर्ता इस कार्य को सामूहिक रूप से अभी हाल में ही प्रारम्भ कर पाये है।

अध्यापिका अपनी अन्तःप्रेरणा से यह बात जान गई थी कि "जैसे

स्वस्थ दृष्टि एकता स्थापित नही कर पाती वैसे ही विकल दृष्टि भी नही कर पाती ...इसकी उल्टी बात ही सत्य है, यह भिन्नताओं की ही संख्या बढाती है, जिन पर ध्यानपूर्वक विचार किया जाना चाहिए।" स्वयं अपने अनुभव से उसे विश्वास हो गया था कि नेत्र-विज्ञान द्वारा नापी हुई दृष्टि की तीव्रता की अपेक्षा प्रत्येक व्यक्ति की दृष्टि का उसके दैनिक कार्यों के लिए पर्याप्त होना अधिक महत्त्वपूर्ण है। अन्धेपन का व्यक्तित्त्व, दिशा-ज्ञान तथा अभिनवीकरण एवं सृजनात्मक शक्ति पर क्या प्रभाव पडता है, इसके अध्ययन मे उसकी रुचि थी और वह आशाभरी दृष्टि से उस दिन की प्रतीक्षा कर रही थी जब सामान्य मानव-प्रकृति के गंभीर परिशीलन के फलस्वरूप यह सिद्धान्त असत्य सिद्ध हो जायगा कि अन्धो का एक सर्वथा पृथक् वर्ग है। मैं यह सब यह स्पष्ट करने के लिए कह रही हूँ कि मुझे इस बात का खेद क्यों है कि उससे उन विषयों पर यदा-कदा ही परामर्श लिया जाता था जिनके सम्बन्ध मे मेरा ज्ञान वस्तुतः अति प्रामाणिक नही हो सकता था। जैसा वह स्वयं ही कहा करती थी, वह झण्डा लेकर चलनेवाली न थी और एक स्वतन्त्र नारी के रूप में उसे अधिकार था कि वह किसी भी विषय पर चाहे तो बोले और चाहे तो चुप रहे। फिर भी, यदि किन्ही लोगों ने उसके विशाल चिन्तन और कल्पनात्मक विचारों से लाभ उठाया होता, तो उनके इस व्यवहार को मैं अधिक सरलता से समझ पाती। स्थिति जैसी भी है, मै केवल इसी बात से संतोष लाभ कर पाती हूँ कि अन्धों तथा अन्य विकलांगो की भलाई की उसकी इच्छा इस रूप मे पूरी हो रही है कि इन्हें अमरीका मे ही नही अपितु विश्व भर में सच्चे मित्र मिलने लगे हैं।

१६

सन् १९३१ के बसन्त तक, जब कि हम अन्धों की प्रथम विश्व-परिषद् के लिए काम समाप्त कर चुके और इसकी बैठको मे भाग ले चुके, अध्यापिका थककर चूर हो चुकी थी। इसलिए गर्मियों में हम विश्राम करने तथा जिन पत्रो का हम उत्तर न दे पाये थे उनसे निपटने के लिए ब्रिटैनी में कौन-कार्नो नामक स्थान पर चले गये। परन्तु हमे शीघ्र ही मालूम हुआ कि यूगोस्लाविया मे अन्धो के पुनर्वासन के लिए निधि एकत्र करने मे हमारी आवश्यकता है—मेरे लिए वह इस प्रकार का पहला काम था—और अध्यापिका ने इस काम से टलने से इनकार कर दिया। इसके फलस्वरूप जब हम ग्रीष्म के मध्य की गर्मी मे ब्रिटैनी लौटे तो अध्यापिका बीमार पड गई। इसके अतिरिक्त वह अपनी आँखों की क्षीणतर होती हुई ज्योति के कारण दुखी थी और इससे ब्रिटैनी मे हमारा प्रत्येक दिन व्यर्थ चला गया। यूगोस्लाविया जाकर हमे कठोरतम परिश्रम करना पड़ा था और अध्यापिका को यात्रा करना तो सदैव ही दुखदायी लगता था। वह कहा करती थी कि उसमे आयरिश लोगो की सी चचलता, असंगति और परस्पर विरुद्ध बाते होते हुए भी उनकी देश-विदेश घूमने की इच्छा नहीं आ पाई है। "घर, प्यारा घर ही मेरे लिए एकमात्र स्थान है" वह कह उठती, जैसे कि इँगलैण्ड, जो एक वर्ष पहले उसे इतना आकर्षक प्रतीत हुआ था, उसकी स्मृति से लुप्त हो चुका हो। वह फ्रैंच भाषा की बाधा का दुखड़ा रोने लगी, जिसे मैं अन्तर्बाधाओ से बचने के लिए एक ईश्वरीय वरदान सा समझ रही थी।

परन्तु उसने अपने रुचिकर उत्साह से इस बाधा को दूर कर दिया। हमारे किराये पर लिये मकान की देखभाल जो मधुर स्वभाववाली स्त्री करती थी वह अँगरेजी का एक भी शब्द न जानती थी, परन्तु उसके साथ हम बड़ी अच्छी तरह से निभा ले गये। संकेतों के द्वारा, वस्तुओ की ओर इशारा कर बड़ी हँसी उपजानेवाले अनुमान का सहारा लेकर तथा मैं जो थोड़ा-बहुत फ्रैंच और अँगरेजी का एक दूसरी भाषा में अनुवाद कर सकती

थी उसकी सहायता से हमारी मजे से कटने लगी। लूसी हमारी एक अद्भुत मित्र ही नही थी अपितु एक अच्छी रसोइया भी थी। उसका मुख बहुत भावाभिव्यंजक था और अपने ब्रिटैनी के पहनावे मे वह बहुत रंगीन लगती थी। हमारे बीच यथार्थ स्नेह था। उसको चाय पीने में, अपने साथ बैठाने में, जब कभी दिन सुहावना होता तो अपनी आमोद-यात्राओं (पिकनिक) में या ब्रिटैनी के किसी पुराने गिरजाघर को देखने के लिए जाते हुए उसे साथ ले चलने में हमे प्रसन्नता होती थी। उसने हमे बताया कि वह कौनकार्नो से बाहर पच्चीस मील से अधिक दूर कभी न गई थी। और उस नगर को देखने की उसकी हार्दिक इच्छा थी जो उसके स्वप्नो मे फ्रास के इतिहास का ही नही अपितु विश्व भर के सौन्दर्य और कला का प्रतीक था। इसलिए जब हमारा कौनकार्नो से बिदा लेने का समय आया तो अध्यापिका ने पेरिस तक उसे साथ ले चलने की व्यवस्था की। मैंने किसी को इतना आत्मविस्मृत या आश्चर्यविभोर कभी न देखा था जितनी कि लूसी हो उठी। जब हम रैने, प्रासादो से जगमगाते लायर और ओर्लियंस, जहाँ हमने जोन ऑव् आर्क की प्रतिमा के दर्शन किये, जैसे स्थानों से गुजरे। उस शाम को काफी देर मे पेरिस की रोशनियो ने हमारा स्वागत किया। लूसी ने वह रात हमारे साथ बिताई और सबेरे नाश्ते के बाद हमने उसे अपराह्न में उसके लौटने तक, उसे जितना दिखाया जा सकता था, पेरिस का उतना भाग घुमा दिया। नात्रदाम, सीन नदी, जो उस दिन के सुनहरे मौसम मे अपने सुन्दरतम रूप में थी, नैपोलियन की कब्र तथा अन्य ऐतिहासिक स्थानों को देखकर वह आनन्दमग्न होती जा रही थी। ऐसे सहृदय मित्र से बिदा लेना हमारे लिए बहुत कठिन था। अध्यापिका उन साधारण लोगो के प्रति जिनकी सेवाओ अथवा मित्रता को वह बहुत मानती थी, जो अनेकानेक कृपाएँ प्रकट करती थी उनका वर्णन करने में स्निग्ध अवसाद का अनुभव होता है।

मेरे लिए इससे बढ़कर परितोषकारी कार्य और कोई नही है कि मै इँगलैण्ड और स्काटलैण्ड की उस विशाल हार्दिकता का बखान करूँ जिसके साथ उन्होंने हमारा आतिथ्य किया, प्रशंसा की और हमे बाधितों की सहायता के अवसर दिये तथा अन्तत. हमे प्रकृति के स्वास्थ्यकारी प्रभावो के बीच शान्तिपूर्वक विश्राम करने दिया। जब हम सन् १९३२ में स्काटलैण्ड गये ताकि मैं ग्लासगो यूनिवर्सिटी द्वारा सम्मानित की जा सकूँ, तो वहाँ के एक महान् कर्ण-चिकित्सक (औरिस्ट) तथा हमारे पुराने मित्र डा० जेम्स कैर लव ने हमें गुलाबों से घिरी एक रमणीक कुटीर "डैल्वीन" में ठहराया, जहाँ मुझे

अपने भाषण तैयार करने के लिए थोड़ा सा एकान्त मिल जाता था। जब मै इसकी खिड़कियो से झाँकती थी तो मै कलियो को विकसित होते हुए अनुभव-सा कर सकती थी। प्रतिदिन सबेरे मै उद्यान मे चली आती और कभी-कभी अध्यापिका भी मेरे साथ आ जाती और मै अपनी उँगलियों पर "फारगेट-मी-नाट" तथा ऐनेमोन पुष्पो के स्पर्श से, जिन्हे अध्यापिका केवल धुँधले रूप मे ही देख पाती थी, जो अनुभूति प्राप्त करती उसमे वह मेरे साथ हिस्सा बँटाती। उसकी इच्छा थी कि हम तमाम गर्मियाँ कार्नवाल में ही बिताते, जहाँ प्रकृति ने उसके साथ सौन्दर्य की उत्कृष्ट भाषा मे संलाप किया था। परन्तु हमारे कार्य जिस दिशा की ओर मुड गये थे, उसे उसने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिया था, क्योकि ग्लासगो यूनिवर्सिटी मुझे जो उपाधि प्रदान कर रही थी उससे वह अत्यधिक प्रसन्न थी और उसे खुशी थी कि डैल्वीन मे हमें अपने चारों ओर गाती, गुनगुनाती और खिलती वस्तुओं के बीच काम करने को मिला। उसके कल्पना-प्रवण सुझावों के बिना मै उपाधि के प्रचार-कार्य से सम्बन्धित मुलाकातों, चिट्ठियों, तारो और फोटो-चित्रों तथा ग्लासगो यूनिवर्सिटी के अधिकारियो के सम्मेलनों के बाँध को सफलतापूर्वक सँभाल न पाती। पंद्रहवी शताब्दी से ही चमत्कृति विद्वानो के प्रख्यात कार्यो तथा प्रतिभाशाली व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करनेवाली इस गौरवशाली सस्था के भव्य समारोहों से हम तो डर-सी रही थी। परन्तु डॉ० लव में सहानुभूति का चमत्कार था। वे हमारे लिए प्रत्येक कार्य सरल बना सके और अध्यापिका उनके तथा उनकी पत्नी के प्रति बहुत कृतज्ञ थी कि उन्होंने हमारे चारों ओर बुद्धि-सम्मत अभिज्ञता तथा मित्रता का वातावरण तैयार कर दिया। हमें साथ देखकर वे समझ गये कि अध्यापिका कितने अद्‌भुत रूप से मेरा अंग बनी हुई थी। वे उन थोड़े से लोगो मे से थे जो हमारे दोनों के जीवनों के अन्तरावलम्बन को समझ पाये।

पहला आमन्त्रण स्वीकार कर लेने के बाद, हमारे लिए यह उचित नही था कि हम दूसरो को अस्वीकार कर देते, और हम यथाशक्ति जो कुछ कर सकते थे, हमने किया। हमे भाँति-भाँति की मनोरंजक बाते करने और आकर्षक व्यक्तियों से मिलने के लिए कहा जाता। मै अन्धों और बहरों की उन संस्थाओं को देखना चाहती थी जिनके विषय मे मैं पढ़ चुकी थी और जो मुझे अपने प्रेम की सौगाते मेरे बचपन से ही पहुँचाते रहे थे। इनमें से प्रथम थी ऐडिनबर्ग में बहरों की संस्था, जिसका स्मरण मुझे विशेषतः इसलिए है कि स्काटलैण्ड के शिक्षा-विभाग के अधिकारी श्री डब्ल्यू डब्ल्यू मैक्कैचनी अध्यापिका

के विषय मे बड़ी वाग्मिता तथा विदग्धता के साथ बोले थे। उनमें परोक्ष दर्शन की वह शक्ति थी जो मुझ पर लादी जाती हुई अविचारित एवं अज्ञानपूर्ण प्रशंसाओ के पार देख सकी और मेरे जीवन का त्राण करने तथा इसे रूप और आकार का प्रदान करने में अध्यापिका की लगन और अध्यवसाय को देख सकी। ऐसे सूक्ष्म विश्लेषण के शब्द प्रायः सुनने को नहीं मिलते। जब वे बोल रहे थे उस समय मैंने अनुभव किया,

जैसे पुनः देवगण पुकार रहे हों
किसी होमर के भूतकाल से।

सचमुच उस दिन श्री मैक्कैंचनी ने हमारे संघर्षो और विजयों को स्वर्गीय गौरव से भूषित कर दिया। डैल्वीन छोड़ने के बाद हम लन्दन गये, जहाँ हमने प्रतिदिन तीन, चार या पाँच समारोहों में भाग लिया और मुझे इस बात की अद्भुत स्मृति बनी हुई है कि अध्यापिका मेरे अनेक भाषणों की व्याख्या करने में क्लान्ति और घबराहट से कैसे संघर्ष करती थी। यहाँ हमें भिन्न-भिन्न प्रकार के समारोहों में भाग लेना पड़ा, जैसे लोक-सभा मे सहभोज, बकिंघम पैलेस में एक सुन्दर गार्डन पार्टी, जहाँ अध्यापिका, पौली और मैंने राजा जार्ज पंचम और रानी मेरी से भेंट की, हैम्पटन कोर्ट देखने जाना और अन्धों की राष्ट्रीय संस्था में उपस्थित होना, जिसके तत्कालीन अध्यक्ष श्री मैक जी ईगर तथा उनके सेक्रेटरियों ने लन्दन के हमारे व्यस्त कार्यक्रम से निपटने में सहायता की। श्री ईगर एक दूसरे प्रमुख शिक्षक थे जिन्होंने अध्यापिका के प्रति उत्साहपूर्ण प्रशंसाभाव और मित्रता प्रकट की। हमने एक दिन लैदरहैड में अन्धों के रायल स्कूल में बिताया जहाँ इस स्कूल के प्रिन्सिपल श्री ई० एच० ग्रिफिथ्स तथा अन्य लोगों ने हृदयस्पर्शी, सुन्दर शब्दों मे अध्यापिका का सम्मान किया। काश, अमरीका के लोग लैदरहैड में अध्यापिका के प्रति कहे गये तत्त्वदर्शी शब्दों और अन्धे-बहरों के सम्बन्ध में उच्चरित रचनात्मक विचारों को सुन पाते। परन्तु जगह-जगह दौड़ते फिरना हमारे लिए अपनी शक्ति का अतिक्रमण करना था और जब हम इससे निपट पाये तो अध्यापिका को कंठ रोग ने आ घेरा और पौली तथा मुझे भी इसके लिए क्लान्ति का दंड मिला। डा० के विचार से अध्यापिका के लिए अधिक उँचाई-वाला स्थान लाभकारी था। इसलिए हम स्कॉटलैण्ड के पहाड़ी प्रदेश में चले गये।

इस उत्तेजित, उद्विग्न स्थिति में हम जल्दी-जल्दी बढ़ते हुए टेन नामक एक पहाड़ी गाँव में पहुँचे जहाँ पौली का भाई और उसका परिवार छुट्टी मना रहे

थे। यह शिकार खेलने और मछलियाँ पकड़ने का मौसम था और कुछ समय तो हमारे मन में यही आशंका बनी रही कि यहाँ हमें विश्रान्ति प्राप्त न हो सकेगी, परन्तु अन्ततः हमने राश शायर में म्योर आव ओर्द के समीप ऐरकैन में एक किसान की कुटिया को अपना निवास-स्थान बनाया। तब मैने ऐसा अनुभव किया जैसे मेरी पीठ पर लदा भार उतर गया हो। स्काटलैण्ड की पहाड़ियो पर बिखरे बैगनी, सुन-हले और नीले रंगो को देखना भर ही अध्यापिका के स्वास्थ्य-सुधार के लिए मन्त्र जैसा प्रभावकारी था। हम केवल इतना चाहते थे कि हमे मेरी डाक से निपटने के लिए एकान्त मिल जाये, परन्तु साथ ही हम अपने चारों ओर बिखरे सौन्दर्य से भी वंचित न रहना चाहते थे। वहाँ वे सब आकर्षण उपस्थित थे जो किसी प्रकृति-प्रेमी को प्रसन्न करते हैं—विशाल धान के खेतों मे एकान्त, खिले बैगनी फूलों से भरे ऊजड़ प्रदेश और झरनों का संगीत। इस निस्तब्धता में, जिसे केवल ऐंगुस मवेशियों के राँभने का स्वर, भेडों की मैं-मैं और अनेक पक्षियों के कूजन ही भंग करते थे, अध्यापिका आनन्द-विभोर हो जाती। यहाँ मै भेड़ चरानेवाले की सी लाठी लेकर एक पुरानी दीवार के सहारे, जो बाँज (ओक) के पेड़ों, विटी की झाड़ी, फोरग्लोबों और सुनहरे ब्रमों की झाड़ियों से, जो मधुर सुगन्ध की वर्षा करती और जिनके पोरे मेरी उँगलियों मे मधुर कम्पन उत्पन्न कर देते, घिरी हुई थी, अकेली घूम सकती थी। जब अध्यापिका और मै खेतों में घूमते होते और स्कौटी हमारे पीछे-पीछे आता होता तो अध्यापिका मुझे बताती कि यह कुत्ता, बटेरो और ग्रूसों, तीतरों, सारिकाओं और भूरी बतखों के झुण्डों को किस तरह चौंका देता है। जब अध्यापिका की श्वास-पीड़ा काबू में आ गई तब हमने मोटर में देहात की सैर की, जिससे हमें बड़ी स्फूर्ति मिली, परन्तु बहुत जल्दी ही हमारे अपनी काम-काज की दुनिया के बाहर सम्मोहक वातावरण में बिताये जानेवाले ये दिन समाप्त हो गये और हमारी कर्त्तव्य-चेतना हमे न्यूयार्क लौटा ले चली, जहाँ हमारे जाड़ों के कार्य-क्रम की योजना बनाई जा रही थी।

मैं जानती थी कि अन्धों के कल्याण का कार्य बड़ी तेजी से संयुक्त राज्य अमरीका के बाहर के देशों में फैल रहा था और अन्धों की अमरीकन फाउन्डेशन को अपने कर्त्तव्यों के निर्वाह में समर्थ बनाने के लिए बहुत धन एकत्र करने की आवश्यकता थी। इस वर्ष के दौरों में भाषणों के काम से निपटने और प्रेसवालों के प्रश्नों का जो प्रायः उत्साहशून्य होते थे, उत्तर देने का काम पौली और मुझ पर ही रहा, सिवाय इसके कि फाउन्डेशन के एक आदमी से हमें जो कुछ थोड़ी-बहुत सहायता मिली हो। अधिकांश रिपोर्टर समझते थे कि अन्धों की सहायता

करने का काम अब भी बहुत सरल है यदि हम केवल इतना बतला दें कि उन्हें किन-किन वस्तुओं की आवश्यकता है। ऐसे रिपोर्टरों से भेंट होने पर मुझे अध्यापिका के व्यंग भरे उत्तरों का अभाव खटकने लगता। परन्तु मैंने तरह-तरह से समाचार-पत्रों मे यह समझाने की चेष्टा की कि अन्धो की सेवा का कोई एक सुनिश्चित सूत्र नही है, कुछ मे अन्यों की अपेक्षा कुछ अधिक दृष्टि होती है, और जितने अन्धे है उनको उतने ही भिन्न-भिन्न प्रकार की सहायताओं की आवश्यकता होती है। मेरे हृदय मे वेदना होती जब मै यह सोचती कि फारेस्ट हिल के मकान में अकेली अध्यापिका अधिकांश समय तकलीफ पाती होगी, जब उसे पढ़ना न चाहिए तब भी पढती रहती होगी और उसे कुत्तों की देखभाल करनी पड़ती होगी। हमारे पास नौकर न थे, और मुझे विस्मय होता कि वह भोजन कैसे बनाती होगी—या कही वह भोजन के बिना ही न रह जाती हो। अनेक बार मै रात मे यह सोचते-सोचते जागती रहती कि उसके जीवन को कैसे सुखी बनाया जाये। प्रायः उसके अकेलेपन के विचार से उद्विग्न होकर और यह सोचकर कि उस पर न जाने क्या आफते पड़ रही होंगी, पौली और मैं दूर की यात्रा करने के बाद आधी रात मे फारेस्ट हिल लौट आतीं और लौटकर हम देखती कि वह अभी जगी हुई है और हमारी आशंकाओं पर हँसने के लिए तैयार बैठी है, लेकिन वह हमे बेवकूफ न बना सकी। हम जानती थी कि उसकी दुर्बलता बढ़ती जा रही थी, परन्तु वह यह सुनने के लिए तैयार न थी कि हम उसकी देख-भाल करने के लिए अपने कार्य-क्रमो को स्थगित कर दें।

मेरे लिए संतोष की बात यही थी कि स्काटलैण्ड की रमणीयता उसकी आत्मा को इस प्रकार आच्छादित कर लेती थी जैसे कोई पक्षी अपने अण्डों को अपने पंखों से ढक लेता है और पौली और मैंने फाउन्डेशन के लिए अपने दौरे को यथासंभव पूरा कर लिया और तब उसे शीघ्र ही जून १९३३ मे पुनः दक्षिणी ऐरकैन में किसान की कुटिया में ले चले। पहले तो उसकी हालत सुधरती जान पड़ी और मै सोचने लगी कि कोई भी वसन्त या ग्रीष्म उस समृद्धि और स्निग्ध मधुरता को प्रकट नहीं कर सकती जिसका अनुभव मैं उसके जीवन की पतझड़ मे कर रही थी। मधुर आशा हमे इसी तरह नियति के अँधेरे क्षणो और टेढ़े-मेढ़े रास्तों से ले चलती है।

कैलेडोनिया के आकर्षणो ने अध्यापिका को पुनः ज्वार के समान आप्लावित कर दिया और उसके साथ-साथ मै भी यह अनुभव करने लगी कि इससे बढ़कर सम्मोहक, शान्तिमय या स्वास्थ्यकारी प्रभावों से पूर्ण देश संसार में दूसरा न था। उस समय वह उस पहाड़ी प्रदेश के शान्तिमय वातावरण में शान्त और

विश्रान्त रहने मे समर्थ हो रही थी। वह पंछियो के गान सुनना पसन्द करती थी और जब वे दरवाजे के पास आ जाते तो वह उनके लिए भोजन के टुकड़े फेकती। हीदर-गुल्मों में वह पुनः आनन्द का अनुभव करने लगी और अपने मस्तिष्क में पहाड़ों और झरनों के उस सौन्दर्य का चित्र खीच लेती, जिसे उसकी आँखो पर घिरता हुआ पर्दा उससे दूर करता जा रहा था। चाँदी जैसे चमकते भूर्ज-वृक्षों, रोनन वृक्षों की पक्तियों के बीच तथा लार्क पक्षियों के संगीत एव हौथौर्न गुल्मों के विकास मे उसे जो आनन्द मिल रहा था वह अनिर्वचनीय था। यदा-कदा वह मोटर मे लम्बी सैर का प्रबन्ध कर पाती, जिसमें उन्मुक्त वातावरण हमारी आत्माओं के बीच अकथनीय गम्भीर सहानुभूति का ताना-बाना बुन देता। ऐसे क्षणों में उस चेतना मे उल्लासित होती जो उसने मुझे प्रदान की थी—

हरी-भरी धरती वायु के लोक के बीच फिरती
औ' स्नान करती शून्य की दीप्ति में।

. . . .

औ' सूर्य एक दूर मौन के खोल मे
भर रहा रंग प्राचीर में मेरी . . . . .

मेरा विश्वास है कि यहाँ का जीवन उसे जो इतना आनन्दमय लग रहा था उसका कारण यह था कि यहाँ उसे यह अनुभव हो गया था कि वह एक सहृदय, करुणापूर्ण जगत् के बीच है। अनेक मित्र, जिनसे हम एक वर्ष पहले मिले थे, हमारी कुटिया में हमसे भेंट करने आये और उनकी हार्दिकता, उनकी समझदारी तथा उनकी यथार्थ कृपा एवं आतिथ्य की स्मृतियाँ उसके लिए बहुमूल्य बन गईं। अनेक वर्षो तक ऐन सलिवाँ मेसी को निरन्तर सतर्क, कटि-बद्ध और सावधान रहना पड़ा था और अब इन मित्रों की विवेकपूर्ण सहानु-भूति का स्पर्श पाकर वह विश्रान्ति का अनुभव कर रही थी। वह हममें उभरने-वाली उस जीवनी-शक्ति की चर्चा करने लगी जो हमारी अपेक्षा न रखते हुए स्वयं अपने आपको अभिनवरूप मे व्यक्त करती है, अपनी क्षतियों की स्वयं पूर्ति कर लेती है, हमारे हृदयों में आशा का संचार करती है, हमारी मानसिक दृष्टि को तीक्ष्ण करती है—"और यह सब मेरे साथ उसी रूप में क्यों नही हो रहा है, जैसे पहले हुआ करता था।" उसने मेरे अवसाद का अनुमान लगाकर उसे दूर करने के लिए कहा। बीते दिनों की तरह यहाँ भी वह आतिथ्य-सत्कार और शान-शौकत के प्रदर्शन में जुट गई। पौली के परिवार के लोग प्रायः हमसे मिलने आ जाते थे। डा० और श्रीमती लव, श्री ईगर तथा अन्य लोगों ने हमारे साथ अनेक दिन बिताये। इनकरनेस, म्योर ऑव् ओर्द तथा आस-पास के अन्य स्थानो

के हमारे मित्र हमेशा हमारे लिए कुछ न कुछ सुन्दर आयोजन करते रहते थे या अध्यापिका को प्रसन्न करने और उसकी स्नेह-पूरित प्रशंसा करने मे व्यस्त रहते थे। प्रेम के ऐसे सक्रिय उपचार का दर्शन मैं कभी-कभी ही कर पाई हूँ। किसानों के प्रति अध्यापिका अत्यधिक सद्व्यवहार करती थी, जैसे कि वह निम्न वर्ग के लोगो के साथ सदा ही करती थी और इन लोगों का सीधा-सादा परन्तु हार्दिकता से भरा आतिथ्य का स्मरण कर मुझे बहुत तृप्ति का अनुभव होता है।

पौली, उसका भाई और मै अध्यापिका को जलयान मे और्कनीज और शैटलैण्ड ले गये। मुझे आशा थी कि इससे उसे लाभ होगा। हम और्कनी मे रुके और अध्यापिका के सिवाय हम सब ने स्कारा बे मे पुराने प्रस्तर-युग के अवशेषो का निरीक्षण किया। हम ढलुवॉ, सकरी सीढ़ियो से नीचे उतरे और अपने भद्देपन के कारण मै दीवारो के बीच एक ऐसे स्थान मे जा फँसी जहॉ मै न तो घूम पाती थी और न नीचे की ओर ही बढ़ पाती थी। कुछ क्षणो तक तो मुझे ऐसा आभास हुआ जैसे मै यहाँ हमेशा के लिए सुदूर भूतकाल के रहस्यों में जकडी गई हूँ। सौभाग्य से लोगो ने मुझे यहॉ से निकाल लिया और वे मुझे नीचे के कमरो मे ले गये। छतें इतनी नीची थी कि हमे झुककर चलना पड़ रहा था। मै उस अतीत के लोगों की उस निपुणता से बहुत प्रभावित हुई जिससे उन्होंने चट्टानों को तराशकर अपने बिछौने, आलमारियॉ और कपड़ों, अस्त्रों और गहनों के लिए खाने बनाये थे। मैंने उन खानो का, जिनमे वे मछलियो तथा अन्य खाद्य-पदार्थों को नमक मे रखते थे, और उन अँगीठियों का जिनके ऊपर छत मे एक छेद धुऑ निकालने के लिए बनाया गया था, स्पर्श किया। और्कनी की स्मृतियॉ मेरे आनन्द का विषय है, क्योंकि वे द्वीप क्लोवर की सुगन्ध से महकते थे।

इस समुद्र-यात्रा के लिए रवाना होते समय अध्यापिका ने निश्चय किया था कि वह इसका आनन्द लेगी, परन्तु समुद्र मे सूर्य की चमक उसको असह्य प्रतीत हुई, इसलिए जब हम सब डैक पर बैठे रहते, वह लेटी रहती और सो जाती। मुझे आशंका होने लगी कि वह शैटलैण्ड द्वीपो के विशिष्ट विकिंग वातावरण की अनुभूति न कर सकेगी, परन्तु इस अवसर का आनन्द लेने के लिए उसने अपने आपको सँभाल लिया। जब हम लैर्विक के बीच से चल रहे थे, वह वहॉ के विचित्र मकानों और छतो से लटकती मछलियों को आधा ही देख पा रही थी और बाकी कल्पना द्वारा इन्हे चित्रित कर रही थी। जब मैं शैटलैण्ड के छोटे-छोटे पशुओं—टट्टुओं, भेड़ों और कुत्तों का स्पर्श करती तो

उसे बड़ा आनन्द मिलता। जब हमने मोटर बोट में अनेक द्वीपो का चक्कर लगाया तो वहाँ गल, स्कुआ तथा पफिन पक्षियो के चहचहाते झुडों से, जो हमे घेर रहे थे, उसकी उँगलियाँ भावो की उत्तेजना से थिरक उठी। यहाँ सूर्य को दिन-रात अपनी समस्त शक्ति से चमकते देखकर और प्रबुद्ध लोगो को "सबेरे" के थोड़े से घण्टों को छोड सारे समय बाजारो मे सक्रिय देखकर हमें विचित्र भावानुभूति हुई।

हम और्कनीज के रास्ते लौटे। जब हम इनसे होकर गुजरे तो अध्यापिका का मुख एक अप्रत्याशित आनन्द से उद्भासित हो उठा। समुद्र मे कोमल· रंगों और गहरी छायाओं के मिश्रित दृश्य के बीच सूर्यास्त हो रहा था और वह मन्त्रमुग्ध-सी तब तक इस दृश्य को निहारती रही जब तक कि इसकी अन्तिम आभा तिरोहित न हो गई। यह अन्तिम समय था जब वह धरती या समुद्र के बीच सौन्दर्य की एक अकिंचन निधि बटोर सकी थी। उसकी कल्पना के आन्तरिक कोष को तो उससे कोई छीन न सकता था और उसका हृदय उसके चारों ओर अतुलनीय प्रकाश विकीर्ण करता रहा, परन्तु उसकी अत्यधिक कठोर इच्छा-शक्ति ने ज्योति की उस क्षीण रेखा को समाप्त कर दिया था जो अन्यथा अन्त तक उसकी सेवा करती और अब उसकी वह स्वतन्त्रता जाती रही जो उसके लिए इतनी बहुमूल्य थी जितना किसी रानी को अपना सिहासन भी न रहा हो।

पतझड़ आ गई। मैंने अनुभव किया कि अध्यापिका के स्वास्थ्य मे सुधार न हुआ था। इसलिए मैंने फाउन्डेशन से दौरो के काम से छुट्टी ले ली। मैंने ठान लिया था कि उसके स्वास्थ्य-सुधार के लिए मै कुछ भी उठा न रखूँगी। हम बडी तत्परता से उसी पुरानी किसान की कुटिया में जा बसे और यदि ये शब्द सही अर्थ प्रकट कर सकें तो मै कहूँगी कि इस समय मैं जहाज में डाँड़ खेनेवाले एक ऐसे दास के समान थी जिसे अभी-अभी मुक्ति मिली हो। वास्तव मे मुझे अपने कालेज के दिनों के बाद कभी सचमुच की छुट्टी न मिली थी। मैंने अपने आपको फाउंडेशन के काम के लिए अर्पित कर दिया था, परन्तु इसने मेरी और अध्यापिका की सामर्थ्य से साहित्यिक कार्यो, भाषणों तथा वौदविल के कार्यक्रमों के रूप मे भारी कर वसूल किया था और अध्यापिका की आँखों की वेदना तथा अस्वास्थ्य का विचार मुझे वर्षो तक सताता रहा था। न्यूयार्क का जीवन और इसके साथ-साथ चलनेवाला प्रचार-कार्य मुझे—जो मैं एक लम्बे-चौड़े दक्षिणी खेत में जन्मी और पली थी—कभी रुचिकर न था और मेरी आत्मा स्काटलैण्ड के पहाड़ी प्रदेश में और अधिक दिन बिताने के

लिए पुकार उठती थी। जब फाउंडेशन ने हमें खबर भेजी कि उसने हमें एक वर्ष तक विश्राम करने की अनुमति दे दी है तो मुझे ऐसा लगा जैसे यह कोई परियो की कहानी हो। तब कुछ दिनों तक मै घण्टो तक चरागाहों मे चुपचाप पडी रहती और डब्ल्यू एच० हडसन की, लेखन के परिश्रमपूर्ण कार्य-काल के पश्चात्, कुछ न सोचने की आदत का अभ्यास करती। मै शान्ति के विपुल प्रवाह में अवगाहन करने मे सफल हुई, जिसने मेरे परिश्रान्त मस्तिष्क को अभिनव स्फूर्ति प्रदान की और कुछ सीमा तक मेरे थके हुए स्नायु-जाल को विश्राम दिया। कृतज्ञतापूर्वक मै "गुल्म" को, छोटी सी नदी औरिन को और सूर्य को, जिन्होंने मुझे अभिनव सद्भावनाओ से आप्लावित कर दिया था, चूमना चाहती थी। खेतों मे घूमते हुए मेरे बालो मे जो ब्रेकन फूल उलझ जाते थे और मेरी ट्वीड की पोशाक में जो हीदर चिपट जाती थी उससे मै प्रसन्न होती थी। हमारे लिए यह एक विस्मय की बात थी कि इन्वर्नेस से, जो झीलों, नदियों के मुहानो और पुराने महलों का नगर था, केवल अठारह मील दूर रहने पर भी हम पूर्ण एकान्त का आनन्द ले रहे थे।

परन्तु जाडे की मौसम नजदीक आ रही थी और अध्यापिका को कष्ट-कारी पंगुता का अनुभव होने लगा था। क्रिसमस के समय हम ग्लासगो गये और वहाँ कुछ सप्ताह ठहरे। डा० लव ने अध्यापिका के लिए चिकित्सा की सुन्दर व्यवस्था कर दी। उनकी श्रद्धा एवं स्नेह-पूरित मित्रता, जिसमे उन्होंने हमे लपेट लिया था, हृदयस्पर्शी थी। परन्तु भाग्य ने अध्यापिका को कष्ट-मुक्त करने के सब प्रयत्नों को विफल कर दिया और हम अवसन्न मन से दक्षिणी ऐरकैन लौट गये। एक वर्ष तक वह कारबंकल रोग का शिकार बनी रही और पौली, जिसे स्वयं एक दीर्घ विश्राम की आवश्यकता थी, निरन्तर उसकी परिचर्या मे उसको पढ़कर सुनाने मे, घर की व्यवस्था करने मे और मेरे शैटलैण्ड कुत्ते डिलियास तथा लेकलैण्ड टैरियर कुत्ते मेडा, जो हमेशा हिरनों या खरगोशो के शिकार मे लगा रहता था, के पीछे दौड़ने में लगी रही। ये दोनो बदमाश अपनी जंगली उछल-कूद के बाद लौट आते, अध्यापिका के बिछौने पर कूद पड़ते और उसके भोजन मे हिस्सा बँटाने लगते। डिलियास जिसका बदन भूरा, गर्दन का पट्टा तथा पंजे सफेद और जमीन पर लटकता पौम्पौन था, तथा मेडा, जिसका बदन काला परन्तु सिर धुएँ जैसा नीला और आँखे चमकीली थीं, के रहने से उसे ऐसा सन्तोष मिलता था कि वह कहती थी कि इनके बिना वह जाड़ों के दिन ठेल न पाती।

जब अध्यापिका बहुत बीमार न होती, वह मुझे निबन्धों के विषय सुझाती

जिन्हें मै "टावर्स मैग्जीन" के लिए लिख रही थी। मै उसकी पहली जीवनी भी लिख रही थी, जो बाद में वैस्टपोर्ट में मेरे पहले मकान मे जल गई। लम्बे दिनों और रातों मे बाध्य होकर निष्क्रिय पड़े रहने से उसमे ऐसे विचार उत्पन्न होते जो संसार के झुलस देनेवाले सूर्य से दूर भागते हैं। अपनी अत्यधिक सूक्ष्म संवेदना से वह उन शक्तियों के दर्शन करती जो हम सब में निवास करती है, यद्यपि धरती के शोरगुल हमे उनकी ध्वनि सुनने नही देते। वह उन बातो पर कम ध्यान देने लगी जो उसे कठोर बना देती थी और उसकी दूसरो के कष्टों की संवेदना पहले से बहुत बढ़ गई। इस प्रकार वह उस जाड़े की मौसम मे घिसटती रही, जो न्यूयार्क की मौसम के नाप से तो छोटी थी परन्तु नई, कोहरे, पाले, कभी-कभी बरफ और आर्कटिक से आनेवाली हवाओं के कारण अधिक तीखी थी। यद्यपि बरफ कभी-कभी ही पड़ती थी, परन्तु हम बाहर जाड़े मे भेड़ो का करुण स्वर और ऐगुस मवेशियो के रॉभने का लम्बा, शिकायत भरा स्वर सुन सकते थे।

वसन्त के प्रारम्भिक दिनो मे अध्यापिका मेरे साथ वायलैट, हेयरबेल तथा डैफाडौनडिली फूलों के बीच कुछ कदम चल सकी और मेरी तरह उसने भी इन फूलो का स्पर्श किया और हिज्जों की भाषा मे मुझसे कहा, "हैलेन, तुम्हारे लिए यह कितने सौभाग्य की बात है कि तुम हमारे उद्यान मे घूम सकती हो और इसके पुष्पों के विपुल विकास का अनुभव कर सकती हो।" बीच-बीच मे जब वह बीमारी से आराम पाती तो कुछ मित्रो को पार्टियों मे जिनके लिए वह प्रसिद्ध थी, आमन्त्रित करती और इन लोगों की हार्दिकता की सूर्य-रश्मियों तथा इनकी समझदारी के विश्रान्तिदायी ओसकणो से हम सबकी सुनहरी घड़ियाँ बीततीं। परन्तु एक अपरिहार्य आशंका मेरे मन मे बस गई थी।

फाउंडेशन ने युवक अन्धो के लिए बोलती-किताबों के आविष्कार की घोषणा की थी और यह इच्छा प्रकट की थी कि इस नये प्रकार के "पठन" के लिए मशीने तैयार करने के लिए निधियाँ एकत्र करने मे मै भी भाग लूँ। अध्यापिका इस मनोरंजक विधि के मूल्य को समझ गई। जो अधिक वयस्क अन्धो के लिए बेल प्रणाली की अपेक्षा, जिसे उनमे से अधिकाश सरलतापूर्वक या आनन्द के साथ न पढ़ पाते थे, अधिक सरल थी, और उसने मुझसे आग्रह किया कि इस नवीन प्रणाली के लिए आर्थिक साधन जुटाने में मै भी हिस्सा बटाऊँ। उसके इस आग्रह का पालन मैंने अगले जाड़ों में किया। फिर भी मैंने उसके असन्तोष को भाँप लिया। मै जिस अनुदान-निधि को एकत्र कर रही थी

उसे वह पूरा हुआ देखना चाहती थी। इसके अतिरिक्त, वह इसलिए भी निराश हुई कि बहरे अन्धों के लिए जिनका भार, जैसा कि वह जानती थी, मेरे ऊपर था, कुछ भी न किया गया था। फारेस्ट हिल्स में उसने एक अन्य अन्धे-बहरे शिष्य को शिक्षित कर अपने लिए एक नवीन जीवन का निर्माण करने के उद्योग पर विचार किया था। जब लुई बिले, कैन्टुकी में एक परित्यक्त बहरा-अन्धा बच्चा मिल गया तो उसके मन मे इस बच्चे को प्रकाश और आनन्द का संगीत प्रदान करने का विचार ऐसे दौड़ने लगा मानो उसके शिथिल शरीर मे अमर यौवन की दीप्ति ने प्रवेश कर लिया हो। बहुत अनिच्छापूर्ण तर्क-वितर्क के बाद ही हम लोग, जो उसके गिरते हुए स्वास्थ्य से परिचित थे, उसे इस बच्चे को ग्रहण करने से विरत कर सके। परन्तु उसका अन्वकार इस इच्छा से स्पन्दित होता रहता था और वह मुझे प्राय. दुनिया भर मे मुक्ति की प्रतीक्षा करते हुए बहरे-अन्धों का स्मरण कराती। "उनकी ओर अपनी बाँह बढ़ाओ, उनमे अपने आपको भूल जाओ और उनके हितों के प्रति भक्ति रखो। हैलेन, तुम्हारी ओर से यही मेरा सच्चा स्मारक होगा। उनके और तुम्हारे बीच भले ही कोई दीवार खडी हो, तुम हथौड़े की चोट से इसका एक-एक पत्थर अलग कर इसे गिरा दो, इस उद्योग में भले ही तुम समाप्त हो जाओ, जैसे फ्लोरेंस नाइटिंगेल की कुछ नर्सें थकावट के कारण मर गई थी।"

घर लौटने पर अनेक भारी-भारी काम हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। निरन्तर के अभ्यर्थनापत्रो तथा अन्य डाक के अतिरिक्त मुझसे न्यूयार्क के आस-पास बोलती-किताब के सम्बन्ध में होनेवाली बैठकों तथा चाय पार्टियों में भाग लेने का आग्रह किया जाता। पुन: पौली और मुझको अध्यापिका के बिना इन समारोहों में जाना पड़ा और जब कभी मुझे उसके साथ बैठने का आनन्द मिलता भी तो उन क्षणों में मुझे यही आशंका घेरे रहती कि मै अन्धो के किसी परमावश्यक कार्य की उपेक्षा तो नही कर रही हूँ। अपने अध्ययन-कक्ष मे भी जो उसके कमरे की बगल मे था, मुझे ऐसा लगता जैसे मै उससे बहुत दूर जा पड़ी हूँ, परन्तु अब हमे उसे अकेला न छोड़ना पड़ता था। हर्बर्ट हास नामक एक युवक हमारे साथ आ गया था और उसे हम बहुत पसन्द करती थी। वह बहुत प्रसन्नहृदय और मित्रतापूर्ण था। उसमें विनोद की प्रसन्न प्रवृत्ति थी। उसका हँसमुख चेहरा लाल सेब जैसा था और उसमे विभिन्न क्षमताएँ थी। हमारी अनुपस्थिति मे वह अध्यापिका का मनोविनोद कर लेता था और उनके बीच गम्भीर स्नेह उत्पन्न हो गया था। बाद में वह हमारे घर के एक कमरे मे रहने लगा और एक वास्तविक घर पाकर उसने अकथनीय प्रसन्नता

का अनुभव किया। उसके माता-पिता मर चुके थे। उसका पिता संगीतकार था और माँ एक सामान्य परिचारिका। अपनी माँ से उसने आश्वस्त करने-वाला स्पर्श प्राप्त किया था जिसे अध्यापिका पसन्द करती थी। वह घर की व्यवस्था करता, घरेलू कामों का वह अच्छा प्रबन्धक था, जिससे पौली के कन्धों से बहुत सा भार उतर गया। वह कार चलाता था—जब हमने एक कार ले ली—आफिस का काम समझता था और मेरे टाइपराइटर तथा ब्रेल मशीन की मरम्मत कर लेता था। उसने मुझसे हिज्जो द्वारा बोलना और ब्रेल मे लिखना भी सीख लिया, जिससे वह अन्धो से सम्बन्धित निबन्धों और कागज-पत्रो को, जिनकी नकल कराने को इससे पहले पौली इधर-उधर भेज देती थी, वह तत्काल नकल कर लेता था। हमारे कुत्ते उसको चाहने लगे थे और अध्यापिका के लिए इससे अधिक प्रसन्नता की कोई बात न थी। अपने नानाविध व्यवहारो से हरबर्ट ने यथार्थ लोकप्रियता प्राप्त कर ली थी। वह बुद्धिमान्, ईमानदार, परिश्रमशील था और उसकी आकर्षक मुस्कान, स्पष्ट भाषण तथा मजाको और कहानियो के प्रति उसका चाव उसे सभी परिचितो के आनन्द के विषय थे।

इसी बीच पौली और मैने उन लोगो से भेंट की जिनसे हमे आशा थी कि वे बोलती-किताब मे रुचि लेगे। प्रिय दार्शनिक और हास्य-प्रणेता बिल रागर्स ने रेडियो से एक हार्दिक अभ्यर्थना प्रसारित की। मैने श्रीमती विलियम मूर से, जिसकी अन्धो के प्रति सच्ची सद्भावनाएँ अध्यापिका की ओर मेरे लिए बहुमूल्य रही थी, अनुदान की एक भारी रकम प्राप्त की। अन्य अनेक छोटे-छोटे अनुदानों की सहायता से फाउडेशन एक प्रयोगशाला खोलने मे समर्थ हुआ, जिसमे नये आविष्कार के प्रयोग किये गये, अन्तत इस उद्योग का महत्त्व स्वीकृत हुआ और काग्रेस ने बोलती किताबो तथा साथ ही उभरे अक्षरों मे छपे साहित्य के लिए उदारतापूर्वक धन-राशि स्वीकृत की।

सन् १९३५ के वसन्त मे अध्यापिका अपने विभिन्न रोगो के उपचार के लिए न्यूयार्क में डाक्टर्स हास्पिटल मे गई और सबसे अच्छा यह समझा गया कि उसे चुपचाप रहने दिया जाय। मुझे उससे केवल कुछ मिनटों तक ही मिलने दिया जाता था, क्योकि वह मेरे काम के सम्बन्ध मे उत्तेजित हो जाती थी और इसका उस पर बहुत बुरा असर पड़ता था। वह परिश्रान्त हो चुकी थी और जैसा उसने बाद मे मेरे सामने स्वीकार किया, कभी-कभी वह अपने अन्धेपन के प्रति व्यर्थ के विद्रोह से उबल पड़ती। "मैने एक नटखट बच्चे के से आचरण किये हैं" उसने कहा, "और मै चॉद को पाने के लिए चिल्लाती

रही हूँ तथा मै स्वयं अपने इस सिद्धान्त से विमुख हो गई कि किसी बाधा को साहस बढ़ानेवाली बात समझना चाहिए।" इसके अतिरिक्त उसके दिमाग में तरह-तरह के विचार एकत्र होते रहते थे, जिन्हे वह मुझसे लेखबद्ध कराना चाहती थी, परन्तु जब मै उसके पास होती, वह इन विचारो को स्मरण ही न कर पाती थी। बेचारी अध्यापिका! उसके लिए किसी सुन्दर कल्पना को या प्रकृति के संगीत में पले विचार को या आत्मा की रचनात्मक शक्ति की महत्ता या भयंकरता को व्यक्त करनेवाले सशक्त शब्दो को खो बैठना अँधेरे मे रहने की अपेक्षा अधिक बुरा था।

उस वर्ष गर्मियो मे पौली, हर्बर्ट और मै उसे गैटस्किल्स ले गये और वहाँ उसने पर्वतो, वृक्षो और झीलो की छाया मे सान्त्वना प्राप्त की। एक बार फिर उसके जीवन के लोभ ने उसकी थकावट को परास्त कर दिया और पौली और मै उसको "उत्साहित करने के लिए" की गई छोटी-छोटी पार्टियों मे अन्यमनस्कतापूर्वक भव्यता का प्रदर्शन करती रही। अतिथियो में फाउडेशन के प्रेजिडेंट श्री मीगेल तथा डा० बैरेन्स भी थे और अध्यापिका के सिवाय हम सब ने कुछ समय ट्रौट मछलियाँ पकड़ने मे बिताया। अध्यापिका ने आग्रह किया कि मै एक पुस्तिका लिखूँ जो साधारण पाठकों के लिए मेरी पुस्तक "माई रिलिजन" (मेरा धर्म) की अपेक्षा अधिक उपयुक्त हो, और अवकाश के क्षणो मे मैने "पीस ऐट इवनटाइड" पुस्तिका लिख डाली।

वह आराम न हुई। बेचैनी उसे परेशान करने लगी—साहसिक कार्यों के प्रति उसका पुराना उत्साह इस समय उसका शत्रु बन रहा था। वह अपने "आनन्द के द्वीप" पोर्टोरीको के बारे मे बाते करती रहती और इच्छा प्रकट करती कि वह किसी ऐसे ही स्थान मे जाना चाहती है। अक्टूबर १९३५ में हम चारो वैस्ट इंडीज मे जमैका की ओर रवाना हुए। उष्ण-कटिबन्धीय उद्यानों, खजूर के पेडों, ढालू पहाडों और रंगीन पुराने गिरजाघरोंवाला यह टापू विचित्र था, परन्तु अध्यापिका को यहाँ पोर्टोरीको के मंत्र-मुग्ध करनेवाले आकर्षणों जैसी कोई बात न दिखाई दी और वह, ओह, कितनी थक गई थी। उसको यह बँधा-बँधाया विचार परेशान करता रहता कि बुढ़ापा मरने की अपेक्षा अधिक कठिन है, क्योंकि जीवन तथा इसके समस्त सुखों को एक साथ छोड़ देना, इनको एक-एक कर छोड़ने की अपेक्षा कम दुखदायी होता है। वह अपने को प्रतीत होनेवाली अपनी पंगुता का दुख मनाने लगी और अपने अन्धेपन को वह अपने बुढ़ापे का लक्षण समझने लगी, परन्तु इसमें मै उसका वास्तविक दुर्भाग्य नहीं समझती। उसका दुर्भाग्य तो वस्तुतः यह था कि बचपन मे उसे वह प्रशि-

क्षण न मिला था और न वह ऐसी मन स्थिति विकसित कर सकी थी जो उसे कहीं अधिक स्वतन्त्रता का उपयोग करने में, बुद्धि-संगत परामर्शो पर ध्यान देने मे और अपनी दृष्टि को विचारपूर्वक उपयोग करने में समर्थ बनाती। मैंने उसकी यह बात तो मान ली कि मस्तिष्क और शरीर का साथ-साथ बूढ़ा हो जाना दुर्भाग्य की बात है, परन्तु मैंने उसे यह भी स्मरण दिलाया कि इस संसार मे ऐसे अनेक युवक हैं जो यद्यपि निर्धनता से दबे हुए न होने पर भी इतने दुर्बल और बूढों जैसे बन गये है कि उनका उद्धार नही हो सकता। मैंने यह बात बहुत बार दुहराई

बद्धिमान् चाहते है प्रेम और जो प्रेम करते है वे चाहते है बुद्धिमानी;
और इस प्रकार सब उत्तम वस्तुएँ उलझकर बुरी बन जाती है।

मै कहती गई, 'परम्पराओ और रीति-रिवाजो को ऐसे लोगो से जो युवक हो या बूढे जिनके हृदयो मे झुर्रियाँ पड़ गई हों और विचारो पर जाले फैल गये हो, मानव के कार्यो को प्रभावित न होने देना चाहिए। अध्यापिका, अपने वातावरण पर तुमने जो विजय प्राप्त की है वह सक्रिय एव विचारपूर्ण स्त्री-पुरुषों के लिए एक वज्र-गर्जना भरी चुनौती है, एक प्रमाण है इस बात का कि वे बाधक निराशावाद और अन्धा बनानेवाले आशावाद के कूड़े-करकट को जितना ही दूर फेक सकेंगे, उतनी ही उनकी एक युवक हृदयो से तथा सत्य एवं आदर्श के प्रति उन्मुक्त बुद्धियो से पूर्ण संसार का निर्माण करने की शक्ति अधिक होगी।"

"काश कि मुझे इसका निश्चित विश्वास होता हैलेन", उसने श्रान्त-भाव से उत्तर दिया "और मै आशा करती हूँ कि तुम अपने देखने और सुनने-वाले मस्तिष्क सहित इस संघर्ष की अग्र-पक्ति में अपना स्थान बनाये रहोगी।"

पुनः पौली और मुझे फाउंडेशन के बजट को पूरा करने के कार्य मे व्यस्त होना पड़ा, और हम घर पर यदा-कदा ही रह पातीं। ऐसे ही एक दुर्लभ अवसर पर जापान में अन्धों के कल्याण-कार्य का प्रधान तकाओ इबाहाशी हमसे मिलने आया। वह अन्धो की समस्या हल करने के अमरीकी ढगो का अध्ययन कर रहा था। अँगरेजी भाषा पर उसका ऐसा अधिकार था कि हम चकित हो गये। वह स्वयं अन्धा था, उसमें कवित्व की दीप्ति और उत्साह भरा था। उसने मुझ पर जोर दिया कि मै जापान चलकर वहाँ के संघर्षरत अन्धों के हृदय में प्रकाश का संचार करूँ। मैंने उससे अध्यापिका की हालत बताई—वह इतनी बीमार थी कि उससे भेट न कर पाई—और मैने कहा कि मै उसे छोड़कर कहीं जाने का विचार भी नही कर सकती। जब अध्यापिका

ने तकाओ के साथ हमारी मुलाकात की बात सुनी और उसे ज्ञात हुआ कि हम तकाओ के भव्य व्यक्तित्व और सुविकसित क्षमताओं से कितनी प्रभावित हुई थीं तो उसने कहा, "यह एक अद्वितीय अवसर है और तुम्हे इसे खोना न चाहिए।"

"परन्तु अध्यापिका, मैं तुम्हारे बिना जा ही नही सकती और क्योकि तुम मेरे साथ नही चल सकती, इसलिए मै यह आमन्त्रण स्वीकार न करूँगी।"

उसने आग्रहपूर्वक कहा, "मै तुमसे याचना करती हूँ, हैलेन कि तुम मुझसे वायदा करो कि मेरे चल बसने के बाद तुम और पौली जापान के बाधितों को प्रकाश प्रदान करोगी।"

"हम प्रयत्न करेंगे, अध्यापिका, परन्तु मै यह सहन नही कर सकती कि हम इसी क्षण अज्ञात मे कूद पड़ने का विचार करें।"

अध्यापिका डा० बैरेन्स को इस बात के लिए तैयार करने की कोशिश कर रही थी कि वह उसकी आँखों की शल्य-क्रिया कर दे। डा० बैरेन्स ने उससे साफ-साफ कह दिया कि उसकी राय मे इससे उसे कोई लाभ न होगा। उसने डा० के गले मे बाँहें डालकर आँसू भरकर प्रार्थना की कि वह एक बार प्रयत्न तो करे। अन्ततः डा० बैरन्स तैयार हो गये और परिणाम वही हुआ जिसका अनुमान उन्होने पहले ही लगा लिया था। अध्यापिका को पहले से कुछ भी अधिक दिखाई न पड़ने लगा। उसको निराश, निरुत्साह, बीमार और वेदना मे बेचैन देखकर हृदय फट पड़ता था। जब वह अस्पताल में थी, ऐलैक्जैण्डर बुलकौट उसके पास आकर्षक टिप्पणियाँ लिख भेजता और प्रतिदिन उसके पास सुगन्धित फूलो के गुच्छे पहुँचाता जिन्हें वह हाथ में लिये रहती। अध्यापिका ने उसके स्वभाव की विचित्रताओ और उसकी विदग्धता का आनन्द लिया था, परन्तु मुझे याद है कि जब वह पहली बार फारेस्ट हिल आया था तो अध्यापिका उससे कितनी लजा रही थी। पहले तो वह समझ न पाई कि इस प्रतिभाशाली, अभिधावनशील और अति प्रतिष्ठित व्यक्ति की उसमे क्या रुचि हो सकती है, परन्तु वह उसके साथ बात करने का तथा उसे पढ़कर सुनाने का आग्रह करता रहा और धीरे-धीरे वह उसके साथ घुल-मिल गई। अध्यापिका की मृत्यु के समय उससे पौलवियरर (शव पर फैलाई चादर का छोर पकड़नेवाला) बनने के लिए कहा गया, परन्तु उसने ऐसे उजड्डपने से अस्वीकार कर दिया जो इस अवसर के प्रतिकूल था। बाद मे मुझे ज्ञात हुआ कि उसने ऐसा इसलिए किया था क्योंकि वह स्वयं को इस सम्मान के योग्य

न समझता था। मै उसका स्मरण अध्यापिका के सर्वाधिक समझदार व्याख्याता के रूप में सदैव अत्यधिक स्नेह के साथ करूँगी।

उसके आराम न होने से हमे जो दुख हो रहा था उसको समझते हुए अध्यापिका ने अपने आपको संयमित किया और पौली से यह पता लगाने के लिए कहा कि हम गर्मियाँ कहाँ बितायेगे। अन्तत: हर्बर्ट हमे मोटर मे लौरेन्शियन पर्वतों के बीच क्यूबेक से कुछ दूर पर कौरनिशे नामक एक गाँव मे ले गया। अध्यापिका इस यात्रा के परिश्रम को न सह सकी। उसे ठंड इतनी तीखी लगने लगी कि वह अपने बिछौने मे ही पड़ी रहती। हमने अपना डेरा जंगल के बीच एक झील के ऊपर एक कैम्प मे डाला। मुझे याद है कि कैसे हर्बर्ट ने एक भी शब्द कहे बिना और खर्चे का ध्यान न देकर जंगल के बीच हमारे कुत्तों के लिए और मेरे प्रतिदिन घूमने के लिए एक रास्ता साफ किया था। मुझे तकलीफ इसलिए हो रही थी कि वह स्थान अति रमणीक था और अध्यापिका के बिना इसका आनन्द लेने मे मुझे खेद हो रहा था। यह भावना कुछ ऐसी थी जिसके लिए वह चिन्तित न थी--किसी वस्तु का पूर्ण आनन्द लेने के लिए हम दोनो का साथ होना आवश्यक होता था। वह सचमुच मुझसे और स्वय अपने आपसे परेशान हो रही थी कि इतने प्राकृतिक सौन्दर्य के बीच भी जिसमे अब उसे कोई आनन्द नहीं मिल रहा था, हम इतनी उदासी का अनुभव कर रहे थे। वह मुझसे कहती कि क्या इस समय वे ही बाते उपस्थित नही है जिन्हे वह प्यार करती थी—मेरे साथ वैगेबौन्डिया (आवारो की दुनिया) के दौरे और प्रकृति की स्वास्थ्यकारी प्रज्ञा के बीच आकर भविष्य की चिन्ताएँ भूल जाना? कितनी असगत और उसके स्वभाव के अनुरूप थी यह बात। हमने मेरा जन्मदिन उसके कमरे मे बिताया और मेरे बाहर से प्रसन्न मुख के पीछे यह आशंका छिपी हुई थी कि कही उसके साथ यह मेरा अन्तिम जन्म-दिन न बन जाय। उसने मुझसे कहा कि जैसे-तैसे जीवन को बनाये रखने के लिए उसे परिश्रमपूर्ण उपाय करने पड़ेंगे, तमाम रास्ता तै कर घर लौटना होगा और अपने आपको एक भिन्न मन स्थिति मे रखना होगा।

उसके ये शब्द मुझे छल न सके। मै समझ रही थी कि वह मरने लगी है, मेरे सहज ज्ञान ने मुझे बताया कि जैसे ही उसको यह निश्चय हो जायगा कि अब उसकी आँखो की रोशनी लौट नही सकती, जीवन के प्रति उसकी रुचि समाप्त हो जायगी, परन्तु अब वह चुपचाप रहने लगी थी। यद्यपि मै उसके साथ विचारों का विनिमय करने के लिए व्याकुल थी, परन्तु मुझे इस अस्पष्ट भय ने रोक दिया कि कही मै उस दरवाजे को न तोड़ बैठूँ जिसे

उसने बन्द कर दिया था। अगस्त तक हम सब न्यूयार्क लौट आये और कुछ दिन चैथम होटल मे बिताने के बाद हमे ग्रीनपोर्ट, लौंग आइलैण्ड मे समुद्र-तट पर एक कुटीर का पता चला। उसकी जीवनी शक्ति को उद्‌बुद्ध करने का यह हमारा अन्तिम प्रयत्न था जिससे उसका जीवन सह्य बन सके। एक दिन उसने मुझे बड़े आश्चर्य मे डाल दिया जब कि वह समुद्र-तट पर जाकर पानी मे चलने लगी। मै समझती, उसने शायद यह सोचा हो कि इसके नमकीन पानी के स्पर्श से उसे कुछ लाभ होगा। अचानक उसका सिर घूमने लगा और वह गिर पड़ी। हम उसे जैसे-तैसे सहारा देकर कुटिया मे लाये और बिछौने पर लिटा दिया। "मै तुम्हारे लिए जीवित रहने का कितना अधिक प्रयत्न कर रही हूँ" उसने सुबकते हुए कहा। परन्तु इस समय मैंने उसमें उन असंख्य परिवर्तनों मे से, जो इस धरती पर उसके अनिश्चित काल के अस्तित्व के बीच घटे, एक को लक्ष्य किया। यद्यपि उसके क्लान्त शरीर मे प्राणो का तैल क्षीण हो गया था, परन्तु इसके आन्तरिक जीवन की ज्योति अधिक स्पष्ट और ऊँची होकर जल रही थी। प्रोमेथियस जैसी इच्छाशक्ति के साथ वह अपनी वेदना और दुर्बलता से लड़ने लगी, जिससे वह मेरे काम मे जहाँ-कहीं आवश्यकता हो, परामर्श या सुझावो के रूप में सहायता दे सके। परन्तु दूसरे दिन वह बीमारो की गाड़ी (ऐम्बुलेस) मे अस्पताल ले जाई गई। जाने से पहले उसने मुझसे बड़े कोमल स्वर मे कहा, "अपनी आँखो का दुखडा रोने मे मैंने समय बरबाद किया। मुझे बहुत-बहुत खेद है। परन्तु जो हुआ सो हुआ। मै अपने प्याले की कड़वी से कडवी घूँट का स्वाद ले चुकी। किन्तु यदि ईश्वर और अमरत्व के विषय की तुम्हारी धारणाएँ ठीक है तो हमे विश्वास करना चाहिए कि वह महान् विचारो, गम्भीर विचारों, अन्त तक टिकनेवाले विचारो को नष्ट न होने देगा।"

अध्यापिका की भली भाँति परीक्षा की गई और उसने मुझे बताया कि उस अस्पताल के डाक्टर और नर्सें उसके प्रति अत्यधिक कृपापूर्ण थे। एक दिन जब मै उससे भेट करने गई, उसने कहा, "यहाँ अस्पताल मे पड़े रहने में मुझे ऐसा अनुभव हो रहा है, मानो मै ईश्वर के चरणों मे पड़ी हूँ।" जब उसके लिए जो कुछ किया जा सकता था, कर दिया गया तब हम उसे लेकर घर लौटे।

इसके बाद के दिनों में तो ऐसा प्रतीत हुआ जैसे मेरे हृदय की गति रुक जायगी। अध्यापिका की मन:स्थिति क्षण-क्षण बदलती रहती। वह हताश हो जाती और अधिकांश वह यह चिन्ता करती भी न जान पड़ती कि पौली

और मैं दुखी हो रही है। जब कोई उसके कमरे की सफाई करता होता तो वह मुझसे कहती कि मृत्यु का स्वर्ग-दूत जल्दी ही उसके पास आनेवाला है और उसके आने पर हमे सब चीजे करीने से लगाकर रखनी चाहिए। तब अभी-अभी कहे हुए अपने इन शब्दों को ध्यान मे न रखते हुए वह मुझसे पूछ बैठती कि मेरा काम कैसा चल रहा है और फाउंडेशन की ओर से भेजे गये अभ्यर्थना-पत्रो के उत्तर में मुझे क्या शुभ समाचार सुनने को मिल रहे हैं। दूसरे ही क्षण वह कहती, "तुम अपनी चिट्ठी-पत्रियों के काम को छोड़कर मेरे साथ तब तक ठहर सकती हो जब तक मैं चली न जाऊँ।" परन्तु ऐसा उसने मुझे कभी न करने दिया। एक बार जब मैं उसके बिछौने के पास बैठी थी, फाउन्डेशन का एक आदमी एक परमावश्यक कार्य से मेरे पास आया। वह अर्ध-चेतनावस्था में थी, परन्तु उसने स्वयं को जगाया और मुझसे जोर-जोर से वे शब्द कहलवाये जो वह मेरी उँगलियों में हिज्जे कर कह रहा था—इससे वह बहुत परेशान हुआ—और उसके चले जाने पर उसको तब तक संतोष ही न हुआ जब तक मैं इस नये काम में न लग गई।

देहान्त से एक सप्ताह पूर्व उसकी अजेय, उदार आत्मा और उसका बड़ी सरलता से चोट खानेवाला हृदय हमारे सामने अपने वास्तविक रूप मे प्रकट हुआ। पौली को विश्राम देने के लिए एक नर्स आई थी। और किसी तरह अध्यापिका को ऐसा लगा कि इसका मतलब यह है कि पौली हमे छोड़कर जा रही है। वह यह चिल्लाते हुए आगे बढ़ी, "पौली, ओ पौली, मत जाओ?" और तब मैंने उसे लड़खडाने से सँभाला। पौली उससे लिपट गई और उसे बड़े प्यार से यह समझा कर बिछौने पर लिटा सकी "मैं तो तुम्हारे लिए चाय का प्याला लाने के लिए नीचे जा रही हूँ।" मेरी ओर मुड़कर अध्यापिका ने मेरे हाथ मे हिज्जे किये, "क्या तुम दोनो अगले बसन्त में मेरे साथ स्काट-लैण्ड आओगी? मैंने हमेशा उस रमणीय देश को अपने मे समाते हुए अनुभव किया है और वहाँ मुझे शान्ति मिलेगी।" मैंने वचन दिया।

अध्यापिका को जिस रूप मे मै जानती थी उसकी मुझे जो अन्तिम स्मृति है वह अक्टूबर की एक संध्या की है। जब वह पूर्ण जाग्रतावस्था मे एक आरामकुर्सी पर बैठी थी और हम सब उसके चारो ओर घिरे थे। हर्बर्ट उसे पशुओ के उस जमघट का वर्णन सुना रहा था जो उसने अभी-अभी देखा था और वह हँस रही थी। वह जो कुछ कह रहा था, अध्यापिका उसके हिज्जे मेरी उँगलियों में कर रही थी, और कितनी कोमलता से वह मेरे हाथ के साथ खेल रही थी। उसका प्यार असीम था और यह प्रायः असह्य था।

उसका स्पर्श—वह रचनात्मक स्फुलिग जिससे विचारो के आदान-प्रदान का आनन्द, मुझको मेरे जैसे लोगों के साथ बाँधनेवाला प्रेम और मेरी सीमित अस्तित्व मे नई-नई चेतनाओ को जगानेवाली बुद्धि फूट पड़ी थी—सौन्दर्य से भरा था। बाद में वह ऐसी बेहोशी मे जा पड़ी जिससे वह इस धरती पर फिर न जागी।

अध्यापिका का अन्तिम संस्कार न्यूयार्क मे मेडिसन ऐवेन्यू के प्रैस्बिटेरियन चर्च में किया गया। अनेक अपरिचितों तथा मित्रो ने इसमे भाग लिया। डा० फौस्डिक ने शिक्षा के क्षेत्र मे उसके कार्य पर और एक बहरे-अन्धे बच्चे के व्यक्तित्व के निर्माण में उसकी कलात्मक प्रतिभा पर एक हृदयस्पर्शी व्याख्यान दिया। ऐलेक्जैण्डर बूलकाट ने उसके बचपन के बारे मे एक हृदयद्रावक निबन्ध लिखा और अपनी सहृदय, शक्तिशाली शैली द्वारा अनेक हृदयों में उसकी कथा की अवतारणा की।

अंतिम सस्कार २१ अक्टूबर को हुआ। अध्यापिका के शव का दाह-संस्कार किया गया था। जब उसकी भस्म को वाशिंग्टन डी० सी० मे नेशनल कैथेड्रल मे रख दिया गया तो पौली और मै स्काटलैण्ड के लिए रवाना हो गईं। जहाँ उसके भाई ने उदारतापूर्वक तीन महीनो तक मेरा अपने घर में आतिथ्य किया, जिससे मैं मानसिक सन्तुलन प्राप्त कर सकूँ।

व्यक्तिगत अमरता में मेरा विश्वास कभी समाप्त नही हुआ है परन्तु अध्यापिका के चले जाने से मेरा जीवन ऐसा अस्त-व्यस्त हो गया कि मैं अनेक महीनों बाद अपने आपको फिर से संघटित कर पाई और पूर्णरूप से तो मै ऐसा आज भी नही कर पाई हूँ। उसकी आत्मा को मै उसके शरीर से पृथक् देखने की इतनी अभ्यस्त हो गई थी कि उसकी भौतिक देह—उसके पार्थिव वस्त्रों से न चिपटी, जैसी वह अपने नन्हें भाई के शरीर से चिपट गई थी और मै यह भी नही कह सकती कि मुझे वह स्वयं अपने रूप मे समाई हुई लगती थी। उसे तो प्रभु ने कुछ समय के लिए मेरे पास भेज दिया था जिससे मै अन्धकार और मौन के बीच स्वयं अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकूँ, और इससे अधिक की याचना करने का मै साहस न कर सकती थी कि वह मुझे अपने इस उपहार के अधिक योग्य बना दे। यूनानी कहानी के मेलीगर के समान, जिसके प्राण एक जलते हुए लकड़ी के टुकड़े पर लटके हुए थे, जिसको उसकी माँ निरन्तर जलाये रखती थी और एक दिन उसने क्रोध में आकर इसे बुझा दिया था, मै शक्तिहीनता का अनुभव करने लगी। मेलीगर की तरह मेरा वध तो न किया गया था, परन्तु हुआ यह था कि अध्यापिका के

मस्तिष्क की ज्वाला, जिसके प्रकाश में मैने जीवन की ज्योति, संगीत और भव्यता का ऐसा सजीव अनुभव किया था, मुझसे छीन ली गई थी। भाषा का वह जादू अभी भी विद्यमान था जो वह मेरे हाथ मे छोड़ गई थी, परन्तु वह रहस्यमयी बैटरी जिसके द्वारा इसे प्रज्वलित किया गया था, छीन ली गई थी। इसी प्रकार उस अद्वितीय व्यक्ति के साथ जिसने, मुझको निरन्तर दबाती हुई छायाओ को मुझसे लिपटने न दिया था, दिन पर दिन रहने से प्राप्त प्रेरणा मुझसे छिन गई थी। उस समय मुझमे इतना आन्तरिक प्रकाश न था कि मै इन छायाओं को अकेले ही दूर खदेड़ सकती। मेरे इस शून्य को प्रकाशित करने के लिए आत्म-सक्रियता का स्फुलिग मुझमें तब तक प्रकट न हुआ जब तक पौली और मैंने "असामा मारू" जहाज पर जापान की यात्रा न की।

हैलेन कैलर एन्रिको कैरुसो का संगीत 'सुन' रही है।

भारत के प्रधान मंत्री श्री नेहरू हैलेन कैलर को बाँह का सहारा देकर ले जा रहे है। हैलेन कैलर सन् १९५५ में भारत आई थी। उन्होंने एशिया में ४०,००० मील का दौरा किया था।

१७

धरती से आनेवाले सुगन्धित वायु के झोको का—जो मुझे निपन (जापान का एक नगर) के व्यक्तित्व का परिचय देते जान पड़े—स्पर्श पाकर मैंने अनुभव किया जैसे मेरी ओर कोई स्नेहिल हाथ बढ़ रहा हो, और पौली फूजीयामा का वर्णन करने लगी जो वसन्ती सूर्य के प्रकाश मे एक विशाल सान्त्वनापूर्ण विचार के समान भव्यता के साथ सिर उठाये था। जहाज से उतरने पर हमारा स्वागत ताकेओ इवाहाशी, सरकारी अधिकारियों, अन्धों तथा बहरों के स्कूलों के प्रतिनिधियो, राजदूत ग्रचू, अन्य प्रमुख व्यक्तियो तथा मैनिकी प्रेस ने किया। मेरा कार्य ऐसे वेग से प्रारम्भ हुआ कि मै व्यक्तिगत कष्टो को भूल गई—अन्धे या बहरे बच्चो के पुनर्वासन की सही प्रणाली के सम्बन्ध में उच्च पदस्थ लोगों के साथ सम्मेलन, प्रेस के प्रतिनिधियो से मुलाकाते, राजकुमार तथा राजकुमारी ताकामात्सू से भेट, टोकियो के शाही महल मे एक उद्यान-पार्टी जिसमे सम्राट् और सम्राज्ञी ने हमारा स्वागत किया और वाधितों की संस्थाओं में भाषण। कहीं-कहीं पाश्चात्य सभ्यता के अतिक्रमण के अतिरिक्त पौली और मुझको चारों ओर से एक भव्य प्राचीनता का आभास देनेवाला वातावरण घेरे हुए था। ताकेओ और उसकी पत्नी हमे पहाड़ों के बीच बसे गाँवों मे ले गये। हमने एड़ियों पर, जितनी भव्यता के साथ हमसे बन पड़ा बैठकर, जापानी भोजन किया और हम उन लोगों के घरों मे सोई जो हमारा आतिथ्य कर रहे थे। "तातामी" पर लेटने मे मेरे लिए एक विशिष्ट आकर्षण था। मै उस बेदाग दरी पर हाथ रख सकती थी और खिसकनेवाले दरवाजों और खिड़कियों के कम्पन का, स्त्रियों की हल्की पग-ध्वनि का और उनके किमोनो वस्त्रों की सरसराहट का अनुभव कर सकती थी। मै स्वयं को जापानियों के धार्मिक विश्वासों के बहुत समीप अनुभव करती जब वे धूप की सुगन्ध फैलाते, अपनी देव-वर्तिकाओं को जलाते और अपने पारिवारिक देवालय में पूजा करते। हमारे धार्मिक विश्वास भिन्न थे, परन्तु मुझे इन लोगों की वह हार्दिकता बहुत अच्छी लगी जिसके साथ वे अपने पितरों

का सम्मान करते थे और उनके साथ पुनः मिलने की आशा सँजोये रहते थे।

यहाँ मेरे चारों ओर वह सौन्दर्य-प्रेम भी फैला हुआ था, जिसका परिचय मुझे अध्यापिका में मिला था। निपन मे स्पर्श के योग्य प्रत्येक वस्तु—प्याले, पंखे, पर्दे, छोटी-छोटी जापानी लड़कियों की ओवियाँ (एक चौड़ा कामदार वस्त्र जिसे जापानी स्त्रियाँ और बच्चे पहनते है)। अंकुरित चैरी-वृक्षों का अकथनीय सौन्दर्य, उद्यानों की सरल भव्यता जिनमे चट्टाने, तड़ाग और छोटे-छोटे देवदारु के वृक्ष थे और मन्दिरो के तोरण—तक मै आसानी से पहुँच पाती थी। नारा मे पुरोहितों ने मुझे एक सीढ़ी के सहारे सब गुणों के प्रतीक एक विशाल पद्म पर आसीन महान् बुद्ध की मूर्ति के चरणों तक जाने की अनुमति दे दी। मै संसार की पहली स्त्री थी जिसे यह धार्मिक कृपा प्राप्त हुई थी। रस्सी पर हाथ रखकर मैंने वहाँ के विशाल घंटे के भगवान् बुद्ध की स्तुति मे उच्चरित समृद्ध निर्घोष का अनुभव किया। शिजुओका मे मैंने खेतो-खेतो मे उगते हुए चाय के पौदो और झुलसानेवाली धूप में चाय की पत्तियाँ तोड़नेवाले धैर्यशाली मजदूरो के बड़े-बड़े टोपो का स्पर्श किया। तकाराजुका नामक गाँव मे हम अपनी दो सुन्दर जापानी नौकरानियो के साथ पहाड़ियो के ऊपर घूमे और मैंने उन भली भाँति सीचे हुए धान के खेतो का अनुभव किया जिनसे वहाँ की जनता को आहार का प्रमुख भाग प्राप्त होता है।

परन्तु देहाती जीवन की ये झाँकियाँ तो यो ही हमें मिल रही थी। पौली और मै निरन्तर जापान के एक छोर से दूसरे छोर तक, समुद्र के अन्तर्वर्ती प्रदेशो मे और बेप्पू के गरम पानी के चश्मों के आस-पास, कोरिया तथा मंचूरिया के डेरेन प्रदेश मे अन्धों और बहरो की संस्थाओ मे दौरे कर रहे थे। हम प्रमुख लोगों से, जैसे शिक्षा-मंत्री, मार्क्विस ओक्यूबा, जिसकी अन्धों के कार्य में विशेष रुचि थी और मार्क्विस तोकूगावा, जिसकी बहरों के कार्य मे रुचि थी, विचार-विनिमय करती रहती थी। ताकेओ अविश्रान्त रूप से मेरे सन्देशों का—जो जापानी लोगों को, अन्धों के प्रति आँखवालों के अज्ञान के विषय मे, जो उन अनेक स्कूलों मे प्रमुख रूप से प्रकट हो रहा था जिनका मैंने दौरा किया था, समझाकर उत्साहित करने के लिए तैयार किये गये थे—जापानी भाषा में अनुवाद करता रहता था। उसकी सहायता के फलस्वरूप मै उन लोगों के प्रश्नों का, जो अन्धकार से घिरे मस्तिष्को और स्तब्ध जीवनो में प्रकाश के आन्तरिक मार्ग तैयार करना चाहते थे, अधिक निर्भीकता से

सामना कर सकी। समय के इतने व्यवधान के पश्चात् भी मैं ताकेओ के साहस और अन्तर्दृष्टि का स्मरण कर प्रशंसा-भाव से भर उठती हूँ। वह उन लोगों के समकक्ष था जो मिस्र, तुर्की, ईरान और भारत में आज विचारों और भावों की सामन्तशाही को भंग कर सामान्य और बाधित लोगों के लिए समान भाव से शिक्षा के द्वारा उन्मुक्त करने मे अपने-अपने देश का प्रगतिपूर्ण नेतृत्व कर रहे हैं। हम जब वहाँ के स्कूलो मे जाते, तो वहाँ अध्यापिका को—जिसे जापानी भाषा मे "सेन्सेइ" कहते हैं—के प्रति लोगों का आदर-भाव देखकर पौली और मेरे सामने तो जैसे एक नया रहस्य खुल रहा था; यहाँ मेरी सेन्सेइ के प्रति अनेकानेक स्नेहपूर्ण शब्दों मे सम्मान प्रकट किया जा रहा था। सुदूर देशों मे अध्यापिका के कार्य का विस्तार और मेरे जीवन में उसकी उपस्थिति का पुनर्जन्म—ये सर्वाधिक अमूल्य स्मृतियाँ है जो मैंने जापान में अपने पहले दौरे से प्राप्त की।

मैं निश्चित रूप से जानती थी कि अध्यापिका मेरे साथ है, और जब पौली तथा मैंने हवाई द्वीप, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड का दौरा किया और विशेषतः सन् १९४८ की पतझड़ में जब हमने जनरल मैकार्थर के आमन्त्रण पर जापान का दूसरी बार दौरा किया तब मुझे अध्यापिका की अपने में उपस्थिति का और भी अधिक भान हुआ। सभी देशों के अन्धो ने मेरा, बाँहे खोलकर, स्वागत किया और चारों ओर मुझे जो उत्साह की भावना दिखाई देती उससे मुझे प्रेरणा मिलती।

जापान में अमरीकी सेनाओं के अधिकार के बाद जो परिवर्तन हुए थे वे मेरे लिए अत्यधिक लाभकारी थे। टोकियो के स्टेशन पर पहुँचने पर पौली और मेरा स्वागत ब्रिगेडियर सैम्स और श्रीमती सैम्स ने, हैलेन केलर समिति के सदस्यों ने, सरकार के प्रतिनिधियों ने तथा दूसरे लोगों ने किया। हमारे स्वागत मे विशाल जनसमुदाय उमड़ पड़ा परन्तु निपन के प्राचीन शिष्टाचार से सम्बन्धित शाही तौर-तरीकों का जमाना बीत चुका था। जनता पर सर्वव्यापी तानाशाही द्वारा आरोपित संयम और भय समाप्त हो चुके थे। जनता के प्रेम ने जिस सहज सहृदयता से हमें घेर लिया वह यथार्थ रूप में एक नाटकीय वस्तु थी। अंत में हम ताकेओ और उसकी पत्नी किओ से भेंट कर सके और उनके साथ हम क्लीग लाइट की तेज रोशनी में उस लाल दरी पर चले जिस पर अब तक केवल सम्राट् ही चल सकता था। यह दरी स्वतन्त्रता के मार्ग में अन्धों और बहरों की उस प्रगति का प्रतीक थी जो उन्होंने दमघोट से निकलकर आँख और कानवालों के समकक्ष बनकर प्रदर्शित की थी।

ताकेओ ने अन्धो के पुनर्वासन के लिए ५ करोड़ येन (जापानी सिक्का) एकत्र करने का आन्दोलन प्रारम्भ किया था और यह मेरा सौभाग्य था कि मै उसको अपने लक्ष्य तक पहुँचने मे सहायता पहुँचा सकी। जब मैने टोकियो मे ३ सितम्बर को अपना पहला भाषण दिया तो मै यह जानकर रोमाचित हो उठी कि उस दिन १० लाख से अधिक वाधित लोग वहाँ यह प्रतीक्षा करने के लिए एकत्र हुए थे कि वे ऐसा विधान प्राप्त करके रहेंगे जिससे वे अपनी कठिनाइयो पर विजय प्राप्त कर मानव-प्राणियों के गौरव और उपयोगिता को प्राप्त कर सके। इसी समय अन्धो की एक विशाल रैली अपने लिए कल्याण-कारी कानूनों के यथाशीघ्र कार्यान्वित किये जाने की माँग करने के लिए हो रही थी। ४ सितम्बर को शाही महल प्लाजा मे पौली और मेरा राष्ट्रीय स्वागत करने के लिए सत्तर हजार का एक विशाल जनसमूह एकत्र हुआ। अनुदानों के लिए मेरे अभ्यर्थना करने से पहले ताकेओ ने बड़ी वाक्यपटुता के साथ नियति के उस सूत्र पर प्रकाश डाला जो मुझे अध्यापिका से बाँधे हुए था। उसने इस बात पर जोर दिया कि रोम एक दिन मे नहीं बना था और मेरा निर्माण उसके (अध्यापिका) पचास वर्षो के धैर्य और विश्वास से हुआ था। उसने कहा कि ऐन सलिवाँ के द्वारा ईश्वर अपना दीप्त प्रकाश हमारे कल्याण के जलपोत पर फैला रहा है, और इन उच्च भावनाओं के साथ यह आन्दोलन सम्पन्न किया गया। मुझे निश्चय हो गया कि जब कभी मुझमे अपने आपको अपने कार्य के अयोग्य समझने की भावना आती, अध्यापिका मेरी आत्मा मे पंख लगा देती। जीवन के स्वर्गीय पक्ष से प्रवाहित होनेवाली शान्तिदायिनी शक्ति की सहायता से मै अपने दोषपूर्ण उच्चारण और अपने लिए सर्वथा नवीन परिस्थितियों की कठिनाइयों पर विजय पा सकी।

जिस दूसरी बात ने मुझे प्रसन्न किया वह थी जापानी स्त्रियो की मुक्ति और राष्ट्रीय सभा (डिअट) के सदस्यो के रूप में उनके कार्य। मुझे यह देखकर उत्साह मिल रहा था कि किस दृढ़ता के साथ ये स्त्रियाँ समाज-कल्याण के कार्य का अनुभव प्राप्त कर रही थी और मुझे विश्वास हो गया कि जो स्त्रियाँ विशेष-तया अन्धों और बहरों के कल्याण-कार्य मे जुटी थीं वे उनके पुनर्वासन में अमूल्य कार्य करेगी।

जिस दूसरे परिवर्तन ने मुझे प्रभावित किया वह यह था कि हमारी बैठको में आनेवाला विशाल जनसमूह वाधितों के लिए मेरी अभ्यर्थनाओं को कितनी शीघ्रता से ग्रहण कर रहा था। यह बात हमारे स्वागत मे दिये गये प्रिफैक्चरों के गवर्नरो, नगरों के मेयरों और विशिष्ट शिक्षा-शास्त्रियों के भाषणों में

प्रतिफलित हो रही थी—ये सब विशिष्ट व्यक्ति अभी-अभी स्वतन्त्र हुई जनता के अंग थे, ऐसी जनता के जो इसमें संदेह नही कि किंकर्त्तव्यविमूढ़ अवश्य हो रही थी, परन्तु वीरतापूर्वक सामूहिक एकता की स्थिति से व्यक्तिगत विकास और व्यक्तित्व एवं सबके कल्याण के लिए सामूहिक उत्तरदायित्व पर आधारित राष्ट्रीयता की ओर बढ़ रही थी।

यह एक ऐसा अपूर्व आन्दोलन था कि आज तक मैंने जितने भी आन्दोलनों मे भाग लिया था उनमे से कोई भी ऐसा न था। प्रचार-कार्य की उत्कृष्ट व्यवस्था, बैठकों और स्वागत-समारोहों के संघटन में निपुणता, जिन स्टेशनों से होकर हम गुजरते थे उन पर हमारे स्वागत मे भारी भीड़ और मुझे जो सम्मान के शब्द सुनने को मिले, ये सब सदैव स्मरणीय बाते थीं। जैसा मुझे पौली के हाथ से और बाद के अनुवादों से ज्ञात हुआ, ताकेओ अपने कवित्व की ज्वाला से, अपने प्रभावकारी स्वर से और आनन्ददायी विनोदो से जनता को प्रभावित कर देता था।

हम जहाँ कहीं भी जाते, मैनिकी हमारे साथ अपने प्रतिनिधि भेजता। मुलाकातों के द्वारा इन लोगों ने आँखोंवाली जनता के सामने यह प्रदर्शित कर दिया कि अन्धों को केवल पढ़ना-लिखना नहीं सिखाया जा सकता, अपितु उन्हे शिल्प-कलाओं मे भी निपुण बनाया जा सकता है और इन लोगों ने स्वयं अन्धो को भी इस बात का विश्वास करा देने म सहायता की कि यह आवश्यक नहीं है कि उनका अन्धापन ही उनके भाग्य का निर्णायक बन जाये। मैनिकी ने इस आन्दोलन का जैसा सुन्दर प्रचार किया उसके फलस्वरूप इस आन्दोलन की सफलता को निश्चित बनाने के लिए सभी शक्तियाँ आ जुटी—आवेशन सेनाओं, नगरों, कस्बों और प्रीफैक्चरों के अधिकारियों की उदारता, शिक्षा-मंत्री, श्रम और कल्याण-मंत्री, सहस्रों नर-नारी और शिशु अन्धकाराच्छन्न प्राणियों के जीवन को प्रकाशमय बनाने के उदार विचार से इस कार्य मे आ जुटे। युग-युग से जनता सम्राट् के रूप में निबद्ध अपने राष्ट्र के लिए अपने सुखों का जो परित्याग करती आई थी, अब उसका यह त्याग अन्धे और बहरेपन की क्षति-पूर्ति की ओर मुड़ गया था। उदाहरण के लिए, जब हम होकैडो से नीचे की ओर यात्रा कर रहे थे तो कूकू जिले मे एक तूफान चल रहा था और बाढ़ें आ रही थीं, परन्तु इनसे इस आन्दोलन का उत्साह क्षीण न हुआ। फुकुई में भूकम्प से उजड़े स्थानों को देखकर हम बहुत विचलित हो उठे। मीलों तक खाली पड़े स्थानों को, जहाँ कभी मकान खड़े थे, पार करते हुए हमें वेदना का अनुभव हो रहा था। इतने पर भी फुकुई ने अन्धों की निधि में अपना हिस्सा

दिया, यद्यपि जाड़ा वहाँ की जनता के सामने मुँह बाये खड़ा था और वे जल्दी-जल्दी अपने मकानों को फिर से बनाते हुए सुरक्षित स्थान प्राप्त करने में तत्परता से जुटे थे। यहाँ तक कि ऐटम बम द्वारा नष्ट-भ्रष्ट हिरोशिमा जहाँ पुनर्निर्माण की प्रक्रिया धीरे-धीरे चल रही थी और नागाशाकी तक ने, जिसका एक-तिहाई भाग नष्ट हो चुका था, इस आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। निपन के इन दृश्यों का मुझ पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ा और मेरे मन मे उस देश के लोगो के प्रति आदर-भाव जागृत हुआ, जो दान से भी श्रेष्ठ कार्य-वाधितो को समाज मे उनका उचित स्थान दिलाने में अपने दया के धर्म का पालन कर रहे थे। जब तक मै वहाँ रही, अध्यापिका के सम्मान में प्रशंसा के शब्द धूप-बत्ती की सुगन्ध के समान उठते रहे और हमारे मियाजिमा के दौरे के दौरान में पत्थर की लालटेनें इस बात के प्रतीक के रूप में जलाई गईं कि अध्यापिका की स्मृति का वृक्ष सदैव फलों से लदा रहे। भविष्य के अध्यापकों के समक्ष ऐन सलिव्हाँ मेसी के जीवन-कार्य को उपस्थित करने के लिए जापानी अन्धों के संघ और जापान में सभी वाधितों के कल्याण के लिए निर्मित रचनात्मक विधियों से बढ़कर और क्या स्मारक हो सकता है? और अध्यापिका को उस राष्ट्र द्वारा, जिसके सौन्दर्य-प्रेम, गम्भीर दया-भाव और आध्यात्मिक गुणों की वह इतनी अधिक प्रशंसा करती थी, दिये गये सम्मान से बढ़कर धरती का और कौन-सा प्रकाश प्रसन्न कर सकता है?

१८

जीवन की लहरें मुझे—और मुझे विश्वास है कि अध्यापिका को भी—संकीर्ण से विस्तृत क्षेत्र की ओर, अधिक विस्तृत दृश्यावली की ओर और अधिक स्वतन्त्र-वायु मे ले चली है। मेरे मार्ग में अध्यापिका ने जो अशमनीय ज्योति प्रज्वलित की थी, उनके प्रभाव से मै पौली के साथ स्थल और जल-सेना के अस्पतालों में घायल पड़े सैनिको और अन्य जातियो के अन्धों और बहरो के लिए उत्साह का सन्देश लेकर एक के बाद दूसरी यात्रा करने में समर्थ हो सकी हूँ।

सन् १९४४ के जाड़ो में जब पौली और मैंने हाल में अन्धे या बहरे हुए सैनिकों को एक नये जीवन के लिए तैयार करने का प्रयत्न वैली फोर्ज ऐण्ड बटलर, पैनसिलवानियाँ में प्रारम्भ किया, तब मुझे यह आशा नहीं थी कि मुझे सर्वसामान्य रूप से सभी घायलो से भेंट करने का विशेषाधिकार मिल सकेगा। एक दिन मैं नैला ब्रैडी हैनी से बात कर रही थी। उसने अनुभव किया कि द्वितीय विश्व-युद्ध मेरे मस्तिष्क मे किस प्रकार तीव्र वेदना बन कर लिपट गया था और किसी प्रकार की भूमिका या सफाई दिये बिना ही वह अपनी उँगलियों की भाषा में मुझसे बोली, "तुम क्यों नही घायल सैनिकों के पास जाकर स्वयं ही पता लगा लेतीं कि तुम उनके लिए क्या कर सकती हो? तुम्हारे पास अपने दो हाथ हैं, अपना हृदय है और परिस्थितियों के ऊपर उठने की उनकी शक्ति मे अपना विश्वास है। याद रखो, उन्हे भी उसी प्रकार से अपने आपको नई परिस्थितियों के अनुकूल बनाना है जैसा तुम्हें अपने बचपन मे करना पड़ा था। तुम उस अन्धकार और मौन आतंक के चिह्नों तक को भूल चुकी हो जो तुम्हें तब अपने पंजों में जकड़े हुए थे। तुम्हें इन सैनिकों का ऋण चुकाना है। हम सभी को चुकाना है, तुम शायद अपना ऋण चुका सकती हो। इसको चुका देने से तुम उनके बलिदान को ग्रहण करने के योग्य बन जाओगी—उस बलिदान को जो उन्होने हमारे लिए, हर एक दूसरे के लिए और उस अनुपलब्ध स्वप्न के लिए जिसे हम सभ्यता कहते है, दिया है।"

नेला की इस चुनौती मे मैने अनुभव किया कि जैसे अध्यापिका मुझे प्रेरित कर रही है और अकस्मात् मै अपने टूटे-फूटे उच्चारण, अपने भद्देपन और शिथिलता की चेतना से मुक्त हो गई। मैंने अन्धों की अमरीकन फाउन्डेशन के सामने देश भर में विकलांग कर्मचारियों से भेट करने का प्रश्न रखा। फाउन्डेशन ने जिस उदारता के साथ मेरी इस इच्छा का स्वागत किया उससे मेरे लिए वह सब करना संभव हो गया जो मै इस दिशा मे कर सकी हूँ।

शीघ्र ही पौली, जिसके श्रद्धापूर्ण सहयोग और मेरी योजनाओ मे प्रसन्नतापूर्वक लग जाने की तत्परता पर मै इन तमाम वर्षो विस्मय करती रही हूँ, और मै वाशिंगटन तथा ऐटलाटिक सिटी के अस्पतालो मे कर्मचारियो के वर्गो से भेट करने के लिए चल पड़ीं। हमारा यह प्रस्थान ऐसा था जैसे हम किसी द्वीप को—अन्धापन और बहरापन सचमुच ऐसे ही है—छोड़कर विविध प्रकार के दृश्यो और टेड़ी-मेढ़ी नदियो से भरे महाद्वीप की ओर चल पड़े हों। अगले ढाई वर्षो में हम सत्तर से अधिक अस्पतालों में गये, और स्वयं मुझे यह देखकर विस्मय हुआ कि मेरी जीवन-व्यापी हताश भावनाएँ विलीन हो गई थीं। सब प्रकार के लोगों से नाना प्रकार के सम्पर्को और अन्धों तथा बहरो के कल्याण कार्य पर पड़नेवाले नये प्रकाश के फलस्वरूप, समस्या के एक अंश के स्थान पर समस्या का पूर्णरूप ही मेरे सामने उपस्थित हो गया था। इसी उद्देश्य मे तो अध्यापिका ने अपना अध्यवसाय और अपनी मानवीय भावनाओ को लगाया था और मै यह सोचकर प्रसन्न हुई कि यह उद्देश्य पूर्ण हुआ।

हमारा पहला लम्बा दौरा हौट स्प्रिंग, ऐरकैन्स मे अर्धांग कर्मचारियों के अस्पताल से प्रारम्भ हुआ। यहाँ से हम ओक्लाहोमा की ओर बढे जहाँ हमने चिकाशा में बहरे सैनिकों के "प्रोग्रैसिव बोर्डन सेण्टर" का दौरा किया। तब हम टैक्सास, न्यू मैक्सिको, कोलोरेडो, यूटा, कैलिफोर्निया, ओरेगौन और वाशिंगटन स्टेट मे गये। पहले तो मुझे केवल स्थल-सेना के अस्पतालों में ही जाने की अनुमति प्राप्त थी। परन्तु जब मैंने एडमिरल मैकिंटायर से जल-सेना के अस्पतालो में भी जाने की अनुमति माँगी तो उसने बहुत कृपापूर्वक मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली। पौली और मै स्थल और जल सेना के अस्पतालों मे ईडाहों तक और दक्षिण एवं मध्य पश्चिम होकर काम करने लगीं, और अपने विदेशी दौरों में हमने ब्रिटेन, फ्रांस, इटली और यूनान के घायलों से भेंट की। बाहर से तो यह एक नाम गणना-मात्र है, परन्तु मेरी स्मृति में यह अनेकानेक सहृदय मित्रताओं, बाधाओं को पार करने के घायलों के वीरता-

पूर्ण और प्रायः सफल प्रयत्नों और विगत बीस वर्षों में पुनर्वासन की कला की चमत्कारपूर्ण प्रगति के गान गाता तथा दीप्त और स्पन्दित होता है। सहस्रों ने, जैसा कि मैं प्रमाणित कर सकती हूँ, जिनका भाग्य अभी कुछ वर्षों पहले सुधार के अयोग्य घोषित किया गया होता, अपनी क्षत-विक्षत योग्यताओं को वीरतापूर्वक पुनः प्राप्त किया है।

मैंने इन दौरों मे जिस शौर्यपूर्ण महाकाव्य का साक्षात्कार किया उसे पूर्णतः लेखबद्ध करना असम्भव है। यह होमर के काव्य से विशाल है और इसके पात्र अनेक अवस्थाओं और देशो के लोग हैं। सब प्रकार की बुद्धियों, रुचियो, गुणो तथा व्यवसायों के लोगो ने, हर तरह के धार्मिक एवं राज-नीतिक मतों के लोगों ने, प्रायः प्रत्येक जाति के वंशजों ने, जिनमें भारतीय, फिलिप्पाइन के, चीनी और जापानी शामिल है, इस महाकाव्य में भाग लिया है। जब मै एक घायल के बिस्तर से दूसरे पर जाती और पौली तथा मै प्रतिदिन मीलो की यात्रा करते तो सैनिको के शब्द मेरी कल्पना में साकार हो उठते। विभिन्न मोर्चों का नाम सुनकर मेरी कल्पना धरती और समुद्र के चक्कर लगाने लगती। मै कल्पना मे मध्य रात्रि की उस निस्तब्धता मे अवाक् रह जाती जिसमे उस विशाल युद्धपोत ने उत्तरी अफ्रीका के तट पर सैनिक उतारे थे—उन विस्फोटों से मै काँप उठती जो जहाज मे से इस या उस सिपाही को उड़ा देते; मै उत्तरी अटलांटिक के बर्फानी वीरान को या उष्णकटिबन्धीय सघन वन को पार करती होती—पैदल सेना के साथ धुएँ, और धूल आसमान से बमबारी के भीषण धमाकों के बीच स्तब्ध होकर जमीन से चिपट जाती—रेगिस्तान मे लड़ाकुओं के साथ मार्च करती—इटली के पहाड़ों पर चढने का परिश्रम उठाती—उदास ऐल्यूशियन टापुओं की गम्भीर निस्तब्धता को सहन करती—जर्मनी में सूखकर काँटा बने युद्ध-बन्दियों के साथ बन्द होती। इन सैनिकों के शब्दों से दूर गहराई में उनकी सरल तथा शौर्य-पूर्ण आत्माएँ तारों की तरह चमकतीं।

विविध रूपो मे मैंने उन प्रतिबन्धों के गह्वरों की छान-बीन की जिनमें ये क्षत-विक्षत मानव संघर्ष कर रहे थे और मै जानती हूँ कि ऐसा कोई अन्धकार नहीं है जो जीवन को क्षति पहुँचानेवाले घावों और बीमारियों के पंगु एवं विलग करनेवाले प्रभावों पर प्राप्त होनेवाली विजय के लिए उन्मुक्त न हो जाये। सर्जनों तथा उनके अधीन कर्मचारियों की गवेषणाओं तथा निष्ठा द्वारा जीवन को अभिनव रूप देने के चमत्कार किये जाते रहे हैं और अब भी किये जा रहे हैं और इससे भी अधिक महत्त्व की बात यह

है कि इन आविष्कारों के लाभ समस्त असैनिक क्षेत्र के कष्टों मे पहुँचाये जा रहे है। अपने अति प्रामाणिक ज्ञान के आधार पर मैं कह सकती हूँ कि युद्ध में अन्धे और बहरे हुए लोगों को सार्वजनिक सेवाओं तथा स्वावलम्बन के साधनों से पुनर्वासिन के इतिहास में अभूतपूर्व रूप से सुसज्जित कर दिया गया है। वह दिन अधिकाधिक समीप आ रहा है जब सर्वत्र विकलागो को उत्तरदायी नागरिकों के पद पर प्रतिष्ठित कर दिया जायगा। यह निर्भीक प्रयोगों, सामाजिक चेतना, विज्ञान, चिकित्सा एवं शल्य-शास्त्र तथा शिक्षण-कला के सहयोग से संभव होगा। यदि अध्यापिका कल्याण-कार्यो के इस विकास से परिचित हो जाये—और मुझे विश्वास है कि वह अवश्य होगी—तो वह इस बात से प्रसन्न हो उठे कि वह मुझे इस संसार में, जहाँ जीवन अभी भी करुणापूर्ण बना हुआ है, दूर-दूर तक उपचार का मन्त्र लेकर भेजने मे साधन रही है। एक बार उसने कहा था, "हैलेन, तुम उस निर्दय व्यवहार को, जो कभी-कभी मै तुम्हारे साथ करती हूँ, याद कर प्रसन्न होगी" और यह बहुत सच्ची बात है कि मै इन्हें याद कर प्रसन्न होती हूँ।

वाधित कर्मचारियों का भव्य सामाजिक परित्राण देख लेने के बाद बहरे-अन्धों की सहायता करने का मेरा उत्साह अभूतपूर्व उत्कट रूप से उद्दीप्त हो उठा। उनमें से अधिकांश तो छाया-मात्र थे, जैसी कि एक समय मै भी थी। अध्यापिका ने मुझमें जो शिक्षाएँ भर दी थी उनमें से मै इस तथ्य का तीव्र अनुभव कर रही थी कि सच्चाई और उत्तरदायित्व सभी मानवीय सम्बन्धो के आधार हैं, और मै यह सहन न कर सकी कि अन्धों की अमरीकन फाउन्डेशन शक्तिशाली बनती जाये और अपनी सेवाओं का क्षेत्र बढाती जाये और तब भी बहरे-अन्धों के लिए कुछ न हो सके। सन् १९४५ में अपनी समग्र शक्ति के साथ मै उस महान् बाधा को हटाने में जुट गई जो इन सबसे अधिक एकाकी मानव-प्राणियों को शिक्षा एवं नागरिकता मे उनके भाग से वंचित रखती है। बहुत लिखा-पढ़ी के बाद मै फाउण्डेशन के प्रेजीडेंट श्री जीग्लर तथा अन्य लोगों का ध्यान इस ओर आकर्षित करने में सफल हुई, और फलतः अमेरिका के बहरे-अन्धों के कार्य के लिए एक समिति का निर्माण हुआ। मैं इस बात से उल्लसित हुई कि अन्धों के लिए ब्रूक्लिन इंडस्ट्रियल होम ने अपने कारखानों मे तेरह बहरे-अन्धों को काम पर लगाया हुआ था। अब फाउण्डेशन ने शिक्षित किये जा सकनेवाले सभी बहरे-अन्धे बच्चों का पता लगाने का तीव्र आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया है। सारे देश के आग्रह पर, प्रयत्न यह किया जा रहा है कि स्वास्थ्य, शिक्षा और

कल्याण के केन्द्रों से प्रत्येक दुहरे वाधित बच्चे के बारे में पूरी-पूरी जानकारी एकत्र की जाये, जिससे प्रत्येक ऐसे बच्चे के व्यक्तिगत प्रशिक्षण और शिक्षा की आवश्यकताओ के विषय मे योजना बनाने मे उसकी राज्य-सरकार को सहायता दी जा सके। मानव-कल्याण का यह उद्योग ही अध्यापिका के हार्दिक प्रयत्नों का औचित्य सिद्ध करने के लिए पर्याप्त था।

मुझे दक्षिणी अफ्रीका, मध्य-पूर्व और लैटिन अमरीका जैसे देशो मे, जहाॅ पौली और मैंने दौरा किया है, "जीवन बिताने" का अवसर न मिल सका। यहाॅ मै इनका संक्षिप्त उल्लेख इसलिए कर रही हूँ, क्योकि मैंने इन देशो के जो दौरे किये वे मुझमें समाये हुए अध्यापिका के जीवन-वृक्ष की ही नई शाखाएँ थे। परन्तु ये ऐसे उत्तेजनापूर्ण अवसर थे जिनका उसने स्वप्न भी न देखा था और मुझे इस बात का अभिमान है कि मै इनमे भाग ले सकी। उदाहरण के लिए, पौली और मै हवाई जहाज में विक्टोरिया प्रपातों पर पहुँचे और जब हम उस तट पर खड़े हुए जिसके समीप लिविंग्स्टन रहा था, मैंने उफनते और नीचे एक गह्वर में गिरती धारा से छिटकते हुए जल बिन्दुओं के जाल का अनुभव किया। इसके बाद तीन दिन हमने क्रूगर नेशनल पार्क मे एक कैम्प में बिताये और यहाॅ सबेरे से शाम तक हमने मोटर में मीलों तक भ्रमण किया और अनेक प्रकार के बनैले पशु तथा सुन्दर पक्षी देखे। प्रभु की दृश्यावलियो तथा जंगली जीवन के आश्चर्यों से भरी पुस्तक, जिसके असंख्य अध्याय अध्यापिका ने मेरे साथ पढ़े थे, के पन्ने पलटना मेरे लिए एक वरदान के समान था।

दक्षिण अफ्रीका मे वाधितो के हमारे कार्य के सम्बन्ध मे मुझे खेद है कि वहाॅ परिणाम वैसे संतोषजनक नही रहे है जैसे केनिया, नैरोबी तथा पूर्वी एवं पश्चिमी अफ्रीका मे, जिनके बारे मे मैने पढ़ा है। दक्षिण अफ्रीका मे, गोरे अन्धों के पुनर्वासिन का कार्य बड़े जोरो से हो रहा है, परन्तु वहाॅ वर्ण-भेद के विरुद्ध संघर्ष अभी भी हृदयविदारक बना हुआ है। मेरा रोम-रोम ऐसी परिस्थितियो के विरुद्ध विद्रोह कर उठता है जो वाधित लोगो—या अन्य किसी भी वर्ग के लोगों—के मस्तिष्क को दूषित करती है और उनकी सुख की संभावनाओं को क्षीण कर देती है।

मैं उस समय के लिए प्रार्थना ही कर सकती हूँ जब दक्षिण अफ्रीका की विभिन्न जातियाँ अपने देश के वाधितों के सुख और कल्याण की वृद्धि मे समान रूप से भाग लेंगी। आज भी वहाँ ऐसी बलिष्ठ आत्माएँ हैं जो मानव-स्वभाव को कलुषित करनेवाली मूर्खताओं और क्षुद्रताओं से निराश नहीं हुए हैं और

जो न्याय एवं बुद्धि के आधार पर सभी जातियों में भ्रातृत्व का निर्माण करने में लगे है।

हमारे दक्षिणअफ्रीका के दौरे में मेरे लिए आते महत्त्व की घटना जोहान्स-बर्ग के समीप सेंट जॉन औप्थैल्मिक फाउन्डेशन का खुलना था। यह कैरो के दक्षिण की ओर के निवासियों के लिए पहला आँखों का अस्पताल था। आँखों की रोशनी को लौटाने के कार्य पर बोलने का सौभाग्य मुझे अनेक बार मिल चुका था, परन्तु मैंने कभी वैसे आतंक का अनुभव न किया था जैसा मैंने उस स्मरणीय शनिवार, १९ मई, १९५१ के दिन किया। मुझे विश्वास है कि सेंट जॉन औप्थैल्मिक फाउण्डेशन के दया के दूत नये विचार और सच्चे क्रिश्चियन आदर्श लेकर चलेंगे और अफ्रीका के सहस्रो मानव प्राणियों की आँखो तथा कानों की भी रक्षा करेंगे, जो कि अफ्रीका के लिए अपनी सोने और हीरों की खानो से भी बढकर है। इस प्रकार अस्पताल मे बिताये मेरे प्रसन्नतम दिन की स्मृति

> जागती है जन्म औ' विकास मे
> जीवन औ' ज्योति के।

मध्य-पूर्व के बाधितो की सेवा के लिए हमने जो यात्रा की वह निश्चित सफलताओ के विश्वास से प्रकाशित थी। हमने मिस्र, लेबेनान, दमिश्क, जोर्डन और इजरायल का भ्रमण किया और यद्यपि एक या दो देशो मे मैंने अन्धकार की विशाल सरिताओं को प्रकाशमय मानव-कल्याण-कार्यो से अस्पृष्ट पाया, परन्तु मुझे उत्साह ग्रहण करने के पर्याप्त कारण भी मिल गये। मिस्र में मैंने कैरो के समीप अत्याचारो, अन्धविश्वासों और राजपद के दुरुपयोग के स्मारक पिरामिडों का स्पर्श कर गहन आतंक का अनुभव किया, परन्तु जिस बात ने मुझे उत्साहित किया वह यह थी कि मिस्र अपनी शताब्दियो की निद्रा से जाग रहा था और अकल्पनीय शक्ति के साथ नवयुग की बाग-डोर सँभाल रहा था। जिस दूसरी जागृति ने मुझे चमत्कृत किया वह थी अन्धों के लिए विश्व-परिषद् का सूत्रपात, जिस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अध्यापिका और मैंने सन् १९३१ में इतना हार्दिक परिश्रम किया था। इस परिषद् के प्रभाव से कैरो में संयुक्त-राष्ट्र-मंडल की एक योजना अन्धों की दशा सुधारने के लिए चल रही थी और मैंने इस योजना के कार्यकर्ताओं के समक्ष भाषण दिया। अगले वर्ष कैरो में मिस्र ही नहीं अपितु समग्र अरब-राष्ट्रों में कार्य करने के लिए अन्धों के शिक्षकों का एक प्रशिक्षण केन्द्र खोला गया और मुझे विश्वास है कि युगों से अज्ञान और उपेक्षा में पड़े अन्धों के समाज के निर्माण में यह

एक शक्तिशाली तत्त्व सिद्ध होगा। पौली और मैंने मिस्र में अनेक स्कूलों और कारखानों का दौरा किया, जिन्हें ऐसे स्त्री-पुरुष चला रहे थे जिनमें संघटन की सुन्दर शक्तियाँ थी और जो अन्धों और बहरों दोनों की ही समस्याओं को हृदय से समझते थे। बेरुत, लेबेनान में हमने अन्धों के उस स्कूल का दौरा किया जिसे आर्मेनिया के स्विट्जरलैण्डीय मित्र चला रहे थे और जिसका सुचारु प्रबन्ध श्री कार्ल मेयेर कर रहे थे। मैं इस स्कूल के दीर्घकालीन कठिन संघर्ष से बहुत प्रभावित हुई परन्तु साथ ही मुझे अन्ततः इसकी विजय का भी विश्वास हो गया। जोर्डन मे मुझे एक अन्धा युवक मिला, जिसने अध्यापिका का हृदय जीत लिया होता। घोर परिश्रम से वह अन्धे युवको के लिए एक स्कूल और कारखाना खोलने मे सफल हुआ था, जो बहुत बड़े तो न थे परन्तु बढ़ रहे थे, और इनके नवीनतम विवरणो से मैंने अनुभव किया कि अन्तत. यह युवक सारे अरब-संसार के अन्धो के लिए कार्य करने की अपनी योजना मे सफल होकर रहेगा। अव्यवस्था, रोगो और वीरान रेगिस्तानो से घिरे इजरायल मे, जिसे इजरायल ने कभी मानव-जाति को ईश्वर की शक्ति और सुख का सन्देश सुनाया था, व्यवस्था, स्वास्थ्य और उर्वरता उत्पन्न करने मे व्यस्त शक्तिशाली उद्देश्यो और विशाल उद्योगो की भावना ने मुझे उत्साह-पूरित कर दिया। अकथनीय कठिनाइयों के होते हुए भी यहाँ के अन्धे और बहरे ज्ञान और सुयोगो मे अपना हिस्सा पा रहे है और समय के साथ-साथ वे भी अपने भव्य कॉमनवैल्थ के विकास मे भाग लेंगे।

लैटिन अमेरिका मे हमारे दौरो में वहाँ की जनता ने हमारा जो हार्दिक स्वागत किया वह हमारे लिए एक महान् आकर्षण था। मै जहाँ कहीं भी हुई, लोगो ने मुझ पर अकथनीय सौन्दर्य और सुगन्ध भरे पुष्पों के ढेर इतने लाद दिये कि मैं उनके नीचे छिप सी गई—अध्यापिका इन्हें कितना पसन्द करती। रियो द जानेरो मे हम अन्धों के लिए बैन्जामिन कौन्स्टैट इंस्टीट्यूट में बोले और हमने अध्यापको तथा इंस्टीट्यूट ऑव एजुकेशन (शिक्षा सस्था) जो ब्राजिल मे सबसे बड़ा नार्मल स्कूल था, के समक्ष भाषण दिये। मैंने अध्यापकों के प्रति विश्व की कृतज्ञता की चर्चा की और मैंने कहा कि जिस जाति के पास अच्छे से अच्छे अध्यापक होते है वह प्रगति की अग्र पंक्ति मे स्थान ग्रहण करती है।

अन्धों के कार्य तथा दूसरे उद्योगों में साओ पौलो की प्रगतिशील प्रवृत्तियों से मै प्रसन्न हुई। मुझे विस्मय हुआ यह देखकर कि अन्धो की ब्राजिलियन फाउंडेशन की अध्यक्षा सेन्होरा डोरिना नोबिल ने कितने अधिक कार्य

सम्पन्न कर लिये थे। वह स्वयं अन्धी थी और अकेली थी। उसने अपने स्टाफ के लिए योग्य व्यक्ति ढूंढ़े थे। एक ब्रेल छापाखाना प्राप्त किया था और एक पुस्तकालय स्थापित किया था। वह ऐसे अन्धे बच्चों की चिन्ता करती रहती थी जो स्कूल जाने लायक उमर के न होते, अल्पवयस्क अन्धों की आँखवालों के साथ शिक्षा के ढंगो पर प्रगतिशील विचारो को कार्यान्वित करने में और युवक अन्धो के लिए काम जुटाने में लगी रहती। परन्तु उसे जनता की सहयोग की आवश्यकता थी और इसलिए उसने मुझे ब्राजिल में आमन्त्रित किया था। विभिन्न बैठकों में मैंने अन्धों के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य, दृष्टि को सुरक्षित रखने की दिशा मे बढ़ती हुई सक्रियता के प्रति संतोष प्रकट किया। मैंने इस समाचार का स्वागत किया कि नेत्र-चिकित्सकों के दल इलाज के लिए नियमित रूप से छोटे-छोटे गाँवों और कस्बों का दौरा करते है और कारखानो मे दुर्घटनाओ को रोकने या कम करने के लिए आन्दोलन चलाया जा रहा है। मेरे सन्देश का जिस उत्साह के साथ स्वागत किया गया उससे मैं पंजों के बल खड़ी हो गई, जैसा मैं प्रायः तब करती हूँ जब मुझे विश्वव्यापी सद्भावनाओं के आगमन का—धीरे-धीरे परन्तु निश्चित रूप से आगमन का—आभास मिलता है।

चिली, पेरू और पनामा नगर मे विभिन्न कार्यक्रमो को सम्पन्न कर हमने मैक्सिको नगर में और उसके आस-पास दस व्यस्त और प्रसन्न दिन बिताये। सोमवार, १५ जून को पौली और मै वियाना कोयेकान में अन्धो के पुनर्वासिन केन्द्र मे गई और वहाँ की बनी टोकरियो, कम्बलो, बिनाई के काम और बुने कपड़ो के विविध प्रकार तथा कलात्मक गुण देखकर मुझे अभिमान का अनुभव हुआ। यहाँ अन्धे ब्रेल पुस्तकालय के लिए प्रतिलिपियाँ भी तैयार करते है और केन्द्र के छापाखाने में ब्रेल अक्षरों मे पुस्तकों को उभारने का काम भी करते है। मैक्सिको जिस उत्साह से अन्धो के कल्याण के लिए विश्व-परिषद् मे सम्मिलित हो गया था उससे मैं बहुत प्रसन्न हुई।

बृहस्पतिवार उन्नीस तारीख को हम अन्धेपन के निरोध के क्लिनिक में गये, जहाँ प्रतिदिन दो सौ रोगियो की निःशुल्क चिकित्सा की जाती है। मै इन नेत्र-चिकित्सको के निस्वार्थ परिश्रम से बहुत प्रभावित हुई। ये लोग केवल निःशुल्क चिकित्सा ही नही करते अपितु शल्प-क्रिया भी करते है। डाक्टरों ने मुझे अन्य नेत्र-चिकित्सकों से भी यह आग्रह करने के लिए कहा कि वे निर्धन व्यक्तियो का निःशुल्क उपचार करे और मैने उनकी बात पूरी की। बाद में मुझे ज्ञात हुआ कि अनेक दूसरे चिकित्सकों ने अपनी सेवाएँ अर्पित करने का वचन दिया है।

२० जून को पौली और मैंने "मैक्सिन इन्स्टीट्यूट ऑव हियरिंग एण्ड सिइंग" (देखने और सुनने की मैक्सिकीय संस्था) में आनन्दाश्रुओं से पूर्ण एक घण्टा बिताया। जब हमने हाल मे प्रवेश किया तो मैंने वहाँ दीवार पर खुदे "ऐन सलिवाँ" नाम का स्पर्श किया। इसके बाद उसके कार्य के विषय में सुन्दर भाषण हुए और मैंने अध्यापिका को सचमुच बहुत निकट अनुभव किया। भावनाओं से रुँधे गले से मैंने अध्यापकों को धन्यवाद दिया कि उन्होंने मेरे शक्ति के स्रोत को पहचाना था। इस प्रकार अध्यापिका मेरे साथ सदैव उन सब स्थानों की यात्रा करती रहती है जहाँ मुझ पर नई-नई परीक्षाएँ आ पडती हैं और इन सब वर्षो के बाद भी वह मेरा साथ उन आनन्दों में हिस्सा बँटाती है जो "चेतना और आत्मा के समन्वय से प्राप्त होते है।"

मैं उसके विषय में एक ऊष्मा प्रदान करनेवाली चेतना, एक जीवनदायी सूर्य के रूप में विचार कर सकती हूँ। यह आवश्यक नहीं है कि रोम्या रोलॉं का यह कथन सत्य ही हो कि जो व्यक्ति किसी अन्य मानव-प्राणी के साथ घनिष्ठ परिचय और असीम मित्रता का अनुभव कर चुका हो "उसका यह आनन्द इस ढंग का होता है कि यह उसे शेष जीवन भर दुखी बनायेगा।" अध्यापिका के व्यक्तित्व मे ऐसा गुण और विचारो के आदान-प्रदान की ऐसी शक्ति थी कि उसकी मृत्यु के बाद इन्होने मुझे सहनशीलता और धैर्य प्रदान किया। मै उस नियति मे बँधी थी जो अध्यापिका ने मेरे लिए तैयार कर दी थी और इसने मुझे अन्धकार के विरुद्ध ईश्वरीय युद्ध लडने के लिए मेरे निजी व्यक्तित्व से ऊपर उठा दिया। यह ठीक है कि मनुष्य को हमेशा दो मे से एक मार्ग चुनना होता है और सब प्रकार की सुरक्षाओ से हाथ धो बैठने के भय से मैंने सब कार्यों से हाथ खीच लिया होता, परन्तु अध्यापिका मुझमे विश्वास करती थी और मैंने उसके प्रति विश्वासघात न करने का निश्चय कर लिया। उसको अपने में जीवित अनुभव करते हुए मैंने उन स्त्री-पुरुषों को, जिन्हें अन्धकार, मौन, रोग या दुख क्षीण बनाते जा रहे हैं, जीवन प्रदान करने और अधिकाधिक जीवन प्रदान करने के नये तरीकों को ढूँढ़ा है, और कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि ईश्वर अध्यापिका का उपयोग कर रहा है, उस अध्यापिका का जिसने मेरी निशा को प्रज्वलित किया था कि मैं कल्याण की अन्य अनेक ज्वालाएँ प्रदीप्त कर सकूँ। उमर में बढ़ने के साथ-साथ और यह जानते हुए भी कि स जीर्ण शरीर से छुटकारा पाने में मुझे प्रसन्नता होगी, मुझे अध्यापिका की आत्मा में नये जन्म और यौवन का अनु-

भव होता है। यह निश्चित विश्वास मेरे एकाकीपन को मधुर बना देता है और मेरे हृदय के लिए वासन्ती वायु के समान है कि अध्यापिका की रचनात्मक बुद्धि और उसके मन के यथार्थ मानवीय गुण नष्ट होनेवाले नहीं है।